साधना
सिद्धि विशेषांक
मंत्र-तंत्र-यंत्र
विज्ञान

पूज्य गुरुदेव का साहचर्य
प्रकृति की गोद एवं सिद्ध तपः स्थली
मनाली
प्रत्यक्ष लक्ष्मी सिद्धि एवं साधना शिविर
(दिनांक : ३ एवं ४ जून ९४ को)

पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा ऐसा विशिष्ट उपहार और साधना जगत की ऐसी घटना जैसी पूर्व में कभी नहीं घटित हुई, जब साधकों को गोपनीय साधनाओं एवं गुरु कृपा के द्वारा **''प्रत्यक्ष लक्ष्मी सिद्धि''** प्रदान करने की घटना सम्पन्न की जा रही है।

मनाली - प्रकृति का साहचर्य, पावनता और देवताओं की घाटी के नाम से प्रसिद्ध हिमांचल प्रदेश की ऐसी मनोरम और सुरम्य स्थली जिसके चप्पे - चप्पे से ऋषियों व तपस्वियों का पावन स्पर्श और कथाएं जुड़ी ही हैं। ऐसी ही शीतलतादायक स्थली पर महानगरों की आपाधापी से भरे छल-प्रपंच युक्त जीवन से हटकर यथार्थ में स्वयं भी ऋषि तुल्य बनते हुए **साक्षात् मां भगवती लक्ष्मी के साहचर्य में देव दुर्लभ साधना का ऐसा अवसर, जो बार-बार उपस्थित नहीं होता. . .**

क्योंकि विशिष्ट प्रत्यक्षीकरण की साधनाएं कुछ विशिष्ट मुहूर्तों पर ऐसी ही दिव्य तपः स्थलियों पर केवल जाग्रत व प्रत्यक्ष गुरु के द्वारा और वह भी उनकी विशेष कृपा होने पर ही पूर्णता प्राप्त कर पाती है।

प्रत्यक्ष लक्ष्मी सिद्धि का सीधा सा अर्थ है कि जीवन की प्रत्येक कठिनाई, अभाव और पीड़ा की समाप्ति क्योंकि भगवती लक्ष्मी जब प्रत्यक्ष सिद्धि के माध्यम से उपस्थित होती है तो पूर्ण रूप से कृपा भी तो करती ही है।

यह तो सर्वकामना सिद्धि शिविर ही होगा

मनाली एक सुविख्यात प्राकृतिक सौन्दर्य से भरा स्थान होने के कारण जून माह में अत्यन्त व्यस्त रहता है और ऐसे में आवास की व्यवस्था करना कठिन कार्य है। अतः इस महत्वपूर्ण शिविर में सीमित संख्या में ही स्थान उपलब्ध हो सकेंगे और केवल उन्हीं साधकों को शिविर में भाग लेने का अवसर तथा आवास सुविधा मिल सकेगी **जिनका अग्रिम शिविर शुल्क समय से काफी पूर्व स्थानीय आयोजक डॉ० एम.आर. वशिष्ट के पास पहुंच जायेगा। श्री नन्दकिशोर श्रीमाली जी के सान्निध्य में यह अभूत पूर्व शिविर होगा।**

शिविर शुल्क- ३३०/-

स्थानीय आयोजक

डॉ० एम.आर.वशिष्ट, पी.-२/१२३, पण्डोह, मण्डी, हि.प्र., पिन-१७५१२४

सम्पर्क सूत्र

श्री कर्मदत्त शर्मा, स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, मण्डी

श्री के.एस. गुलेरिया (स्वास्थ्य निदेशक के व्यक्तिगत सचिव), शिमला, फोनः७२८१४,२०३५२४

श्री आर.एस.ठाकुर, डेवलपमेन्ट ऑफिसर, भारतीय जीवन बीमा निगम, ''दि माल'', मनाली, फोनः२२०१

साधक इसके अतिरिक्त गुरुधाम दिल्ली अथवा जोधपुर से सम्पर्क कर विशेष जानकारी प्राप्त कर सकते हैं

जोधपुर फोनः०२९१-३२२०९, दिल्ली फोनः०११-७१८२२४८, सिद्धाश्रम साधक परिवार के तत्वाधान में

अजय कुमार उत्तम अजयकुमार उत्तम "निखिल"

आनो भद्रा : क्रतवो यन्तु विश्वतः

मानव जीवन की सर्वतोन्मुखी उन्नति प्रगति और

भारतीय गूढ़ विद्याओं से समन्वित मासिक

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान

प्रार्थना

हिमालयोऽपि नतमस्तकोऽस्ति
संदर्शनेन भवति हृदयं प्रसन्नं
गंगावगाहनं सुखं लभते च चित्तं
सौभाग्यदं सद्गुरुं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ।।

जिनकी साधनात्मक उच्चता को देखकर हिमालय भी नतमस्तक है, जिनके दर्शन मात्र से ही हृदय प्रफुल्लित हो जाता है और मन गंगा में अवगाहन के सुख का अनुभव करने लगता है, उन सौभाग्यदायक गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी के श्री चरणों में मैं अत्यन्त उदात्त भावों से नमन करता हूं।

नियम

अनुक्रमणिका

साधना

१२	क्या आपके जीवन में बार-बार अड़चनें आ रही हैं?
२१	कुबेर साधना
२४	कलौ घण्डी विनायकौ
२७	जीवन का मूल धर्म क्या है?
३३	आखिर यक्षिणी को अपना वचन निभाना पड़ा
४१	साधना सूत्र
४५	तांत्रोक्त गुरु साधना
६०	त्रिपुर सुन्दरी
६६	महाभैरव साधना
७५	जिस एक दिवसीय साधना से सभी साधनाओं में सफलता मिलती है

चिकित्सा

५८	यौन रोग

स्तम्भ

०४	पाठकों के पत्र
४३	अहोभाव
४६	ज्योतिष प्रश्नोत्तर
५०	राशिफल
६३	साधक साक्षी हैं
६८	राजनीतिक भविष्य एवं शेयर मार्केट

विशेष

३६	भुलाई नहीं जा सकेंगी ये बातें
७८	संस्काराद् द्विज उच्यते

संस्मरण

५५ जब पूज्य गुरुदेव ने थोड़ी साधना सम्पन्न की

सद्गुरुदेव

०६ मन्नाथः श्री जगन्नाथः
मद्गुरुः श्री जगद्गुरुः

कथ्य

८ पहुंचो तब कहीं

प्रयोग

१५ लक्ष्मी कवच
२० सिद्धि फल
३१ ये अचूक प्रयोग
४८ श्री शनि प्रयोग
७१ राहु प्रयोग

दीक्षा

१७ हेमांगिनी अप्सरा
३७ हे माँ! बड़ी बड़ी अंखियन वारो
६५ दीक्षा योग
७३ क्या! आपने ये दीक्षाएं प्राप्त की हैं?

पाठकों के पत्र

❀ मैं पिछले वर्ष पत्रिका का सदस्य बना। **अक्टूबर ९३** का **महालक्ष्मी विशेषांक** विशेष वाचनीय रहा। मेरा सुझाव है कि आप पिछले अंकों में प्रकाशित महत्वपूर्ण साधनाओं के लेख क्रम से नये अंकों में देंगे तो नये सदस्यों के लिए अच्छा होगा।

अशोक पंडित,
कोल्हापुर

❀ हे गुरुदेव!
दो हम क्षुद्रों को परम स्नेहाशीष हीरक जयंती चिरकाल तक दें आपको सुखद अनुभूतियां भारतीय संस्कारों की अक्षय स्वर्गिक सुरभियां बने आध्यात्मिक क्रांति का नंदनवन मैं विनयावनत करता हूं अनंतानंत वंदन

एस० के० जैन,
सिहोर

❀ पत्रिका से **मंत्र-तंत्र-यंत्र** वर्तमान स्थितियों में यथार्थतः परिभाषित हो सके हैं, धन्यवाद। अनास्थावान भी जब आस्थावान इस पत्रिका से बन रहे हों तब साधनात्मक सामग्री/यंत्रों को यदि प्रचलित सुगम्य नामों से दे सकें तो अधिक उपयुक्त रहेगा यद्यपि साधनात्मक क्षेत्र में यह क्लिष्टता स्वाभाविक व अनिवार्य भी है। कृपया पर्यायवाची शब्दों को भी यदि सम्भव हो तो प्रकाशित करें।

एस० के० पाण्डेय,
भोपाल

–आपने वस्तुस्थिति को स्वयं ही स्पष्ट कर दिया है कि साधनात्मक क्षेत्र में ऐसी क्लिष्टता स्वाभाविक है। पत्रिका में यथासम्भव साधनात्मक ज्ञान को बिना किसी महिमा-मण्डन के प्रकाशित किया जाता है किंतु जो पारिभाषिक शब्द अथवा सामग्री के उल्लेख हैं उनमें परिवर्तन असम्भव प्रायः ही होता है।

– सहा० सम्पादक

❀ आपकी पत्रिका का चार माह पूर्व पाठन प्रारम्भ किया। वास्तव में यह कलियुग की गीता है। मेरा इस पर सुझाव है कि हर वर्ष के अंत में अर्थात् दिसम्बर अंक में पूरे वर्ष की विषय-सामग्री का 'इन्डेक्स' प्रकाशित करें, जिससे नये पाठक भी लाभ ले सकें।

हर्ष सिंह कठायत,
पिथौरागढ़

❀ आपके यहां से **अलौकिक गुटिका** मंगायी थी, प्रयोग सफल रहा, मेरा धन्यवाद स्वीकार करें।

निर्मल शर्मा,
बम्बई

❀ मैं पत्रिका का एक पाठक ही हूं किंतु आपने अप्रत्यक्ष रूप से हम लोगों की जो सहायता दी है उसे एक सच्चा गुरु ही अपने शिष्यों को दे सकता है। मेरे परिवार के सभी सदस्य आपको सच्चे मन से गुरु मान चुके हैं।

ज्योति प्रकाश सिंह,
बम्बई

❀ मेरा पाठकों की सुविधा के लिए सुझाव है कि विभिन्न साधनाओं के सम्बन्ध में जो मंत्र दिए जाते हैं उनमें सम्मिलित बीज मंत्र (**ह्रीं या ह्रीं**) को कृपया नीचे अंग्रेजी में स्पष्ट करते हुए भी दे दिया करें, जिससे उच्चारण में लाभ मिल सके।

ए० के० गुप्ता,
झांसी

❀ अप्रैल का **सद्गुरु विशेषांक** अत्यन्त सारगर्भित है और इसमें प्रकाशित **'शक्तिमय गुरु साधना'** पढ़कर साधनात्मक रूप से विशेष तृप्ति हुई। आशा है आगे भी इसी प्रकार की उच्चकोटि की साधनाएं मिलती रहेंगी।

वेदानन्द झा,
देवघर

❀ साबर साधनाओं को पत्रिका में पर्याप्त स्थान तो मिल रहा है, लेकिन मेरा सुझाव है कि मार्च १९९३ के भांति ही एक बार फिर से पत्रिका का सम्पूर्ण अंक **'साबर विशेषांक'** प्रकाशित कर साधकों को गोपनीय साबर मंत्रों से परिचित करायें।

के० के० पांधी,
बीकानेर

❀ अप्रैल का अंक अपनी विषय-वस्तु के कारण सदा-सदा के लिए संग्रहणीय हो गया है। पत्रिका के माध्यम से आप जहां साधना शिविरों की रिपोर्ट प्रकाशित करते हैं वहीं उनमें सम्पन्न कराई गई साधनाओं एवं पूज्य गुरुदेव के प्रवचनों को भी पत्रिका में संक्षेप में प्रकाशित करें तो अनेक पाठक लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

कुमारी भावना ज्योतिपाल,
पीलीभीत

❀ अप्रैल अंक में प्रकाशित आह्वान पढ़ने के बाद सचमुच लगने लगा है कि यदि भाग-दौड़ करके कुछ सिक्के जोड़ भी लिए तो उनसे जीवन में कुछ भी तो ऐसा नहीं खरीद सकेंगे जिनसे जीवन की पूर्णता प्राप्त हो। लेख पढ़कर मेरे हृदय पर आघात लगा और चिन्तन का ढंग भी बदला।

हरकिशोर सिंधी,
शहडोल

❀ **मौन स्वीकृति. . .**

जब दृष्टि निर्निमेष हो उठे
तो थर-थर कांप उठे आकाश
और हाथों से हाथ बांध लिया
तो मौन स्वीकृति प्रलय प्रकाश
युगों की छबि मैं देख रहा
शिष्यों को भी मैं निरख रहा
है कोई जो मेरा मुझमें
आज निखिल को समझ रहा।

राधाकिशन कुशवाहा,
जगदलपुर(बस्तर)

हलचल

इन्दौर : लक्ष्मी साधना शिविर
दिनांक १ अप्रैल ९४

मध्य प्रदेश के ऐतिहासिक नगर इन्दौर में एक दिवसीय **''लक्ष्मी साधना शिविर''** का आयोजन पूज्यपाद गुरुदेव **डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली जी** के आशीर्वाद तले। **श्री गुरुसेवक श्रीवास्तव** के कुशल संयोजन में सम्पन्न हुए इस महत्वपूर्ण आयोजन को **श्री अशोक प्रजापति, श्री परिहार** एवं **इंस्पेक्टर त्रिपाठी जी** का विशेष सहयोग रहा।

हीरक जयन्ती महोत्सव का शुभारम्भ
दिनांक १८ से २१ अप्रैल

९४ प्रयाग में यमुना तट पर **मिन्टो पार्क** का स्थान, जब महत्वपूर्ण **हीरक जयन्ती महोत्सव** का प्रारम्भ हुआ। पूज्यपाद गुरुदेव की साठवीं वर्ष गांठ के अवसर पर इस दिवस से लेकर आगामी एक वर्ष तक जिस विराट आयोजन का प्रारम्भ इस समारोह के द्वारा हुआ उसे सम्पूर्ण भारत वर्ष से एवं विदेशों से आये शिष्यों ने अपनी उपस्थिति द्वारा और भी अधिक मधुर व उत्साह से परिपूर्ण किया तथा उन विशिष्ट साधनाओं को सम्पन्न किया जिनकी घोषणा पूर्व में की गई थी। चार दिवसीय इस शिविर में **श्री एस.के.मिश्रा, श्री एस.पी.बांगड़, डॉ० एस.के.बनर्जी, श्री गुरु सेवक श्रीवास्तव** ने सक्रिय योगदान दिया। पूज्यपाद गुरुदेव ने इस अवसर पर अपने सभी शिष्यों को उनकी मनोवांछित दीक्षाएं प्रदान कर सुखद भविष्य हेतु आशीर्वाद प्रदान किया।

भूल सुधार

हमें खेद है कि पत्रिका के **अप्रैल ९४** अंक में **पृष्ठ ३६** पर प्रकाशित कथा **''वह काजल''** के लेखक का नाम गलत छप गया। **कथा के मूल लेखक श्री इन्द्रचन्द तिवारी हैं** जबकि असावधानीवश ''ईश्वर चन्द तिवारी'' छप गया है। पाठकों एवं लेखक महोदय को इस कारण हुई असुविधा के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

-- सम्पादक

सम्पादकीय
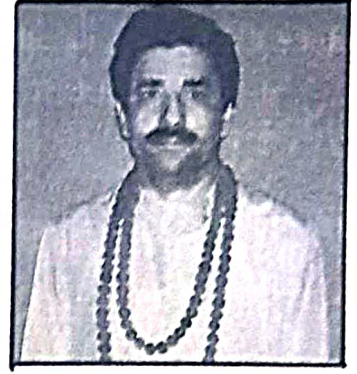
पाठकों की ओर से विगत कुछ महीनों से निरन्तर यह आग्रह आ रहा था कि साधना के विषय में उन्हें और अधिक विशिष्ट सामग्री दी जाए। पाठकवर्ग ने इस पत्रिका को जिस प्रकार से मात्र मनोरंजन या कौतूहल की विषय-वस्तु न मानकर प्रतिमाह एक लघु साधनात्मक ग्रंथ के रूप में स्वीकार किया है, यह आग्रह उसी का परिणाम है। **पूज्य गुरुदेव इसी बात को रेखांकित करते रहे हैं कि इस देश की आत्मा सदैव उच्च रही है और रहेगी, आवश्यकता है तो केवल युग के अनुरूप ज्ञान के प्रस्तुतिकरण की।**

ज्ञान सदैव व्यक्ति का पोषण करने में सहायक और समर्थ होता है किन्तु उसे गरिष्ठ नहीं होना चाहिए। यदि समाज के एक-एक व्यक्ति तक ज्ञान का व्यवहारिक लाभ न पहुंच सके तो उसकी सार्थकता के लिए फिर क्या मापदंड निर्धारित किया जा सकता है? ज्ञान का व्यवहारिक रूप ही है साधना। साधना केवल विशिष्ट वर्ग की सम्पत्ति नहीं है। साधना ही वह मार्ग है जो प्रत्येक के लिए सुगम मार्ग उपलब्ध करती है।

पत्रिका इन्हीं उद्देश्यों को लेकर पिछले तेरह वर्षों से निरन्तर गतिशील है और यह प्रस्तुत अंक **साधना-सिद्धि अंक** के रूप में प्रकाशित करते हुए हमें संतोष हो रहा है कि जहां यह एक ओर पाठकों व साधकों के व्यवहारिक जीवन में सहायक बनेगा, वहीं इसके प्रकाशन के साथ-साथ हम पूज्यपाद गुरुदेव के उद्धृत वचनों को, उनके सूत्रों को यथाक्षमता ग्रहण करते हुए गतिशील हो रहे हैं। यही हमारी गुरु दक्षिणा भी है।

ज्ञान की महत्ता गूढ़ता से भी अधिक उनके सरल प्रस्तुतिकरण में होती है, क्योंकि प्रज्ञावान पुरुष ही गहन विषयों में डूब कर उसे सरल शब्दों में व्यक्त कर सकते हैं, जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण पूज्यपाद गुरुदेव के प्रवचन, कैसेट और इस पत्रिका के लेख हैं, जो उनके द्वारा प्रदत्त सूत्रों पर ही तो आधारित है।

ज्ञान, साधना, प्रज्ञा, आनन्द और जीवन का सुख-सौभाग्य सभी के आधार गुरुदेव ही होते हैं, एवं विभिन्न साधनाएं उस सीढ़ी का एक-एक पग हैं, जिसकी सहायता लेकर हम उस परम गुरु-पद को समझ सकते हैं, वहां तक पहुंच सकते है। यही इस अंक के प्रकाशन का वास्तविक लक्ष्य है।

आपका

नन्दकिशोर श्रीमाली

मन्नाथः श्री जगन्नाथः मद्गुरुः श्री जगद्गुरुः

भगवान श्री जगन्नाथ ही करुणा की पराकाष्ठा पर गुरु रूप धर कर दौड़े आते ही हैं, अपने भक्तों को हृदय से लगाने के लिए. . .

किन्तु कैसे पहचाने उन श्री जगन्नाथ को? कैसे दर्शन प्राप्त करें उनका मानव देहधारी सद्गुरु स्वरूप में . . .

सुदूर पूर्व में जहां नित्य प्रातः गगन अपने थाल में आरती की ज्योति के रूप में सूर्य को लेकर उपस्थित होता है, जहां पृथ्वी के हृदय का समस्त प्रवाह और हिलोरें समुद्र बनकर नित्य चरण पखारने को उमड़ती रहती हैं, ताड़ के ऊंचे-ऊंचे वृक्ष मंद पवन में चंवर से डोलते रहते हैं, वही स्थान है भारतीय जन-जन के हृदय में विद्यमान भगवान श्री जगन्नाथ का . . . उड़ीसा प्रान्त के पुरी जिले में अवस्थित श्री जगन्नाथ धाम!

बृज के सांवरे और सबके कान्हा मानो बृज छोड़कर आते हुए बीच में अपनी सारी श्यामलता धरा को देते हुए उसे ही शस्य-श्यामल बनाकर, उज्ज्वल हो अपने मूल स्वरूप, ब्रह्ममय स्वरूप, श्री जगन्नाथ के रूप में प्रतिष्ठित हो गए हों। अपनी सारी सरसता, अपनी अभिन्न हृदया श्री राधा को लोक-परम्पराओं के रूप में होने वाले नित्य उत्सव के रूप में समस्त पूर्वी भारत में बिखेर, नितान्त आत्मस्वरूप, निज स्वरूप में अवस्थित हो गए हों।

अपार करुणा से विस्फारित

भला सद्गुरु के अतिरिक्त किसमें सामर्थ्य है जो व्यर्थ की रूढ़ियों, परम्पराओं और जड़ताओं पर आघात कर सके, ठीक भगवान श्री जगन्नाथ की ही भांति।
यही कार्य तो किया है पूज्य गुरुदेव श्रीमाली जी ने अपनी जीवन यात्रा में निरन्तर, किन्तु उग्र होकर नहीं करुणा मय होते हुए . . .

हो गए लोचन युग्म, स्व स्वरूपा भगवती भुवनेश्वरी अर्थात् भगिनी भगवती सुभद्रा का साहचर्य एवं अपने साथ जीव की अभिन्नता को भी दर्शित करने के लिए श्री बलराम की उपस्थिति . . . पूर्णता से यथार्थ में गुरु स्वरूप को प्रकट करता हुआ त्रयी स्वरूप। **लीला का त्याग कर जीवन की सार्थकता एवं अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए** भगवान श्रीकृष्ण का ऐसा स्वरूप जो अपने अजस्र प्रवाह से निरन्तर लाखों के जीवन की आश्वस्ति का युगों-युगों से आधार बना है। ब्रह्मोपासकों के लिए भी, मधुरा भक्ति का आश्रय लेकर संसार सागर से तर जाने वाले वैष्णव संतों के जीवन का भी, और जन-जीवन में सामान्य जन के लिए भी। जाति, वर्ण सभी को ठुकराता हुआ, भगवान श्रीकृष्ण का ऐसा स्वरूप जहां उदात्तता और अपरिमित प्रेम ही शेष रह गया है। **समस्त रूढ़ियों, बन्धनों और व्यर्थ की परम्पराओं को एक क्षण में ठुकरा देने की सामर्थ्य गुरुत्व के अतिरिक्त भला और किसमें सम्भव हो सकी है?**

भगवान जगन्नाथ के स्वरूप को लेकर जो जनश्रुति है उसका अभिप्राय भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। जिसके अनुसार भगवान जगन्नाथ के हाथ हैं तो वे आधे, पांव हैं तो वे भी आधे, काष्ठ निर्मित होने के कारण वाणी भी मौन है, किन्तु सारे अस्तित्व में केवल आंखें ही आंखें दिखाई पड़ती हैं जो कहती हैं— मैं न तो अपने भक्तों के कष्ट में चलकर आ सकता हूं, न उन्हें बाहें फैलाकर अपने हृदय से लगा सकता हूं, मेरे पास सान्त्वना देने के लिए वाणी भी नहीं है, क्योंकि वह जीव कर्म के प्रवाह में गतिशील है, वह अपने ही कर्मों के प्रतिफल के रूप में सब कुछ भोगता हुआ अबाध बहा जा रहा है और जैसी उड़िया मान्यता है कि तब फिर भगवान के पास देने के लिए करुणा का स्पर्श है जिन्हें वे अहर्निश अपने नेत्रों के माध्यम से प्रवाहित करते ही रहते हैं और जिसके सहारे व्यक्ति अपनी कर्म-गति में बहता हुआ भी कोई आश्रय, हृदय में कोई बल तो प्राप्त कर ही सकता है।

जनश्रुतियों में अत्यन्त गूढ़ तत्वों को अत्यन्त सरलता से कह दिया जाता है। वास्तव में जीव तो अपने ही कर्मों की गति से संसार में जीवन को अच्छा या बुरा, जैसा भी उसका जीवन है, जी रहा है, क्योंकि ईश्वर की दृष्टि में न तो कुछ पाप है और न कुछ पुण्य, वे न कोई दण्ड देते हैं और न कोई पुरस्कार, ठीक भगवान जगन्नाथ की भांति साक्षी-भाव से निहारते ही रहते हैं। भगवान श्रीकृष्ण भी अपने ब्रह्म स्वरूप में अवश्य ही इस प्रकार एक ओर खड़े होकर निहार रहे हैं **किंतु करुणा का प्रवाह कब भला इस प्रकार उदासीन रहने दे सकता है** और फिर वे ही निःसंग, निश्चल भगवान श्री जगन्नाथ, वे ही भगवान श्रीकृष्ण, वे ही जगद्गुरु पुनः-पुनः गुरु रूप में अवतरित होते ही हैं, जिनकी स्तुति **'कृष्णं वन्दे जगत गुरुं'** कह कर की गई है। वे इस प्रकार एक ओर खड़े होकर देख ही नहीं सकते, **क्योंकि गुरु का मूलधर्म मूल प्रवाह केवल व केवल करुणा ही तो है।** उनके जीवन का लक्ष्य, उनके जीवन का चिन्तन केवल इसी से ही तो अनुप्राणित है। उनकी लीला, उनके जगत व्यवहार, उनके प्रत्येक क्रिया-कलाप का रहस्य यही करुणा ही तो है। वास्तव में श्रीकृष्ण लीलामय नहीं हैं करुणामय ही हैं और उनके लीला-स्वरूप में किए गए समस्त जगत व्यापार का रहस्य यही करुणा ही थी, जिससे वे अपने ब्रह्मपद को त्याग सामान्य जन की भांति हंसे, बोले, खिलखिलाये, प्रेम किया और ठिठोली भी की।

गुरुपद को, गुरुत्व को यदि समझा जा सकता है तो भगवान जगन्नाथ की भांति ही केवल बड़ी-बड़ी आंखों से झांकती अपार करुणा राशि से, जिसके असीम प्रवाह के पीछे क्षमा ही क्षमा भरी होती है, प्रेम भरा होता है और जीवन के कष्टों के बीच में सुख के कुछ क्षण मिलने जैसी बात होती है— **बड़ी-बड़ी अखियां निरख, अंखियन को सुख होय।** गुरु पद का अर्थ एवं थाह प्राप्त किया ही नहीं जा सकता, उसका बोध किया जा सकता है, तो केवल उनकी करुणा और क्षमा के द्वारा ही।

भगवान श्रीकृष्ण का स्वरूप ही गुरुत्व का सही परिचायक है। वे न तो प्रकृत रूप में श्यामल हैं, न अपने भक्तों की पाप-राशि लेकर सांवरे हुए हैं, वरन वे प्रकृति से इतने अधिक समरस हैं, प्रकृति में इतना अधिक डूब गए हैं या प्रकृति स्वयं इस प्रकार से उनकी सहचरी बन गई है, जिस प्रकार से खेतों का धानी रंग पकते-पकते गहरा हरा और गहरे हरे से फिर काला

पड़ जाता है। धरती की हरीतिमा जिस प्रकार से गहन होकर श्यामल हो जाती है वही गहनता तो भगवान श्रीकृष्ण में उतर आई है। जिनसे प्रकृति यूं एकरस हो गई हो, वे ही तो सर्वव्याप्त हो सकते हैं, फिर वे ही एक साथ लीला-धारी, प्रेमी, योद्धा, कूटनीतिज्ञ, तत्वज्ञानी, शिष्य एवं अन्ततोगत्वा गुरु ही नहीं जगत्गुरु की संज्ञा भी प्राप्त कर सकते हैं। **गोपियां कभी समझ ही नहीं सकीं कि जो उनके साथ ठिठोली करते हैं वे जगद्गुरु कैसे हो सकते हैं और अर्जुन कभी नहीं समझ सके कि जो उन्हें ज्ञान का इतना गूढ़ उपदेश दे रहे, वे कैसे इस प्रकार हंसते और खिलखिलाते रहते हैं? कुछ एक व्यक्तित्व ही उनको पहचान सके कि ये जो एक साथ प्रेम, कूटनीति, युद्ध और तत्वज्ञान का बोध करा रहे हैं वे सामान्य से अधिक कुछ और हैं।** भीष्म एवं विदुर जैसे उच्चकोटि के साधक ही समझ सके कि सर्वथा विपरीत गुणों को एक साथ पूर्णता से समाहित कर गतिशील होना तो साक्षात् ब्रह्म का ही लक्षण है, साक्षात् गुरुत्व का ही प्रदर्शन है, साक्षात् माया का ही एक कटाक्ष है और जिनका अवतरण एक सामान्य घटना नहीं वरन् कुछ विशेष घटित करने के लिए निर्दिष्ट है।

फिर इसी विराटता का बोध इसी गुरुत्व की महिमा का वर्णन इसी गुरुत्व को श्रद्धा का अर्घ्य शास्त्रों में व्यक्त हुआ—

मन्नाथः श्री जगन्नाथः
मद्गुरुः श्री जगद् गुरु
मदात्मा सर्व भूतात्मा
तस्मै श्री गुरुवे नमः।।

एक जीव अवस्था में रहते हुए भी विश्वात्मा तक पहुंचने की स्थिति ही भगवान श्री जगन्नाथ की स्थिति है— जगन्नाथ जो पूरे जग के स्वामी हैं, जो पूरे विश्व के रक्षक हैं, जो पूरे विश्व को एक ही क्षण में समान दृष्टि से और असीम करुणा से भरकर निहार रहे हैं। इसी स्थिति का परिचय सद्गुरु में स्पष्टता से दिखाई देता है। केवल एक जाति या एक प्रान्त या एक देश के लिए ही नहीं सभी के लिए, **अखिल विश्व के लिए! निखिल ब्रह्माण्ड के लिए !!** स्वयं को इस प्रकार से उत्सर्ग कर देना ही सद्गुरु का वास्तविक पद है अन्यथा नितान्त निस्पृह भाव से उच्चकोटि की समाधि को त्याग कर, आत्मलीनता के परम सुख को त्याग कर समाज और देश के भांति-भांति लोगों के मध्य क्षण-क्षण में अनेक रूप धारण करके गतिशील होने में कोई विशेष सुख नहीं है। भगवान श्रीकृष्ण को लीलाओं के व्यापार में किसी विशेष आनन्द का बोध नहीं था, किन्तु वे एक ऐसे अवतरण हुए जो समाज की स्थितियों के साथ पूर्णरूप से तादात्म्य कर सके। **अपने-आप को दबोच कर क्रियाशील होने की ब्रह्म को आवश्यकता ही क्या है? और उसमें सुख भी कैसा? किन्तु भगवान जगन्नाथ की जो करुणा है, जो उस पुरीधाम में अधूरे अंग होने की स्थिति या विवशता है, वही पुनः-पुनः सद्गुरु के माध्यम से साकार होने को छटपटा उठती है।** स्वयं को अपने भक्तों एवं प्रेमी-जनों के मध्य ले चलने को विवश कर देती है। जो अपने प्रिय को, अपने भक्त को बांहों में भर लेने की हृदय से लगा लेने की आतुरता होती है, वही पुनः-पुनः मूर्तरूप ले लेती है। अपनी वाणी देने के लिए, शिष्य और साधकों के दग्ध हृदय पर अमृत-रस की भीनी-भीनी फुहार देने के लिए सद्गुरु का रूप धर लेती है, और साक्षात् ब्रह्म की ऐसी करुणा को, ऐसी लीला को सहज समझा भी नहीं जा सकता। उसको वास्तविक रूप से समझने के लिए स्वयं भी एक गुरुत्व प्राप्त करना होता है, स्वयं भी एक ऊंचाई तक उठना होता है और तब समझ में आता है कि किस सुख का त्याग कर सद्गुरु गतिशील है। ऐसा बोध हो जाने पर, स्वयं गुरुत्व धारण कर तब गुरुपद को, सद्गुरुदेव को समझने के बाद व्यक्ति प्रणत होकर इतना ही कह सकता है—

तव चरणे प्रणता वयमिति भावय ए कुरु कुशलम् प्रणतेषु जय जय देव हरे।।

किसी एक प्रांत या देश के लिए नहीं, किसी जाति या धर्म विशेष के लिए भी नहीं - सभी के लिए, अखिल विश्व के लिए! निखिल ब्रह्माण्ड के लिए!!

इस रूप में स्वयं को उत्सर्ग कर देना ही सद्गुरु का वास्तविक पद है।

फिर इसी से वे जगन्नाथ हैं, जग के स्वामी हैं, किन्तु यह उनका आधिपत्य नहीं उनका अभिभावक स्वरूप है। इसी से गुरु पद सर्वोच्च है, वन्दनीय है, ईश्वर तुल्य है।

पहुंचेंगे तब कहेंगे

एक अन्तर्यात्रा ही तो जिसमें अपने ही अंदर कई कदम चलकर व्यक्ति फिर अपने ही अंदर 'कहीं और' पहुंच जाता है, लेकिन यह यात्रा क्या बस इतनी ही है? अभी क्या कह सकते हैं? कह भी तो तभी पाएंगे जब यह यात्रा पूरी हो जाएगी . . . ''पहुंचेंगे तब कहेंगे, अँमड़ेंगे उस ठाँई''

मन जब ''वहां'' तक पहुंच जाएगा वहां 'अंमड़ेगा' (स्थापित होगा) तभी तो कुछ बोल पाएंगे या यों कहें कि जब ''वहां'' तक पहुंच कर बस अमड़ेगा ही नहीं उमड़ेगा भी तभी तो . . .

नित सांझ होती है और तारों की झिलमिलाहटों के साथ एक और जगत प्रारम्भ होता है– शिशु और मां का। मां, जो दिन भर की थकान भुलाकर आ लेटी हो और शिशु जो अनन्त जिज्ञासाओं से भरा, एक-एक हलचल को अपनी नन्ही आंखों से पकड़ता, उड़ते जुगनुओं को आसमान से टूटे तारे समझता, उन्हें मुट्ठियों में भींच लेने की सोचता, मां की गोद से जा दुबका हो। नित एक ही कथा, नित वे ही बातें, वही रोज की सुनी कहानी फिर से सुनाने का आग्रह, कि–– एक राजकुमार था जो भटक गया, जिसकी किसी परी ने आकर मदद की, दैत्य आया, लड़ाई हुई, और . . . वही रोज का सुखद अंत! पर न कभी सुनते हुए बच्चा थका, न मां उसे दोहराते हुए।

ऐसा ही जगत, ऐसी ही दुनियां प्रारम्भ होती है नित एक शिष्य के जीवन में भी। रात आयी, तारों की छांह मिली और रोज की ही कहानी, वे ही ध्यान, धारणा, समाधि की कथायें, प्राणों की लुका-छिपी शुरु हो गयी, अपनी छोटी-छोटी बांहों में

. . . ऐसा ही होता है गुरु शिष्य के मध्य भी तो, जब तक वे नहीं मिले बस तब तक ही इस जगत के ''खिलौने'' अच्छे लगते हैं। जिस दिन से उसी सामान्य देह में ''कुछ'' दिख जाता है तब आंखों में एक कातरता ही तो उतर आती है . . .

चांदनी सा बिखरा 'कुछ' प्राणों में समा लेने की कुनमुनाहट मन में छाने लगी। ऐसी कथाएं जिन्हें सुनते हुए, न तो कभी शिष्यों का मन भरा और गुरु का मन तो मां की ही तरह कभी भर ही नहीं सकता। कभी-कभी आंख लग जाती है, कोई खुमारी आकर गहरी तन्द्रा में ले जाती है, लेकिन उस खुमारी में भी आधे सोए, आधे जागे, लगता ही रहता है कि कोई एक हाथ अपने घेरे में लेकर दूसरे हाथ से थपकी देता जा रहा है। न कहानी का मोह छूटता है, न उस सुखद नींद का, जो आकर समेट ले जाना चाह रही हो।

दिन-प्रतिदिन, माह दर माह और वर्ष दर वर्ष यह कथा चलती ही रहती है।

कैसा विचित्र होता है शिशु और मां का जगत। मां जब तक सामने नहीं तब तक तो वह चुपचाप खेल रहा है। अपने-आप में ही खोया हुआ अपनी ही दुनियां में मगन है, लेकिन मां की एक झलक भर देखी नहीं कि हिलक कर, हुलस कर सब कुछ छोड़ कर उसी ओर दौड़ पड़ा और जाकर लिपट गया। तब एक ही पल में सभी खिलौने, सभी आनन्द व्यर्थ लगने लगते हैं। कहां तो उसके बिना उतनी देर अकेला रहा और कहां देखने के बाद उसके बिना एक पल भी नहीं रहना चाहता। भोली आंखों में कितना आग्रह और कैसी कातरता उतर आती है, कि कहीं यह मुझसे बिछुड़ तो नहीं जाएगी।

ठीक ऐसा ही गुरु-शिष्य के मध्य भी तो होता है। जब तक वह मिले नहीं बस तभी तक इस जगत के 'खिलौने' सुंदर लगते हैं, लेकिन जिस दिन कोई एक झलक मिल जाती है, एक तरह से उसी सामान्य देह में मातृत्व जैसा 'कुछ' समझ में आ जाता है, उसके बाद से आंखों में बच्चे की तरह से एक अबोधता ही उतर आती है। व्यक्ति अपनी सारी चतुराई भूलने लगता है, और जिस तरह बच्चा अपनी मां का सान्निध्य न छूटे, इसके लिए उसकी एक-एक बात मानने लगता है, ठीक वैसा ही खुद के अंदर प्रारम्भ हो जाता है। तब उसे गुरु की आज्ञा का पालन नहीं करना पड़ता, गुरु की आज्ञा तब उसके लिए प्रेम का एक सम्बल बन जाती है और इससे से भी आगे बढ़ कर गुरु की इच्छा, चाहे व्यक्त हो अथवा अव्यक्त, प्रेम का तन्तु बन जाती है। **जब ऐसी स्थिति बनती है तभी जीवन का पुण्य होता है,** और जो जीवन उलझता-सुलझता मृत्यु के पथ पर जा रहा होता है, वह वापस शिशुत्व की ओर लौट पड़ता है।

जीवन में निर्मल होने पर गुरु नहीं मिलते, वे तो इन्हीं मलिनताओं, कठिनाईयों और आपाधापी के बीच में ही आकर मिलते हैं, बशर्ते शिष्य तैयार हो, एक - एक पल चौकन्ना हो . . .

फिर निर्मलता तो उनके स्पर्श से आ ही जाती है. . .

जिसे साधक अपने जीवन की यात्रा कहता है, जिस प्राप्ति की आशा में वह गुरु के पास आता है, वह सब शनैः शनैः समाप्त होने लगता है। सारी तृष्णायें व्यर्थ लगने लगती हैं। समस्त सांसारिक इच्छायें हेय हो जाती हैं और उसका एक ही चिन्तन, एक ही लक्ष्य रह जाता है कि कैसे वह अपने को और अधिक खाली कर दे, कैसे अपनी वासनाओं-तृष्णाओं का त्याग कर दे। अपने को निर्मल बना दे और एक प्रकार से अपने को गुरु का स्नेह-भाजन बनाने की सम्पूर्ण तैयारी कर ले।

कभी देखा है किसी बच्चे को कि कैसे-कैसे वह अपनी मां को रिझाता है? या कभी देखा है कि कैसे मां शिशु के रुठ जाने पर सौ-सौ बहाने करके मनाती है? कैसे वह इतराता है, इठलाता है और एक तरह से अपने-आप में ही खोया हुआ अपने-आप पर ही मुग्ध रहता है, कि मां की एक दृष्टि मुझ पर पड़ जाय, वह एक बार उसको आंख भर कर देख ले। ऐसा ही संसार होता है गुरु-शिष्य का। जीवन में निर्मल होने पर गुरु नहीं मिलते, जीवन की इन्हीं मलिनताओं, कठिनाइयों और उहापोह के मध्य गुरु मिलते हैं और उनके स्पर्श के बाद ही निर्मलता का बोध प्रारम्भ होता है, जो उन्हीं के आग्रह से दिन-प्रतिदिन और भी अधिक निखरता जाता है।

जीवन में ऐसी स्थिति आए इसके लिए गुरु उसे सचेत भी करते हैं और ऐसा करने के लिए, अपने-आप

को सजाने-संवारने के लिए ठीक उसी बच्चे की तरह साधक स्वयं भी आतुर हो जाता है। जीवन का एक ही चिन्तन, एक ही लक्ष्य, एक ही उद्देश्य बनता जाता है कि कैसे . . . मैं कैसे क्या कुछ कर दूं, जिससे गुरु को प्रसन्नता हो, उनके चेहरे पर तनाव की कुछ लकीरें तो कम हों। **बहुत बड़े बोध, बहुत विराट लक्ष्य या बहुत गहन चिन्तन शिष्य के जीवन में शायद नहीं होते हैं, क्योंकि उसका तो लक्ष्य एक ही होता है– उसके गुरु।** वह जो कुछ करता है उन्हीं के लिए तो करता है, उन्हीं के लिए चलता है, सोता है, जागता है और हंसता व उदास होता है। जीवन में ऐसा हो जाना, ऐसी घटना घट जाना जीवन का एकाकीपन नहीं है। इसके विपरीत तब जीवन में कई रंग आकर घुलमिल जाते हैं। जिस संसार को आज तक वासनामयी और कामनामयी दृष्टि से देखा था, वही आत्मवत् दिखने लग जाता है। तब सभी अपने लगते हैं। तब लेने की इच्छा नहीं, देने की इच्छा अपने-आप पनप ही जाती है, ज्यों शिशु के सभी तो मित्र होते हैं, क्या पशु, क्या पक्षी, क्या फूल और क्या कौतूहल पैदा करती एक-एक वस्तु! तब ऐसा होता है कि एक-एक प्राणी उसका अपना हो जाता है, एक-एक फूल उससे बात करने को आतुर हो जाता है। घास का एक तिनका तक उसके प्राणों को छू लेने के लिए हिलता हुआ नर्तन करता दिखता है। **जब ऐसा घटित हो जाता है तभी मन में कुछ उमड़ता है और जब उमड़ता है या जो उमड़ता है, वही 'आनन्द' है। वही वह अनिर्वचनीय रस है जो 'ब्रह्म' है, जो समाधि की चेतना है,** जिसको शास्त्र व्यक्त नहीं कर सके, पुराण बता नहीं सके।

यह धरती, यह आकाश, प्रकृति का एक-एक कण और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड केवल उमड़ने से ही सौन्दर्य में भरा है। वृक्ष उमड़े और ठन्डी हवा दे गए। सूरज उमड़ा और कच्ची बालों में रस भर गया। चांदनी उमड़ कर, दिल में ठन्डक भर गई। बादल उमड़े, धरा को सींच गए। समुद्र उमड़ कर धरती को हिलोर दे गया। शिष्य भी जब उमड़ता है, हुलसता है तो पूरी मानवता को सुगन्ध मिल जाती है। एक साथ सूरज की गरमी, चांद की शीतलता, समुद्र की हिलोर और पेड़ों का नर्तन, उसके शरीर से उतर आता है, ज्यों एक शिशु की किलकारी से सारा घर हुलसने लग जाता है। **पर यह हुलसना और उमड़ना किससे होता है? किसको सामने देखकर मन में कुछ जगता है? केवल और केवल गुरु साहचर्य से, उनके स्पर्श से!**

बच्चा बहुत संवेदनशील होता है। वह जानता है कि उसे कौन प्रेम से छू रहा है और कौन बेमन से। शिष्य भी ऐसा ही होता है, वह स्नेह का वास्तविक स्पर्श ही तो ढूंढ रहा होता है। निर्मल प्रेम की आशा में ही तो वह सामान्य जीवन से अलग हटकर शिष्य बनने की क्रिया करता है, और ऐसा निर्मल प्रेम, ऐसी निश्छल दृष्टि उसे गुरु के अतिरिक्त भला और कहां से मिल सकती है? इसी से उसका संसार बाह्य छलनामय जगत से कटता जाता है और एक ही आधार–– गुरु से जुड़ता जाता है। उसे उस एक आधार से ही उसे इतना कुछ मिल जाता है और निरन्तर मिलता रहता है, जो उसको पूरे जीवन में बहते के लिए पर्याप्त होता है।

लेकिन बहना ही पर्याप्त नहीं है, उमड़ना है, क्योंकि उमड़ने से पहचान बनेगी, उमड़ने से ही कुछ घटित होगा, उमड़-उमड़ कर ही तो 'वहां' तक पहुंचेंगे और तब कुछ जरूर कहेंगे!

जो उमड़ा वही तो आनन्द है, जो छलक कर बिखरा वही तो ब्रह्म है, जिसमें भीग गए वही तो समाधि है।

. . . जीवन की शांति, माधुर्य और समाधि की चेतना, यहां तक पहुंचना ही जीवन का अर्थ है और बस तैर कर ही नहीं, चल कर नहीं, उमड़ कर . . .

क्या !!!
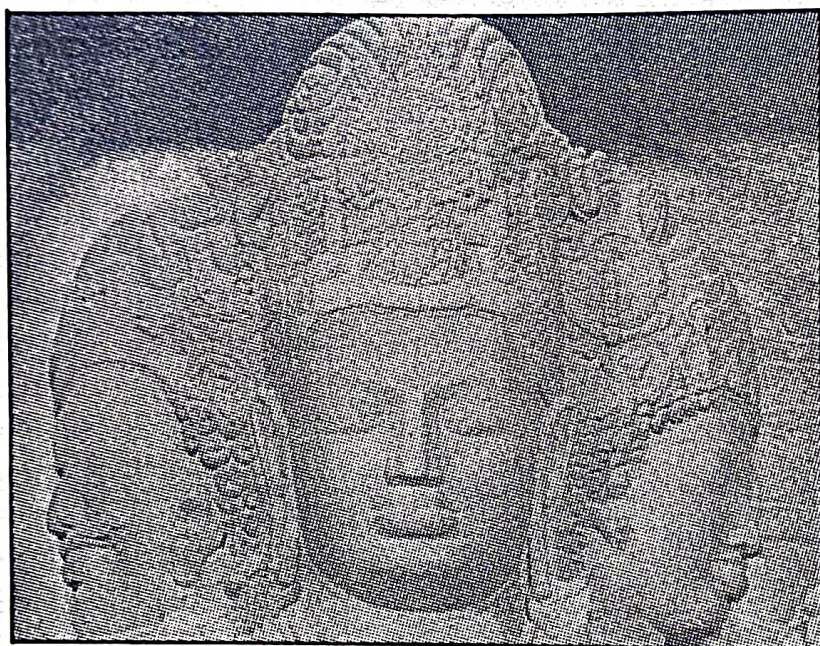
मैं अपने व्यवसाय का चुनाव नहीं कर पा रहा, मेरा भाग्योदय का काल कब प्रारम्भ होगा? मुझे नौकरी कब मिलेगी? क्या मकान का बंटवारा मेरे पक्ष में होगा? माता-पिता से नहीं बनती, क्या मुझे जायदाद में हिस्सा मिलेगा– जैसे अनेक पत्र पत्रिका कार्यालय में मिलते ही रहते हैं और सुलझे हुए शब्दों में कहा जाए तो ये सभी बातें जीवन की अड़चनें ही हैं।

क्या जीवन इन्हीं बातों में उलझ कर समाप्त कर दिया जाए या फिर किसी साधना का सहारा लेकर जीवन का सौभाग्य प्रारम्भ किया जाए?

आपके जीवन में बार-बार अड़चनें आ रही हैं?

एक साधक के जीवन में वह सबसे पुण्यदायी क्षण होता है जब वह अपने-आपको सामान्य पथ से हटा कर कुछ नवीन प्राप्त करने की ओर अग्रसर होता है। यदि सामान्य रूप से देखा जाए तो लगभग पचहत्तर प्रतिशत साधक साधना मार्ग का अवलम्ब प्राथमिक रूप से किसी समस्या से मुक्ति पाने के लिए ही लेते हैं, जबकि शेष पच्चीस फीसदी में अधिकांशतः अपनी किसी इच्छा विशेष की पूर्ति के लिए साधना करने वाले साधक होते हैं। केवल एक या आधा प्रतिशत साधक ही साधना मार्ग में परम लक्ष्य को प्राप्त करने की इच्छा लेकर अथवा ज़ीवन में कुछ नवीन घटित कर देने, कुछ विलक्षण खोज लेने की इच्छा लेकर गतिशील होते हैं।

एक साधक अपने साधनात्मक जीवन को किस बिन्दु से प्रारम्भ करता है, यह अधिक महत्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि

जन्म-जन्मान्तरों से साधना-परम्परा से अलग एवं एक प्रकार से अपने-आपको, अपने मूल स्वरूप को भुलाकर बैठा हुआ शिष्य या साधक एकाएक उच्च अध्यात्म पथ पर चलने की तैयारी कर भी नहीं सकता, किन्तु साधक के समक्ष कुछ पग साधनात्मक जीवन में चल लेने के बाद यह निर्धारित हो ही जाना चाहिए कि उसे सभी कुछ स्पर्श करते हुए, जीवन की प्रत्येक स्थिति से होकर गुजरने के बाद अपने जीवन का कल्याण स्वयं ही करना है। उसके जीवन का कल्याण या प्रचलित शब्दावली में 'मोक्ष' उसे कोई अन्य दिला भी नहीं सकता। जैसी कि एक ग्रामीण कहावत है कि 'अपने मरे बिना स्वर्ग नहीं मिलता'— वह ठेठ भाषा में कही गई एक सत्य उक्ति ही है।

जीवन का ताना-बाना जिस प्रकार से गुंथा-बुना होता है उसको समझना सहज कार्य नहीं है और न व्यक्ति अपनी समस्त प्रवृत्तियों, इच्छाओं, आकांक्षाओं का मूल समझ सकता है। उसकी दृष्टि के समक्ष जो कुछ होता है और जहां तक उसकी स्मृति उसका साथ देती है, वह एक छोटा-सा फलक होता है, जबकि जन्म की घटना तो इस जन्म से भी पीछे और दूर-दूर तक, कई जन्मों तक जाकर फैली होती ही है। उसको हम नकार नहीं सकते। इसका सीधा सा उदाहरण है कि **व्यक्ति को अपने जीवन के प्रारम्भ के चार-पांच वर्षों की स्मृति नहीं होती, अपने बचपन की यादें धुंधली सी होती हैं या नहीं होती हैं, तो क्या इससे यह सिद्ध होता है कि हमारा बचपन ही नहीं था?** उसी प्रकार यदि पूर्वजन्म की स्मृति नहीं है तो इस आधार पर पूर्वजन्म का अस्तित्व नकारा नहीं जा सकता।

अनेक जन्म की तृष्णायें, वासनायें, कर्म, पापराशि, पुण्य कार्य मिलकर ही एक नये जन्म का आधार बनते हैं, और केवल व्यक्ति के अपने कर्म ही नहीं, साथ में जन्म-जन्मान्तरों के पूर्वजों के कर्म भी उसके साथ जुड़े होते हैं। इसी से जीवन में और साधना में व्यक्ति को अनेक प्रकार की बाधाएं, असफलताएं और अड़चनें देखने की बाध्यता होती है।

अधूरे जिए जीवन के अंत में पीड़ा ही शेष रह जाती है कि मैंने तो कुछ और सोंचा था, किसी के लिए कुछ कुछ करना चाहा था पर क्यों खींच तान कर अपना ही उदर पोषण जैसा कर सका पाप मोचनी तृतिया का यह प्रयोग इसी का उत्तर है. . .

यहां ऐसा कहने का उद्देश्य यह नहीं है कि व्यक्ति अपने को पापी माने, अपराध बोध से ग्रस्त होकर अपने जीवन की चैतन्यता पर कुठाराघात कर ले, लेकिन बिना स्वयं को कोसे और बिना अपने-आप को पीड़ित किए भी व्यक्ति यदि निष्पक्ष होकर सोचे तो अवश्य अनुभव कर सकेगा कि क्यों उसी के जीवन में बार-बार अड़चनें आती हैं। पत्नी से मन का मेल नहीं बन पाता, संतान उद्दण्ड हो जाती है, माता-पिता के द्वारा वह अधिकार या स्नेह नहीं मिल पाता, जो मिलना चाहिए या क्यों जीवन बिखरा-बिखरा ही समाप्त हो जाता है।

ऐसे जीवन के पश्चात् अन्त में पीड़ा ही शेष रह जाती है कि मैंने तो अपने जीवन के प्रारम्भ में कुछ और स्वप्न देखे थे, ऊंचा उठना चाहा था या किसी के लिए कुछ करना चाहा था, लेकिन केवल अपने उदर-पोषण तक ही किसी तरह खींच-तान कर जी सका। जीवन में यह बहुत भयावह स्थिति होती है। जिसने कुछ प्रारम्भ नहीं किया है उसके पास तो आशाएं हैं, स्वप्न हैं, लेकिन जिसने प्रारम्भ करके असफलता प्राप्त की हो उसे प्रेरणा या गति देने के लिए आशायें और स्वप्न भी नहीं होते।

जीवन के ऐसे क्षणों में टूटने और बिखरने की अपेक्षा उचित यही रहता है कि व्यक्ति एक क्षण के लिए अपने-आप को संजोये, विचार कर देखे, उसने क्या खोया है और अभी भी क्या सम्भावनायें शेष हैं। साथ ही उसके पास क्या मार्ग है जिस पर चलकर वह अभी भी कुछ अर्जित कर सकता है और क्षतिपूर्ति भी कर सकता है। यह मार्ग होता है साधना का, जो किसी अंधकार की ओर नहीं धकेलता। विसंगति केवल यह हो जाती है कि व्यक्ति को समस्या के लिए उचित साधना पद्धति नहीं ज्ञात हो पाती। यह उसे ज्ञात हो सकती है तो केवल गुरु-आश्रय लेते हुए, गुरु-मार्ग का अवलम्ब लेते हुए, क्योंकि गुरुदेव ही वे माध्यम हैं जो अपने शिष्य या साधक को साधनाओं के अथाह समुद्र में से चुनकर सही समय के अनुरूप सही साधना का ज्ञान करा सकते हैं। **उचित मुहूर्त के अवसर पर की गई साधना कभी भी निष्फल हो ही नहीं सकती।**

आगामी दिवसों में एक ऐसा ही विशेष मुहूर्त उपस्थित हो रहा है जिस दिन एक लघु साधना के द्वारा साधक अपने जीवन के साथ-साथ चल रही विषमताओं की काली छाया को मिटा सकता है। यह दिवस है **पाप मोचिनी तृतिया** का, जो इस वर्ष २६.६.९४ को पड़ रही है, जीवन की विषमताएं समाप्त करने के लिए यह वर्ष का एक विशिष्ट मुहूर्त है। जीवन में दुर्भाग्य की काली छाया और जन्म-जन्मान्तरों में अज्ञानवश अर्जित किए गए पापों को

समाप्त करने के लिए जो देव समर्थ हैं वे हैं भगवान रुद्र। **भगवान शिव के वरदायक स्वरूप का ही दूसरा नाम है रुद्र। रुद्र न तो उग्र है, न क्रोधी, केवल शिव है।** अपने भक्तों की कष्ट-बाधा दूर करने के लिए अग्नि स्वरूप बनकर, तीव्र स्वरूप, प्रज्ज्वलित स्वरूप में पूर्ण करुणामय भगवान रुद्र का स्वरूप तो अत्यन्त मनोहारी है। गौर वर्णीय, नीलकण्ठिय एवं गुलाबी आभा से युक्त प्रसन्नता से मुस्कराते हुए अतीव सुंदर ओष्ठद्वय के साथ भगवान रुद्र पूर्णरूप से आत्मलीन और समाधि में आनन्दमग्न देव हैं।

ऐसे भगवान रुद्र की आराधना-साधना ही वह उपाय है जिसके द्वारा साधक के जीवन में कोई नया अध्याय लिखा जा सकता है। वह स्वयं भी उनकी तपः अग्नि में तप कर खरे स्वर्ण की भांति बिखर सकता है और आगे का जीवन उन्हीं के समान निर्मल एवं आनन्द की पराकाष्ठा से भरपूर करके व्यतीत कर सकता है।

भगवान शिव के रुद्र स्वरूप के विषय में वेदों में पर्याप्त वर्णन मिलता है और सिद्ध होता है कि हमारे पूर्वज मूलतः रुद्रोपासना करते रहने के कारण ही अपने जीवन में स्वस्थ, सबल, पुष्ट, तेजस्वी एवं पूर्ण समाधि सुख को प्राप्त करने वाले बन सके। भगवान शिव के रुद्र स्वरूप को वेदों में साक्षात् अग्नि ही माना गया, उनकी एक संज्ञा **'शर्वाग्नि'** इस बात की पुष्टि करती है। ऐसी अग्नि का आश्रय लेकर, ऐसे अग्नि स्वरूप भगवान शिव की शरण लेकर साधना के माध्यम से उनकी प्रखरता को अपने रोम-रोम में उतार कर जीवन को निर्मल, चैतन्य, पाप-रहित बनाकर ही वह सब कुछ अर्जित किया जा सकता है, जो हमारे जीवन में 'शिवत्व' प्राप्ति का आधार बने, क्योंकि भगवान रुद्र अपने सम्पूर्ण स्वरूप में पाप नाशक ही हैं–

या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी

(यजुर्वेद)

इस वर्ष यह दिवस रविवार को पड़ रहा है, जो भगवान सूर्य का तेजस्वी दिवस है। साधक प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में उठकर ही स्नान आदि से शुद्ध होकर श्वेत वस्त्र धारण कर उत्तर दिशा की ओर मुंह करके बैठ जाए। अपने सामने सफेद वस्त्र पर **गुरु चित्र** स्थापित कर उसके दाहिनी ओर **'पुरुरूप शिवलिंग'** स्थापित करे। भगवान रुद्र की समस्त शक्तियों का प्रतिनिधित्व करता यह विशिष्ट शिवलिंग जो देखने में विविध वर्णीय होता है, उसकी स्थापना एवं उस पर सम्पन्न की गई साधना के द्वारा ही साधक के जीवन के पाप, दोष एवं ताप का निवारण हो सकता है। प्रथमतः संक्षिप्त गुरु पूजन करें, गुरु मंत्र की एक माला मंत्र-जप करें एवं पुरुरूप शिवलिंग पर दुग्ध धार चढ़ाते हुए **ॐ नमः शिवाय** का उच्चारण करें, यदि गंगाजल हो तो उससे भी अभिषेक करें, शिवलिंग पर भेंट स्वरूप एक **गौरी शंकर रुद्राक्ष** भेंट चढ़ाकर गुलाब के पुष्पों, अबीर, कुंकुम, गुलाल व श्वेत चंदन से भी शिवलिंग व गौरी शंकर रुद्राक्ष का पूजन करें, इसके उपरान्त एक **सर्वबाधा निवारण यंत्र** (जो तावीज रूप में हो) उसे स्थापित कर **रुद्राक्ष की माला** से निम्न मंत्र की एक माला अथवा पांच माला मंत्र-जप करें।

''या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी''

भगवान शिव का ही स्वरूप है 'रुद्र'. . . भारतीय परम्परा के मूल देव, आर्य जीवन की पुष्टता के आधार, पाप मोचक, वरदायक और पूर्ण समाधि सुख देने में समर्थ. . .

मंत्र

ॐ ब्लौं सदाशिवाय नमः

मंत्र-जप सम्पूर्ण हो जाने पर पुनः संक्षिप्त शिव पूजन करें एवं गुरु पूजन कर इस साधना की सम्पूर्णता प्राप्त करें। इस साधना में प्रयुक्त तावीज रूप में सर्वबाधा निवारण यंत्र, साधना की समाप्ति के तुरन्त बाद लाल धागे में लपेट कर किसी शिव मंदिर में चढ़ा दें अथवा पवित्र नदी में जाकर समर्पित कर दें।

गौरी शंकर रुद्राक्ष को गले में धारण कर लें, जिससे इस साधना का पूर्ण लाभ प्राप्त हो सके और निरंतर उसके स्पर्श से शरीर की जड़ता, रोग, अशक्तता समाप्त होकर चैतन्यता बनी रहे। पुरुरूप शिवलिंग को सम्मानपूर्वक अपने पूजा स्थान में स्थापित कर दें। यदि एक दिवस का ही प्रयोग करते हैं तो सर्वबाधा निवारण यंत्र के साथ जिस रुद्राक्ष माला से उपरोक्त मंत्र-जप किया है उसे भी जल में विसर्जित कर दें। यद्यपि कुछ शास्त्रों में विवरण मिलता है कि यदि साधक इस प्रयोग को पापमोचनी तृतिया से लेकर त्रयोदशी तक सम्पन्न कर लेता है तो उसे आने वाले समय में भी पर्याप्त लाभ मिलता है और एक प्रकार से इस प्रयोग का लाभ स्थायी हो जाता है। साधक यदि चाहे तो इस एक दिवसीय प्रयोग को आगे के क्रम के रूप में **त्रयोदशी (६.७.९४)** तक नित्य कर सकता है। प्रतिदिन एक माला उक्त मंत्र की जपने के पश्चात् अंतिम दिन भी रुद्राक्ष की माला जल में विसर्जित कर सकता है।

लक्ष्मी कवच

लक्ष्मी के तो विविध स्वरूप है और विविध स्वरूपों में से ही उनके शक्तिमय स्वरूप है- भुवनेश्वरी और कमला। भुवनेश्वरी अपने-आप में पूर्ण रूप से लक्ष्मी का ही विग्रह मानी गई है जैसा कि उनके नाम से ही प्रकट होता है। जो सम्पूर्ण भुवन की अधीश्वरी हों, वे लक्ष्मी के अतिरिक्त अन्य कौन हो सकती है? आकस्मिक धन प्राप्ति की बात हो अथवा गृहस्थ जीवन को प्रत्येक रूप से आपूरित करने की, भगवती भुवनेश्वरी ही आधारभूता शक्ति है और लक्ष्मी की साक्षात् प्रतीक भी . . .

कवच केवल एक सुरक्षा आवरण ही नहीं होता। कवच शरीर के रोम-रोम में शक्ति के समाहितीकरण की प्रक्रिया होती है और यह समाहित होती है बीज मंत्रों के माध्यम से। प्रस्तुत कवच इसी प्रकार भगवती महालक्ष्मी के बीज मंत्रों से युक्त पूर्ण फलदायक और जीवन में निरन्तर उन्नति देने वाला कवच है। इस कवच के नियमित पाठ के अभाव में प्रत्येक लक्ष्मी साधना असफल ही है और इसी से योग्य साधक यदि अपने जीवन में समय अभाव के कारण अथवा किसी अन्य बाधा के कारण जब नियमित रूप से लक्ष्मी की साधना नहीं कर पाते तो **ह्रीं यंत्र** सामने रखकर प्रतिदिन कम से कम इस कवच का एक पाठ अवश्य कर लेते हैं।

त्रैलोक्यमंगल कवच

ह्रीं बीजं शिरः पातु भवनेशी ललाटकम्, ऐं पातु दक्षनेत्रं मे ह्रीं पातु वामलोचनम्।।
श्रीं पातु दक्षकर्णं मे त्रिवर्णात्मा महेश्वरी, वामकर्ण सदा पातु ऐं घ्राणं पातु मे सदा।।
ह्रीं पातु वदनं देवि ऐं पातु रसनां मम, वाक्पुटा च त्रिवर्णात्मा कंठं पातु परात्मिका।।
श्रीं स्कंधौ पातु नियतं ह्रीं भुजो पातु सर्वदा, क्लीं करौ त्रिपुटा पातु त्रिपरैश्वर्यदायनी।।
ॐ पातु हृदयं ह्रीं मे मध्यदेशं सदा अवतु, क्रौं पातु नाभिदोशं मे त्रयक्षरी भुवनेश्वरी।।
सर्वबीजप्रदा पृष्ठं पातु सर्ववशंकरी, ह्रीं पातु गुह्य देशं मे नमो भगवती कटिम्।।
माहेश्वरी सदा पातु शंखिनी जानुयुग्मकम्, अन्नपूर्णा सदा पातु स्वाहा पातु पदद्वयम्।।
सप्तदशाक्षरा पायादन्नपूर्णाखिलं वप्रैः तारं माया रमाकामः षोडशार्णा ततः परम्।।
शिरः स्था सर्वदा पातु विशंत्यर्णात्मिकां परा। तारं दुर्ग्रेयुगं रक्षिणीस्वाहेता दशाक्षरा।।
जयदुर्गा घनश्यामा पातु मां सर्वतो मुद्रा, मायाबीजादिका चैषां दशार्णा च ततः परा।।
उत्तप्तकांचनाभासा जय दुर्गा वनेऽ वतु, तारं ह्रीं दुं च दुर्गायै वसुवर्णात्मिका परा।।
शंख चक्रधानुर्बाणधरा मां दक्षिणेवतु, महिषामर्दिनी स्वाहा वसुवर्णात्मिका परा।
नैऋत्यां सर्वदा पातु महिषासुरनाशिनी। माया पद्मावती स्वाहा सप्तपापप्रकीर्तिता
पद्मावती पद्मसंस्था पश्चिमे मां सदावतु, पाशांकुशपुटा माये हि परमेश्वरि स्वाहा।।

पाठकगण उपरोक्त कवच का पाठ करने पर स्वयं अनुभव कर सकेंगे कि इसमें कैसी चैतन्यता और प्रभावशाली तत्व समाविष्ट हैं। एक-एक अंग में देवी के एक-एक स्वरूप को धारण करने से शीघ्र की साधक का सारा शरीर निरोग होने के साथ दिव्यता से भरा होने लगता है और साधक नित्य प्रति अपने-आप को नूतन पाता हुआ श्रेष्ठता व सफलता की सीढ़ियां चढ़ना आरम्भ कर देता है।

भगवती भुवनेश्वरी तो अपने स्वरूप में पूर्ण रूप से अन्नपूर्णा ही है और ऐसा हो ही नहीं सकता कि भगवती भुवनेश्वरी की साधना, अराधना की जाय और गृहस्थ जीवन में किसी प्रकार की कोई न्यूनता रह जाए। गृहस्थ के तो जीवन का आधार ही भुवनेश्वरी है। भगवती भुवनेश्वरी ही सही अर्थों में लक्ष्मी का पूर्ण प्रतिनिधित्व करने वाली देवी है और भुवनेश्वरी ही इस जगत में करुणा का आधार हैं, अतः ऐसी गुरु स्वरूपा भगवती भुवनेश्वरी की आराधना करने के बाद जीवन में आर्थिक कष्ट रह ही नहीं सकता, यही शास्त्र प्रमाण भी है।
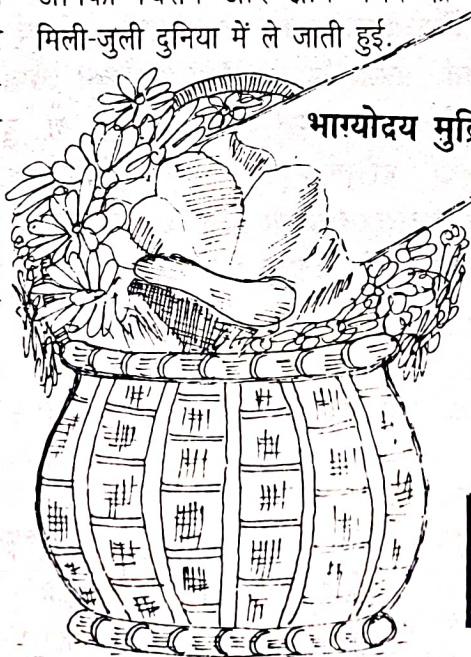
अप्सरा हेमांगिनी

❝

देहिक सौन्दर्य की विशेषताओं के साथ अप्सरा साधना को नये ढंग से समझने का प्रयास करता रोचक लेख. . .

हेमांगिनी तो शरीर में यौवन को उतार देने की स्वामिनी है, अपने प्रेम से, अपनी मधुरता से. . . किन्तु कैसे?

❞

जब तुम मेरे सामने होते हो
गोया कोई दूसरा नहीं होता।।

प्रेम में बस इतना ही होता है, जो खुद तो नहीं होता लेकिन हो जाने के बाद लगने लगे कि कैसे बिना इसके इतने दिन कट गए? हकीकत में न कोई प्रेमिका होती है न कोई प्रेमी होता है, बस अपना ही प्रतिबिम्ब होता है। अपना जैसा ही जब कुछ दिख जाता है और मन खुद ब खुद उससे जाकर जुड़ जाता है, तो वही प्रेम है।

अपनेपन की पराकाष्ठा पर, अपने-आप को भुला देने तक, दीवानगी तक पहुंच जाने के बाद ही दुनिया कहती है कि वह एक प्रेमी है या वह प्रेमिका है। यह तो दुनियां की दी हुई संज्ञा है। जो प्रेम करता है वह खुद अपने मुंह से तो कभी नहीं कहता कि वह प्रेमी है या

प्रेमिका!

प्रेम मानव की व्यक्त की गयी सबसे सुन्दर और नित धड़कने वाली अभिव्यक्ति है, जिसके आइने में देखकर उसके ही एक-एक पहलू पहचाने जा सकते हैं। किसी की प्रेमिका को देखकर ही समझा जा सकता है कि वह व्यक्ति किस सौन्दर्य का पारखी है, या किसी स्त्री को निरख कर ही कहा जा सकता है, उसके प्रेमी को पहिचान कर ही पहिचाना जा सकता है कि वह आन्तरिक रूप से किस सौन्दर्य की स्वामिनी है, उसकी क्या अभिरुचियां हैं, क्या भावनायें हैं। प्रेम हमारे हृदय की खुली कली ही तो है।

मन की बांहें जब फैलती हैं और उनमें जब कोई अपने जैसे ही विचारों वाली या विचारों वाला आकर सिमट जाता है तो वहीं से प्रेम की प्रथम फुहार के छींटे आकर भिगोना शुरु कर देते हैं। देह और सौन्दर्य उसमें कोई बहुत मायने नहीं रखता, क्योंकि **प्रेम की बांहें, मन की बांहें जाकर 'उसको' आलिंगन में बांधती हैं, जो देह से परे, नजरों से छुपा है, लेकिन सुवासित है।**

एक साधक के जीवन का अर्थ कुछ और होता है, उसकी इच्छाएं, कामनाएं, प्राप्ति, सौन्दर्य परखने व निहारने का ढंग, सभी कुछ सामान्य व्यक्ति से पृथक, कुछ न कुछ भिन्नता अवश्य ही लिए होते हैं। उसका सौन्दर्य-बोध देह से होता हुआ भी देह से कहीं ऊपर उठा हुआ होता है, इसी से साधक के जीवन में किसी न किसी स्तर पर 'अप्सरा साधना' बेहद जरूरी हो जाती है, **क्योंकि अप्सरा साधना करने के बाद ही उसको वह दृष्टि मिलती है और दृष्टि मिलने के साथ-साथ चारों ओर ऐसा कुछ झलकने लगता है, जो यथार्थ में सौन्दर्य हो।**

भार फूलों का सहा जाता नहीं
किस तरह मगरूर है तेरा बदन

यूं सबा तेरे पास से गुजरती है
जैसे कह दी हो किसी ने प्यार की बात

सौन्दर्य का वास्तविक बोध बस तीखे नयनों और उन्नत उरोजों, क्षीण कटि या पृथुल नितम्बों तक ही नहीं छुपा होता। साधक सौन्दर्य को बिलकुल अलग हटकर एक अनोखी अदा से देखता है, या सही शब्दों में कहा जाए तो निहारता है। उसका सौन्दर्य-बोध एक गुंजन को देखने में छुपा होता है, और **प्रेम क्या दो हृदयों के बीच एक गुंजन के अतिरिक्त भला और कुछ है?**

बोलने की शालीनता, हास्य की कला, उठने-बैठने की बारीकियां, बात कहने की शालीनता, शिष्ट हास्य-विनोद को करने व समझने की कला, शालीनता और आंखों से बात कर लेने की शैली— साधक की दृष्टि में यही सब मिलकर सौन्दर्य बनता है, और सबसे बड़ी बात यह कि जहां रूप की कोई अहंमन्यता सी होते हुए स्वगुणों की स्निग्धता मात्र ही बिखरी हो। केशराशि की नखचुम्बिता और त्रिवलि का गहरा सौन्दर्य भी ऐसे गुणों के आगे फीका पड़ जाता है। **एक प्रेमी अपनी प्रेमिका से क्या चाहता है?** सही शब्दों में कहा जाए तो उसे क्या कामना करनी चाहिए? इसका उत्तर है केवल अपनत्व, आत्मीयता और प्रगाढ़ता, शेष तो इसके आगे गौण पड़ ही जाता है।

प्रेम एक पुलक है और अपने प्रिय को अपने सामने देखकर हृदय में उठी तरंगें है, जिसके पश्चात् वासना की लहरियां स्वयमेव घृणित हो जाती हैं। किसी के मन को छूने की कला सीख लेने के बाद, देह के स्तर तक ही सोचना बहुत अधिक तुच्छ हो जाता है, और तब वही दृष्टि को लुभाती या उत्तेजित करती देह एक प्रकार से आराधना की वस्तु बन जाती है, जिसके भीतर अपना वास्तविक 'प्रिय' छुपा हुआ होता है।

ऐसे 'प्रिय' को पहिचान लेना, उल्लसित हो जाना ही यौवन है।

प्राणों में हलचल हो जाना और खिलखिलाकर मन में नाच उठना मन ही मन में मुस्करा उठना . . . यही सब तो होता है यौवन में, और जब अन्दर से ऐसा हो जाता है तो देह को खिलना ही है। **देह तो ईश्वर की ओर से दिया गया एक पुष्प है जिसको सींच दिया तो वह खुद ब खुद खिल ही जायेगा;** और जब खिल जायेगा तो सुगन्ध व रंग बिखेरगा ही, क्योंकि यही तो पुष्प का धर्म है। पुष्प को कोई बाध्यता नहीं होती, उसके ऊपर कोई कर्त्तव्य आरोपित नहीं होता, उसे कोई जाकर याद नहीं दिलाता कि तुम खिलो और रंग बिखेरो। लेकिन होता यह है कि वह पुष्प जब कुम्हला जाता है, मुरझा जाता है, तो खुद ब खुद उसमें एक कुम्हलाहट आ जाती है। अप्सरा साधना इसी मन को सींच देने की क्रिया है।

इसीलिए कहा है कि ब्रह्म साधना से भी आवश्यक, ब्रह्म साधना से भी पूर्व अप्सरा साधना करना साधक के लिए अनिवार्य है। साधक की दृष्टि जो भी हो किन्तु साधनाओं में तो कोई न्यूनता नहीं है। वे तो सदैव एक विशेष उद्देश्य के लिए बनाई गई हैं और अप्सरा साधना भी एक ऐसी साधना है।

साधकों को अक्सर भ्रम हो जाता है कि वे बार-बार साधना कर रहे हैं लेकिन सफलता क्यों नहीं मिल रही? उसको सीधा सा सहज उत्तर है कि **जिस प्रकार आप अपने व्यवहारिक जीवन में जिस किसी भी लड़की से चाहें विवाह कर आवश्यक नहीं कि सुखी हो ही जाएं या वह आपके अनुकूल सिद्ध हो ही जाय। कोई विशेष स्त्री ही आपके लिए अनुकूल सिद्ध होती है, उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को किसी एक विशेष अप्सरा की साधना में ही पूर्णरूप से सफलता प्राप्त हो पाती है।**

और अप्सरा साधनाओं के क्षेत्र में यह शक्तिपात युक्त दीक्षा एक नयी धारणा है जो पूज्य गुरुदेव ने दी. . .

जो साधक केवल अप्सरा दीक्षा या अप्सरा प्रत्यक्षीकरण दीक्षा से भी अप्सरा साहचर्य का लाभ न प्राप्त कर सके हों उन्हें जीवन में कुछ घटित कर लेने का निश्चित उपाय, एक सरल मार्ग. . .

और अप्सरा साधना तो कोई भी असफल होती ही नहीं, चाहे किसी भी अप्सरा की साधना की जाए। प्रत्येक साधना से साधक के अन्दर वे स्थितियां बनने लगती हैं, जिससे वह भविष्य में अपनी अनुकूल अप्सरा को एक बार में ही सिद्ध कर सकता है। **अलग-अलग अप्सरा साधना प्रकाशित करने का यही कारण है** कि पता नहीं किस व्यक्ति से कौन-सी अप्सरा साधना मेल खा जाए और वह अपना मनोवांछित प्राप्त कर ले।

मैंने **हेमांगिनी अप्सरा** की साधना की और उसे साधना न कह कर वास्तव में पूज्य गुरुदेव द्वारा प्रदत्त वरदान कहना ही अधिक उचित रहेगा, क्योंकि जब उन्होंने मुझे यह साधना दी और साधना की विधि दी, उसी समय **शक्तिपात युक्त दीक्षा** देकर वह आधारभूमि भी बना दी जिससे हेमांगिनी अप्सरा मेरे प्राणों में समाहित हो गई। अप्सरा साधनाओं के क्षेत्र में यह **शक्तिपात युक्त दीक्षा** एक नई बात है क्योंकि अभी तक पूज्य गुरुदेव ने केवल अप्सरा दीक्षा या अप्सरा प्रत्यक्षीकरण दीक्षा मात्र ही दी है, किन्तु उन्होंने अब यह निर्णय लिया है कि मैं अपने साधकों को विशेष शक्तिपात युक्त दीक्षा द्वारा यह साधना सिद्ध कराऊंगा जिससे उन्हें वास्तविक सौन्दर्य बोध हो सके। जब उनके शक्तिपात से अप्सरा सूक्ष्म रूप में साधक के शरीर में समाहित हो जाती है तो शेष बहुत थोड़ा प्रयास ही रह जाता है, जिसे साधक अपने मंत्र-जप से पूरा कर सकता है।

वास्तव में हेमांगिनी अप्सरा अपने शारीरिक सौन्दर्य और अपने आन्तरिक सौन्दर्य के कारण पूर्ण यौवन प्रदाता है ही। उसका साहचर्य इस प्रकार सुखद और आश्वस्त करने वाला है, जिससे साधक को आत्मीयता मिलती है ही और जब तक आत्मीयता नहीं मिलती तब तक साधक किसी विशेष परिवर्तन की आशा भी नहीं कर सकता, क्योंकि साधक जिस यौवन की कल्पना करता है, अप्सरा साधना सिद्ध करने पर जिन स्थितियों का चित्र अपने दिमाग में बनाता रहता है, वे तब एकदम से गड्डमड्ड हो जाती है जब कोई अनिन्द्य सुन्दरी अपने सारे हाव-भाव, विलास और कटाक्षों के साथ उपस्थित होती है। इसके विपरीत यदि साधक हेमांगिनी अप्सरा की साधना सम्पन्न कर लेता है तो उसे आत्मीयता के साथ-साथ आत्मविश्वास भी प्राप्त होता है जिससे जीवन में पूर्णरुप से सौन्दर्य का उपभोग करने की क्षमता आ पाती है। आत्मीयता और आत्मविश्वास ही सौन्दर्य और आकर्षण के आधार भी बनते हैं।

✽

प्रकृति रचित
सिद्धि फल

सिद्धि फल एक ऐसी अनूठी रचना है जो स्वयं प्रकृति के द्वारा ही रचित है और अपने गुणों के कारण वनस्पति होते हुए भी **सिद्धि फल** के नाम से पहचानी गई। साधक हो या गृहस्थ, तांत्रिक हो या योगी सभी इसके अचूक लाभ प्राप्त करके इसे साधना की आवश्यक सामग्री मानने को विवश हुए ही हैं।

और इसके दैनिक जीवन में भी प्रयोग कम नहीं हैं।

* जीवन में तीन प्रकार के दोष माने गए हैं जो साधक की सफलता में बाधा बनते हैं — वाक् दोष, नेत्र दोष, चिन्तन दोष। इन दोषों को समाप्त करने के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक साधना से पूर्व **तीन सिद्धि फल** स्थापित कर **'वं'** बीज मंत्र की तीन माला मंत्र जप सम्पन्न कर लें तथा साधना की समाप्ति पर उन्हें विसर्जित कर दें।
* किसी भी साधना में यदि यंत्र या देवता की मूर्ति के समक्ष 'लं, हं, रं, यं एवं वं' बीज मंत्र का उच्चारण कर **पांच सिद्धि फल** चढ़ा दिया जाय तो यह पूर्ण पंचोपचार पूजन माना गया है। यदि सामान्य पंचोपचार पूजन के साथ - साथ पांच सिद्धि फल चढ़ाए जाएं तो श्रेष्ठतम् माना गया है।
* **दो सिद्धि फलों** को लेकर इन्हें एक सफेद रेशम की थैली में गूंथ कर रखना इच्छित व्यक्ति से प्रेम में सफलता का पूर्ण परिचायक है, फिर यह भी आवयश्यक नहीं कि व्यक्ति दूसरे पक्ष के लिए कोई वशीकरण प्रयोग सम्पन्न करे।
* उपरोक्त प्रयोग को विवाहित स्त्री, पुरुष भी अपना सकते हैं और अपने जीवन को निरन्तर मधुर बनाए रख सकते हैं।
* व्यापारिक वर्ग अपने व्यापार स्थल पर जहां लघु नारियल, कुबेर यंत्र अथवा लक्ष्मी-गणेश की मूर्ति का स्थापन करते हैं वहीं ऐसे पूजन अथवा यंत्र के चारों ओर **आठ सिद्धि फलों** की स्थापना अष्ट लक्ष्मी की प्रतीक मानी गई है।
* गुरु साधना में सिद्धि फल की उपस्थिति एक प्रकार से अनिवार्य मानी गई है। साधना से पूर्व पांच चावल की ढेरियों पर **पांच सिद्धि फलों** की स्थापना गुरु - परम्परा की उपस्थिति की प्रतीक मानी गई है।
* प्रत्येक तांत्रोक्त गुरु पूजन में पूर्णता पर एक सिद्धि फल प्रत्येक बार गुरु यंत्र, चित्र पर अर्पित करना वरदायक माना गया है।
* जिस प्रकार भगवान शिव को धतूरा प्रिय है उसी प्रकार विष्णु साधना **सिद्धि फल** अर्पित किए बिना पूर्ण मानी ही नहीं जाती।
* जहां किसी का मन बदल गया हो अथवा कोई आत्मीय या मित्र रूठ जैसा गया हो वहां किसी प्रकार एक सिद्धि फल उसे भेंट करना सौभाग्यदायक और सम्बन्धों में मधुरता लाने वाला होता है। साथ ही यह जिसके घर जाकर स्थापित होता है उसके मन से मलिनता व वैमनस्य भी समाप्त होता ही है।
* जिस प्रकार तांत्रोक्त नारियल की उपस्थिति घर के दूषित प्रभावों को समाप्त में सक्षम है वहीं सिद्धि फलों की उपस्थिति लक्ष्मी की उपस्थिति की प्रतीक है। साधक के घर में **कुल जितने दरवाजें हों उतने सिद्धि फलों** को प्राप्त कर घर के मुख्य दरवाजे पर तांत्रोक्त नारियल के साथ स्थापित करने से लक्ष्मी का चिरवास होता है।
* जहां मन में खिन्नता रहती हो या मानसिक उलझन के कारण चित्त में शांति न रहती हो तो एक सिद्धि फल को कपड़े में गूंथ कर गले में धारण कर लेना चाहिए।
* साधना की समाप्ति पर जहां यथेष्ट दान - दक्षिणा की बात आती है अथवा साधना को पूर्णता देने की स्थिति होती है वहां दान के साथ कुछ सिद्धि फलों को भी मन्दिर में (अथवा दान लेने वाले व्यक्ति को) अर्पित करना चाहिए, इससे साधना के मध्य हुई न्यूनताएं स्वतः ही समाप्त हो जाती है।

सिद्धि फल प्रकृति का इसी कारणवश वरदान कहा गया है, जिसके औषधीय गुणों की चर्चा हम भविष्य में करेंगे। इनका किसी भी प्रकार से घर में स्थापन सौभाग्यदायक ही होता है।

कुबेर साधना

शास्त्रों में जितना अधिक महत्व लक्ष्मी साधनाओं को दिया गया है उससे कुछ अधिक ही बल कुबेर साधना पर दिया गया, क्योंकि धन प्राप्ति से भी अधिक महत्वपूर्ण बात है कि वह कौन-सा उपाय हो जिससे फिर ऐसा न हो कि व्यक्ति कमाये एक और चार खर्च की स्थिति बनती रहे? यही कुबेर साधना का अर्थ है। कुबेर साधना सम्पन्न करने से व्यक्ति के जीवन में ऐसी स्थिति बनने लगती है कि उसके अनावश्यक व्यय और आकस्मिक खर्चों की स्थिति पर अंकुश लग जाता है, क्योंकि कुबेर अपने-आप में देवताओं के भी कोषाध्यक्ष एवं धनाध्यक्ष हैं और इनकी जहां भी साधना होती है, **जहां भी इनकी यंत्र रूप में स्थापना होती है, वहां कोष निर्माण की स्थिति स्वयमेव बननी प्रारम्भ हो जाती है। कुबेर के निवास का स्थान कोष ही माना गया है और वे अपने प्रभाव द्वारा ऐसे निर्माण को सम्भव करने की प्रक्रिया प्रारम्भ कर देते हैं।**

जहां व्यक्ति के जीवन में महालक्ष्मी साधना एक अनिवार्य दशा है, वहीं कुबेर

धन-सम्पत्ति प्राप्ति की अनेक साधनाएं हैं। बीज साधनाएं, तांत्रोक्त साधनाएं, स्तोत्र पाठ, महालक्ष्मी साधना इत्यादि, किन्तु प्राप्त की हुई लक्ष्मी को स्थायित्व देने के लिए आवश्यक है कि फिर ऐसा साधना बल हो जिससे धन आपके पास रुक भी सके, सम्पत्ति का निर्माण हो सके, ऐश्वर्य का वातावरण बन सके तथा निश्चिन्तता पूर्वक सुखोपभोग भी कर सकें। कुबेर साधना ऐसी ही दुर्लभ और विशिष्ट साधना है।

साधना भी एक अपरिहार्य स्थिति है क्योंकि इन दोनों के परस्पर संयोजन से ही जीवन की श्रेयता निर्मित होती है। महालक्ष्मी साधनाओं के द्वारा जहां व्यक्ति का दुर्भाग्य समाप्त होता है वहीं कुबेर साधना से सौभाग्य निर्मित होता है। **अनेक शास्त्रों में कुबेर साधना को महालक्ष्मी साधना से भी अधिक महत्वपूर्ण एवं उच्चकोटि का बताया गया है।** अत्यन्त प्राचीन ग्रंथों में, साधना की हस्तलिखित प्रतियों में न केवल स्थायी सम्पत्ति के निर्माण के लिए अपितु धनप्रदायक साधनाओं के रूप में भी कुबेर साधना को ही एकमात्र उपाय कहा गया है।

देवताओं के अक्षय कोष के स्वामी एवं देव योनियों के अधिपति होने के साथ-साथ उनकी विशेषता इस बात में है कि वे भगवान शिव के अत्यन्त प्रिय हैं। शास्त्रों में इन्हें 'शंकर प्रिय बान्धवः' कह कर सम्बोधित किया गया है। भगवान शिव ने इनकी आराधना से प्रसन्न होकर इन्हें विभिन्न वैभव देने के साथ-साथ उत्तर दिशा का अधिपति भी बनाया, समस्त शुभ कार्यों में पूजन के पूर्व कुबेर पूजन नितान्त आवश्यक माना गया है। समस्त क्षेत्रपालों में कुबेर का महत्व उत्तर दिशा के स्वामी होने से सर्वोच्च है ही।

से परिपूर्ण बनाये रखते हैं। **इसी से कुबेर साधना ऐसी साधना मानी गई है, जो कई प्रभावों को सम्मिलित रूप से प्रदान करती है। कुबेर साधना सम्पन्न करने वाले साधक को अप्सरा साधना, यक्षिणी साधना, गन्धर्व साधना में भी पर्याप्त लाभ मिलता है। धन और अक्षय सम्पत्ति तो प्राप्त होती ही है।**

कुबेर साधना का सबसे अधिक महत्वपूर्ण और गोपनीय पक्ष यह है कि कुबेर साधना प्रकारान्तर से **भूगर्भ साधना** भी है, क्योंकि यक्षराज कुबेर नव-निधियों के स्वामी होने के साथ-साथ इस धरा व धरा के गर्भ में निहित सभी निधियों के भी स्वामी जो हैं। अतः यदि साधक **एक विशेष विधि से कुबेर साधना सम्पन्न कर लेता है,** कुबेर यंत्र पर गोपनीय मंत्र का एक निश्चित संख्या में जप कर लेता है तो कालान्तर में उसे निश्चित रूप से भूगर्भ सिद्धि प्राप्त होने की दशाएं बनने लगती हैं। <u>विशेष रूप से ऐसे साधकों के लिए जिन्हें विश्वास हो कि उनके घर में कहीं गोपनीय ढंग से धन दबा है अथवा जिन्हें अपने पूर्वजों की छोड़ी हुई धन-सम्पत्ति का विवरण न मिल पा रहा हो, उनके लिए यह अत्यन्त फलप्रदायक साधना है।</u>

श्रीं श्रीं श्रीं

ॐ वैश्रवणाय ॐ

प्राचीन साधनात्मक ग्रंथों में लक्ष्मी की साधनाएं नहीं मिलतीं उसके स्थान पर 'श्री'/की साधनाएं ही प्रमुखता से वर्णित हैं। प्राचीनकाल में धन-सम्पत्ति से भी अधिक महत्व इस बात को दिया गया कि ऐसा जीवन में क्या किया जाए जिससे जीवन सर्वरूपेण सम्पन्न हो सके? क्योंकि जब तक जीवन सभी रूपों में सम्पन्न नहीं होगा तब तक 'श्री' की स्थिति नहीं निर्मित हो सकती और 'श्री' की प्राप्ति के लिए ही कुबेर साधना आवश्यक साधना है। **जो समस्त देवताओं को भी धन प्रदान करने में समर्थ है, उनसे अधिक श्रेष्ठ बल किसका हो सकता है?** केवल देवताओं के धनाध्यक्ष मात्र ही नहीं, कुबेर समस्त यक्षों, किन्नरों एवं गुह्यकों के भी अधिपति हैं, नव-निधियों के स्वामी हैं तथा उनकी आराधना से संसार का प्रत्येक वैभव एवं सम्पदा अर्जित की जा सकती है।

कुबेर साधना की महत्ता ऊपर लिखी विशेषताओं तक ही सीमित नहीं है।

ऐसे महिमावान यक्षराज कुबेर की सभा तो देवराज इन्द्र के लिए भी ईर्ष्या की विषय-वस्तु है। **देवराज इन्द्र के समान ही कुबेर की सभा में भी अनेक उत्तमकोटि की अप्सराएं, यक्षिणियां तथा गन्धर्व उपस्थित रहकर उसे निरन्तर मुखरित, तरंगित आह्लादित एवं मधुर लहरियों से भरा बनाए रखते ही हैं।** यक्षराज कुबेर की सभा में जिन अप्सराओं का वर्णन प्राप्त होता है उन्हें रूप-यौवन, सौन्दर्य एवं कोमलता में उर्वशी, मेनका जैसी अनिन्द्य अप्सराओं को भी परास्त करने वाला कहा गया है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण तो यह है कि यक्षराज कुबेर की सभा में, उनके प्रति प्रेम के कारण भगवान शिव भी मां भगवती पार्वती के साथ उपस्थित रहकर, उन्हें अपने आशीर्वाद

यह एक ऐसी साधना है जिसकी आवश्यकता गृहस्थों एवं व्यवसायियों दोनों के जीवन में समान रूप से बतायी गयी है। जहां लक्ष्मी साधनाओं में समाज के अलग-अलग वर्गों के लिए अलग-अलग साधना हैं, वहीं कुबेर साधना ऐसी विशेष साधना है जो समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए समान रूप से प्रमाण-सिद्ध है।

कुबेर साधना का रहस्य, कुबेर का गृह या व्यवसाय स्थल में स्थापन, कुबेर साधना से जुड़ी अन्य साधनाओं की प्राप्ति का आधार कुबेर यंत्र माना गया है। सभी यंत्रों के मध्य जिन विशिष्ट यंत्रों को **महायंत्र** की संज्ञा मिली है उनमें कुबेर यंत्र का नाम प्रमुखता से लिया गया है। **महायंत्रों की विशेषता होती है कि वे निर्माण काल में ही इस प्रकार से चैतन्य किए जाते हैं, जिससे फिर उन पर विशेष साधना की आवश्यकता शेष नहीं रह जाती।** कुबेर यंत्र का अंकन अत्यन्त जटिल कार्य है एवं उससे भी अधिक जटिल है कि इसको विशेष रूप से **केवल विजय काल** में इस प्रकार से प्राण-प्रतिष्ठित किया जाए कि यह कई-कई पीढ़ियों तक अपनी चैतन्यता न खोये। कुबेर यंत्र का निर्माण तो कोई भी कर सकता है, उसको देख कर उसकी प्रतिकृति तो कोई भी बना सकता है, लेकिन उसके विभिन्न त्रिकोणों में विभिन्न निधियों की स्थापना, विभिन्न देवी-देवताओं का स्थापन करना अत्यन्त जटिल कार्य है, और जब तक ऐसा स्थापन नहीं कर दिया जाता तब तक बाजार से प्राप्त कर कोई भी यंत्र स्थापित करना व्यर्थ ही होता है।

ऐसे विशिष्ट यंत्र को प्राप्त कर उसे प्रथम दिन की पूजा के उपरान्त अपने कोष में स्थापित कर लेना चाहिए तथा दीपावली के अतिरिक्त अन्य अवसरों पर सामान्य रूप से बाहर नहीं निकालना चाहिए। ऐसे यंत्र की स्थापना करने के उपरान्त फिर नियमित रूप से किसी साधना की आवश्यकता शेष नहीं रह जाती, **किन्तु इसी एक यंत्र पर साधक आगे चलकर कई विशिष्ट साधनाएं भी सम्पन्न कर सकता है, जिनमें से भूगर्भ साधना, नवनिधि साधना प्रमुख हैं।**

जो साधक ऐसी साधना का लाभ लेना चाहते हैं और विशेष रूप से अपनी धन-सम्पत्ति को स्थायित्व देना चाहते हैं, उनके लिए आवश्यक है कि वे उसे अपने गृह अथवा व्यवसाय स्थल में अवश्य ही स्थापित करें। व्यवसायी वर्ग के लिए तो इसे व्यवसाय स्थल पर स्थापित करना एक प्रकार से सुरक्षा कवच प्राप्त कर लेना है, क्योंकि कुबेर यंत्र की स्थापना से जहां व्यक्ति को अन्य लाभ मिलते हैं वहीं **भगवान शिव की विघ्न-विनाशक शक्ति का लाभ भी प्राप्त होता है। दुकान का न चलना, ग्राहकों का टूट जाना, किसी प्रतिद्वन्दी द्वारा व्यापार बन्ध प्रयोग करा दिया जाना, आय का घट जाना, बार-बार आकस्मिक खर्चे पैदा होते रहना,** ऐसी दुस्सह स्थितियों में कुबेर यंत्र की स्थापना जहां वरदायक प्रभाव देने वाली होती है वहीं अनिष्ट को समापन करने में भी समर्थ होती है।

साधक ऐसे यंत्र को प्राप्त कर किसी भी बुधवार की प्रातः सात बजे से पूर्व ही श्वेत वस्त्र बिछाकर चावलों की ढेरी स्थापित कर, उत्तर मुख हो, श्वेत पुष्प, सुगन्धित द्रव्य से यंत्र का पूजन कर यदि **स्फटिक माला** से निम्न मंत्र की एक माला मंत्र-जप कर लेता है तो इतना ही स्थापन के लिए पर्याप्त माना गया है।

मंत्र

।।ॐ वैश्रवणाय स्वाहा।।

इस संक्षिप्त पूजन के उपरान्त साधक इसे अपने पूजा स्थान या अधिक उचित हो कि धन रखने के स्थान पर स्थापित कर देता है तो भविष्य में उसे अन्य किसी विधि-विधान की आवश्यकता शेष नहीं रह जाती, यों साधक चाहे तो आगे भी उपरोक्त मंत्र की एक माला मंत्र-जप करता रह सकता है।

जिनका निवास ही कोष हो वे यंत्र रूप में स्थापित होने के बाद स्वतः ही कोष निर्माण की क्रिया अपने प्रभाव से प्रारम्भ कर ही देते हैं. . . यही कुबेर यंत्र स्थापन का रहस्य है। जो देवताओं को भी धन देने में समर्थ है, देवताओं के भी कोषाध्यक्ष है उनके वरदायक स्वरूप के बाद न्यूनता सम्भव भी कैसे?

यंत्र की प्रतिकृति बनायी जा सकती है, बाजार से भी कुबेर यंत्र लाकर स्थापित किया जा सकता है, किन्तु प्रत्येक कोण में देवताओं की स्थापना, नवनिधियों का आह्वान, प्रतिष्ठा, चिरस्थायीकरण और विजय काल में विशेष विधि से चैतन्यीकरण, क्या ये सब प्राप्त हो सकता है?

कलौ चण्डी विनायकौ

जगत के आदि देव, जगत के मूल सृष्टिकर्ता एवं नित्य स्वरूप भगवान गणपति ही तो हैं, जो लीला को व्यक्त करने के लिए भिन्न-भिन्न स्वरूपों में अवतरित होते ही रहते हैं। कहीं वे देवताओं के अनुरोध पर मां भगवती पार्वती के गर्भ से उत्पन्न बताये गए हैं, तो कहीं उनको मां भगवती पार्वती के शरीर की उबटन से निर्मित कहा गया है और कहीं उनको 'योग पुत्र' की संज्ञा दी गई है। उनके गजानन होने की कथा भी सर्व विदित है किन्तु वास्तविकता यही है कि वे आदि ब्रह्म हैं, ॐकार स्वरूप हैं तथा इसी कारणवश शास्त्रों में उनकी उत्पत्ति की कथाओं को प्रमुखता न देकर उनके उन स्वरूपों को वर्णित किया गया है, जिनमें वे अपने भक्तों के प्रति कृपालु व वरदायक हैं।

भगवान श्री गणपति के आठ अवतार एवं बत्तीस स्वरूप प्रमुख माने गए हैं, जो भिन्न-भिन्न युगों में युग की प्रवृत्तियों के अनुकूल ही अपनी शक्तियां लेकर अवतरित होते हैं। यों तो उनके अनन्त स्वरूप हैं और शास्त्र प्रमाण को माने तो जिस स्वरूप में भी ब्रह्म व्यक्त होते है वे 'गणपति' ही है। **भगवान श्री गणपति का तत्व-रहस्य अत्यन्त गूढ़ है।** उच्चकोटि के साधक भगवान श्री गणपति का ध्यान व पूजन केवल उनके प्रथम पूज्य होने के कारण ही नहीं अथवा विघ्न-विनाशक होने के कारण ही नहीं वरन इससे भी अधिक उनके पर-ब्रह्म स्वरूप होने के कारण करते हैं तथा, उनके उस स्वरूप को प्रणाम करते हैं जो अचिन्त्य है और जो ॐकार स्वरूप है। **गणपत्यथर्वशीर्ष उपनिषद** में वर्णित है कि भगवान श्री गणपति का ध्यान करने वाला योगी निःसन्देह उच्चकोटि का योगी होता ही है। उनके विविध स्वरूपों विविध रंगों से आलोकित स्वरूपों अथव भिन्न-भिन्न वर्णों से भ्रमित होने र्क आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह तो उनर्क लीला का विस्तार मात्र है। जवकि **योग्य साधक उनके मनोनुकूल स्वरूप का चयन करके या यों कहा जाए कि उनके विशिष्ट स्वरूप की धारणा मन में पुष्ट करते हुए साधना विशेष को करके लाभ प्राप्त करते हैं।**

उनका गजवदन स्वरूप एवं मूषक वाहन पौराणिक कथा से भी अधिक इस बात को सूचित करने वाला है कि इस मन को, जो मूषक की भांति ही चंचल है, उस पर गज के समान गाम्भीर्य रखकर ही नियन्त्रण स्थापित किया जा सकता है।

भगवान श्री गणपति के अनेक स्वरूपों में जहां महागणपति, विजय गणपति, उच्छिष्ट गणपति इत्यादि है, वहीं एक महत्वपूर्ण स्वरूप **दुर्गागणपति** का भी है जो इस तथ्य को सुस्पष्ट करता है, कि वास्तव में गणपति एवं दुर्गा का समन्वय ही साधना की पूर्णता है।

साधनाओं की चर्चा की जाए

अर्थात् कलयुग में चण्डी (दुर्गा) व गणपति की साधना ही श्रेयस्कर है। केवल इस जटिल युग-- कलयुग में ही नहीं, वरन किसी भी युग में क्या कोई साधना विघ्न-विनाशक भगवान श्री गणपति एवं शक्ति की पुञ्जीभूत स्वरूपा मां भगवती दुर्गा के बिना सम्पूर्ण हो सकती है?

क्योंकि यदि श्री गणपति किसी भी साधना के मूल हैं तो भगवती दुर्गा उसे प्रवाहमान करने वाली मूल शक्ति। इन दोनों को नमन किए बिना, इनको आधार बनाए बिना साधना जगत में प्रवेश करनां उसी प्रकार है, ज्यों गहरी नदी को बिना तैरना सीखे पार करना चाहे।

जीवन की दो अत्यावश्यक साधनाओं को संयुक्त व सरलतम ढंग से प्रस्तुत करता विशिष्ट लेख।

और दुर्गा साधना का उल्लेख न हो ऐसा सम्भव ही नहीं। दुर्गा साधना के अभाव में, शक्ति की अनुपस्थिति में कोई साधना पूर्ण हो भी कैसे सकती है? शक्ति साधनाओं की चर्चा आरम्भ होने पर स्वतः ही दस महाविद्याओं का नाम जिह्वा पर आ जाता है। किन्तु इन साधनाओं के मूल में जो साधना है **जहां से सभी साधनाएं प्रवाह ले रही है वह दुर्गा साधना ही है।** दुर्गा मां भगवती जगदम्बा का ही ऐसा स्वरूप है जो अपनी सम्पूर्णता के साथ वरदायक व तीव्र दोनों ही है। दस महाविद्या साधना जहां जीवन के एक-एक पक्ष को लेकर प्रबल है, या विशेष रूप से निर्धारित है वहीं दुर्गा समस्त महाविद्याओं के स्वरूप को बीज रूप में अपने में समाये है, सम्पूर्ण रूप से फलप्रद। **यह एक अधूरी धारणा है कि दुर्गा की साधना केवल शक्ति-साधना के रूप में की जा सकती है।** इसी धारणा का खण्डन करने के लिए पत्रिका के पिछले माह में भगवती दुर्गा के दरिद्रता विनाशक व धन दायक स्वरूप **''धनदा''** की साधना प्रकाशित

की गई, जिसका पाठकों ने लाभ प्राप्त किया। दुर्गा की साधना के विविध पक्ष हैं। सकाम भाव से भी इनकी साधना की जाती है और निष्काम भाव से भी। केवल मात्र दर्शन की लालसा रखने वाले, शक्ति का प्रगट स्वरूप देखने वाले साधकों की तो यह प्रिय साधना है ही।

प्रत्येक साधक की इच्छा रहती ही है, कि वह जीवन में एक बार मां भगवती जगदम्बा का साक्षात् अवश्य करे क्योंकि बिना जगदम्बा का साक्षात् किए, बिना शक्तिमय हुए, तंत्र के क्षेत्र में जाने की आकांक्षा व उन्नति सम्भव ही कहां? जीवन में उच्चकोटि की साधनाओं में सफल होने के लिए, उच्चकोटि का योगी या सन्यासी बनने के लिए भी शक्ति की साधना, मां भगवती जगदम्बा का साक्षात् दर्शन अनिवार्य है और **दुर्गा साधना में ही जगदम्बा साधना की सफलता का गुह्य सूत्र छुपा है।** बिना दुर्गा साधना को सिद्ध किए साधक न तो जगदम्बा का साक्षात् कर सकता है, न जीवन के दुख-दैन्य को मिटा सकता है, न किसी प्रकार से कोई भी उन्नति कर सकता है, क्योंकि जब तक उनके पास दुर्गति विनाशक दुर्गा का सहारा नहीं होगा तब तक वह उस मानसिकता में पहुंच ही नहीं पाता कि आगे की साधनाओं, जीवन की श्रेष्ठ स्थितियों के विषय में चिन्तन भी कर सके।

दरिद्रता केवल वहीं तक सीमित नहीं होती, कि व्यक्ति धन,

श्वेतार्कमूलं पुष्यार्के समुद्धृत्य विधारयेत् ।
बाहुभ्यां धारणात्तस्य तृनिष्टानि विशेषतः ।।
तद्दर्शनेन नश्यन्ति डाकिनीप्रेतदानवाः ।
तद्धूपेन पलायन्ते प्रेताद्या दूरतो ध्रुवम् ।।

(डामर तंत्र से)

केवल श्वेतार्क की जड़ में प्राप्त प्रकृति निर्मित् गणपति विग्रह ही नहीं यदि **श्वेतार्क की जड़** या उसका कोई अंश प्राप्त हो जाए तो वह भी तंत्र ग्रंथों में महत्वपूर्ण मानी गयी है। संयोग से जब कभी रवि - पुष्य नक्षत्र हो तब ऐसे श्वेतार्क की जड़ उखाड़ कर उसे बांह में धारण करने से कई प्रकार के अनिष्ट समाप्त हो जाते हैं और ऐसे व्यक्ति से डाकिनी, प्रेत, दानव दूर ही रहते हैं। ऐसे जड़ की धूप देने से घर में प्रेत - बाधा भी समाप्त होती है।

ऐश्वर्य, सौन्दर्य से हीन है वरन उसके पश्चात् इससे निर्धारित होती है कि व्यक्ति अपनी मानसिकता से जीवन में किस स्थान पर खड़ा है। यदि सब कुछ होते हुए भी उसके जीवन में सुख-सन्तोष की अनुभूति नहीं है, धन का सदुपयोग करने की चेतना नहीं है, किसी को कुछ प्रदान करने की भावना नहीं है या आगे बढ़कर उच्चकोटि की साधनाओं में सफल होने की ललक नहीं है, तो वह भी जीवन की दरिद्रता ही है कि ऐसी श्रेष्ठ साधनाएं, उनके रहस्य और सर्वोपरि पूज्यगुरुदेव का साहचर्य है फिर भी व्यक्ति अभावग्रस्त बना रहकर भाग्य का रोना रोता रहे या अभाव को लेकर बिसूरता रहे। **दूसरी ओर** दैनिक जीवन के अभाव कभी व्यक्ति को उस रूप में एकाग्र होने ही नहीं देते कि वह अपने मानस को किसी एक बिन्दु पर या किसी उच्च चिन्तन पर एकाग्र कर सके, और बिना एकाग्रता अथवा निश्चिन्तता के साधना में सफल भी नहीं हो सकते। **व्यक्ति जब तक एक बिन्दु पर खो जाने की कला नहीं जान लेता, साधना के पीछे अपने सारे अस्तित्व को नहीं भुला देता, सोते-जागते, उठते-बैठते उसी के चिन्तन में लीन नहीं रहने लगता तब तक सफल हो भी कैसे सकता है?**

प्रस्तुत साधना गणपति साधना युक्त होने के कारण इन दोनों ही प्रकार की स्थितियों का निराकरण भली-भांति करती है। जो साधक धन-अभाव के कारण या दैनिक जीवन की अड़चनों के कारण गतिशील न हो पा रहे हों या जो सभी प्रकार से सुखी, सन्तुष्ट, सम्पन्न होते हुए भी साधना के क्षेत्र में प्रारम्भिक सफलता भी न पा रहे हों, दोनों को ही आगे बढ़ने के लिए मार्ग देती है और यदि साधक इस साधना को अपने दैनिक जीवन का एक स्थायी अंग बना लेता है, तो यह निरन्तर उसके राह में आने वाले कांटों को भी दूर करती ही है।

यह साधना विशेष रूप से तीन बुधवारों की साधना है। ऐसी साधना है जिसमें **'दुर्गागणपति'** की स्थापना कर उन्हीं की साधना व मंत्र-जप किया जाता है। दुर्गागणपति का निर्माण अर्थात् दुर्गा से संयुक्त गणपति को स्वतः प्रकृति ने मनुष्य को प्रदान किया है और प्राकृतिक रूप से यह जिस विग्रह में प्राप्त होती है उसका नाम **'श्वेतार्क गणपति'** है। प्रकृति में कभी-कभी संयोगवश दुर्लभ रूप से सफेद आक के पौधे मिल जाते हैं और ऐसे दुर्लभ सैकड़ों पेड़ों में से कहीं किसी एक पेड़ में, उसकी जड़ में **स्वतः निर्मित** गणपति विग्रह प्राप्त होते हैं। प्रकृति द्वारा निर्मित होने के कारण इन्हें शक्ति सम्पन्न माना गया है, और ऐसे ही विग्रह पर यह प्रस्तुत साधना सफलता पूर्वक की जा सकती है।

ऐसे विग्रह को प्राप्त कर किसी भी बुधवार की प्रातः ताम्रपात्र में स्थापित कर उनको शुद्ध घी मिश्रित सिन्दूर से तिलक कर, लाल कनेर के पुष्प, लाल चन्दन, अक्षत एवं दूर्वादल से पूजन कर एक बड़ा घी का दीपक स्थापति करें जिसमें सुगन्धित द्रव्य की कुछ बूंदें अवश्य डाल दें। इसके पश्चात् **'रक्त स्फटिक माला'** से उपरोक्त विग्रह को दुर्गा व गणपति का साक्षात् स्वरूप मानते हुए दोनों के संयुक्त बीज मंत्र की तीन माला अथवा पांच माला मंत्र-जप करें।

मंत्र

ॐ दुं गं कार्य सिद्धये
श्वेतार्क गं दुं फट् ।।

मंत्र-जप के उपरान्त इस दुर्लभ विग्रह को अपने पूजा स्थान में स्थापित कर सकते हैं। यह तीन बुधवारों की साधना है और साधक चाहे तो नियमित रूप से प्रति बुधवार को भी सम्पन्न करते रह सकते हैं। विशेष रूप से जिनके इष्ट गणपति हों अथवा जिनकी इष्ट भगवती दुर्गा हों, उन्हें तो यह साधना नियमित करनी ही चाहिए।

''मैंने एक प्रसन्नता का अविष्कार किया और उसके आनन्द में व्यस्त था कि मैंने अपने घर के दरवाजे पर कोलाहल सुना। दरवाजा खोला तो मैंने पाया कि दो व्यक्ति आपस में लड़ रहे हैं। वे मेरी प्रसन्नता को लेकर लड़ रहे थे। उनमें से एक देव पुरुष था और दूसरा शैतान। एक का कहना था कि मेरा आनन्द पाप है, जबकि दूसरे का कहना था कि नहीं पुण्य।''

- एक प्राचीन मिस्री लोक कथा

ठीक यही स्थिति तो आज भी है। जीवन आज भी पाप एवं पुण्य के मध्य में फंसा घिसट रहा है। अंतर इस बात से नहीं पड़ता कि जीवन की शैली क्या है, वह गृहस्थ है अथवा सन्यस्त। आवश्यकता है तो मूल में विद्यमान आनन्द को समझने की।

संन्यास जयन्ती (२५.०६.९४) पर जीवन के मूलधर्म, आनन्द के सरस प्रवाह की साधना व विवेचन प्रस्तुत करता हुआ गम्भीर अध्ययन।

जीवन की दो धाराएं हैं— गृहस्थ और सन्यस्त। ये दोनों सदा समाज में समानान्तर बहती ही रही हैं और दो समानान्तर रेखाएं जिस प्रकार से एक-दूसरे का कभी अतिक्रमण नहीं करती, उसी प्रकार इन्होंने भी कभी एक-दूसरे का अतिक्रमण नहीं किया। इनका परस्पर यह अतिक्रमण न करना क्या किन्हीं दो परस्पर विपरीत स्थितियों का प्रदर्शन मानना चाहिए? क्या गृहस्थ और सन्यास दोनों एक-दूसरे के विरोधी हैं? या कहीं से इनमें कोई साम्य भी है? **यह बात प्रत्येक विचारशील पाठक को और विशेष रूप से यदि वह साधक है तो कभी न कभी उद्वेलित करती ही है और यह उद्वेलित करनी ही चाहिए** क्योंकि उद्वेलित करना ही इस बात का प्रमाण है कि व्यक्ति एक सकारात्मक चिन्तन की दिशा में अग्रसर है
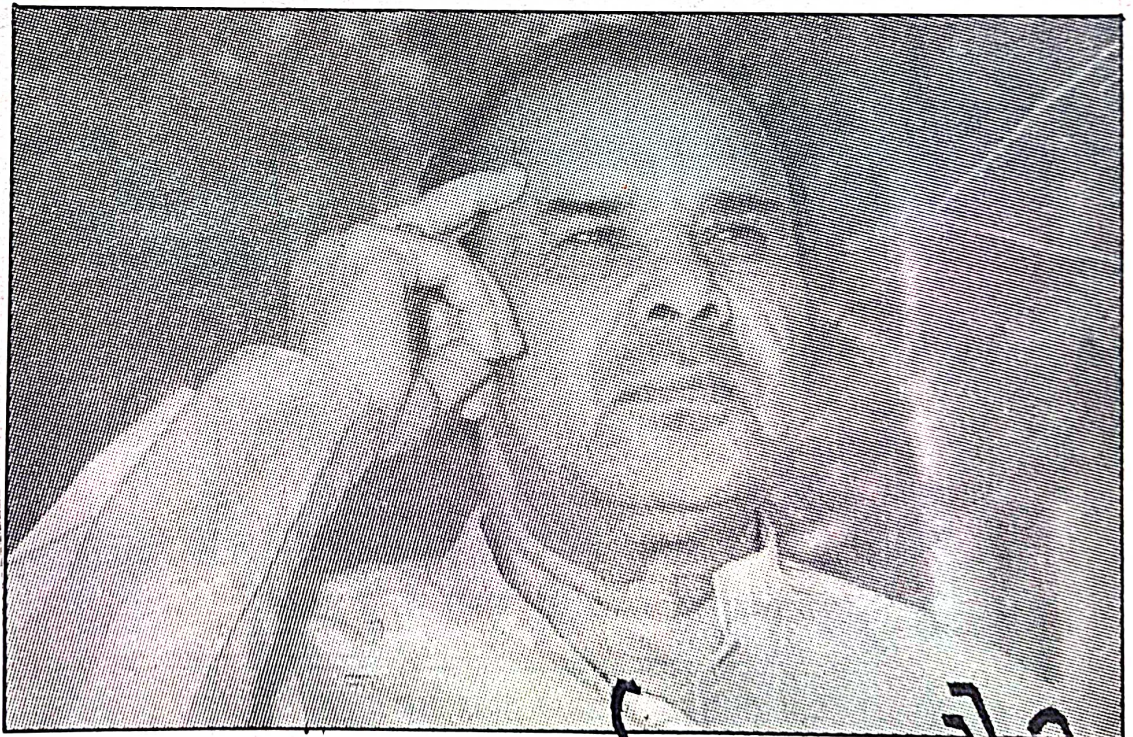
जीवन का मूलधर्म क्या है?

तथा अपने को दबोच कर, रुग्ण चिन्तनों से ग्रस्त होकर, पर्दे डालकर नहीं जी रहा, न ऐसा करने से जीवन जिया ही जा सकता।

जैसा कि प्रारम्भ में कहा कि ये जीवन की दो धाराएं हैं अर्थात् दोनों ही प्रवहित है, दोनों ही गतिशील हैं, और जब दोनों ही गतिशील हैं तो आलोचना अथवा किसी की हेयता जैसी कोई बात नहीं रह जाती। अंतर केवल इतना होता है कि जहां एक गृहस्थ के जीवन की धारा बार-बार अटकते हुए कुछ कम गति से गतिशील रहती है वहीं एक सन्यासी के जीवन की धारा तीव्रता व वेग से निरन्तर प्रवाहित रहती है या उसके विषय में धारणा की जा सकती है कि वह एक गृहस्थ की अपेक्षा अधिक तीव्रता से गतिशील रहेगी।

वेग और गतिशीलता– ये दो गुण ही वास्तव में प्रवाह के लक्षण हैं और प्रवाह की सार्थकता हैं, क्योंकि जिस प्रवाह में गति न हो, जिसमें एक लहर से दूसरी लहर लड़कर उससे बच्चों की सी धींगा-मुश्ती न कर रही हो, उसमें किलोल कैसी और निर्मलता सम्भव भी हो तो कैसे? लक्ष्य तक तो प्रत्येक प्रवाह पहुंच ही जाएगा चाहे वह धीमा हो अथवा तेज लेकिन जो प्रवाह उछलता हुआ आता है उसमें तो कुछ और ही बात होती है।

पहाड़ी नदी जब बहती हुई उछलती है तो अपने किनारे पर उगे वृक्षों, जीव-जन्तुओं सभी को भिगोती जाती है, मानों जैसे-तैसे बस अपनी ही जीवन यात्रा पूरी करने की बात ठुकरा कर चल पड़ी हो, जिसके लिए यात्रा का लक्ष्य उस अगाध समुद्र से मिलने से भी अधिक इस बात में आ समाया हो कि कैसे नर्तन करते हुए चलें, कैसे अपने किनारों पर खड़े सभी लोगों पर कुछ छींटे उछाल दें, उन्हें भिगो दें, सराबोर कर दें। फिर ऐसे ही प्रवाह को स्वीकृति देने के लिए, ऐसे ही प्रवाह के समक्ष सिर झुकाने के लिए प्रकृति भी विवश हो ही जाती है। पेड़ उसकी राह छोड़ कर ढुलक जाते हैं और चट्टानें कट जाती हैं।

संन्यास चट्टानों को लुढ़काने की ही, अटकाव साफ कर देने की ही क्रिया है। जीवन में गति लाने की ही धारणा है और यह धारणा, यह गति कोई भी व्यक्ति-चाहे वह गृहस्थ हो या विरक्त, जब तक अपने जीवन में नहीं ले आता, तब तक अपूर्ण है, और एक प्रकार से कहा जाए तो नाले के समान ही उसका जीवन गतिशील तो है किन्तु अनेक दुर्गन्धों से भरकर, पीड़ा की काई को ऊपर झलकाता हुआ, उदास और मलिन।

संन्यास गेरुए वस्त्र नहीं, संन्यास पहाड़ों की ओर प्रस्थान भी नहीं, और सन्यास गृहस्थ का त्याग भी नहीं, एक गृहस्थ जिस प्रकार से जीवन के संगीत को सुने बिना अधूरा है, उसी प्रकार कोई संन्यासी भी जीवन के संगीत से यदि वंचित है तो अधूरा है।

सुबह उठे, ऑफिस गए और वापस लौट कर अगले दिन पुनः ऑफिस जाने के लिए तो सो गए या मन पर सौ-सौ पर्दे डाल गेरुए वस्त्र पहन कर अतृप्त मानसिक दशा लेकर यदि ठूंठ की भांति मालाओं की गणना में उलझे रहे और सिद्धियों का लेखा-जोखा रखते रह गए, तो इन दोनों ही जीवनों में मौलिक भेद क्या हुआ? यह तो केवल स्थान व आवरण का भेद रहा, धारणा का तो नहीं रहा।

यदि अपने आस-पास देखें तो सैकड़ों व्यक्ति इसी प्रकार का जीवन जी ही रहे हैं। सहज आनन्द, सहज हास्य, सहज गति उनके जीवन से समाप्त हो गयी है। न उनके समक्ष कोई स्पष्ट लक्ष्य है, न उन्हें यही पता है कि **जीवन में लक्ष्य निर्धारित क्या करें।** आजीविका प्राप्ति को जीवन का चिन्तन बनाना और फिर धन-संग्रह करना जीवन का एक आवश्यक अंग तो हो सकता है किन्तु यह जीवन का ऐसा लक्ष्य नहीं हो सकता, जिससे अनिवार्य रूप से जीवन में सुख-संतोष भी मिल जाए। दूसरे के लिए कुछ करके फिर जीवन का और ऊंचा लक्ष्य सोचना, उसे जीना तो बहुत आगे की बात है।

जीवन की इसी विसंगति, गृहस्थ व संन्यस्त, दोनों ही धाराओं में प्रवाह

महत्व इस बात का नहीं कि जीवन की शैली क्या है, महत्व इस बात का है कि क्या जीवन के आनन्द का प्रवाह निरन्तर बना है? हर सुबह क्या लगती है कि कोई नयी बात लेकर आयी है?

क्योंकि यही प्राप्त करना जीवन का मूल धर्म जो है. . .

आनन्द अपने मूल में एक चेतना है न कि चमत्कार, साधना का रहस्य भी चेतना में ही छुपा है. . .

त्वष्ट्रा साधना अत्यन्त प्राचीन यजुर्वेद कालीन साधना है जो न केवल पृथ्वी के निवासियों को ही वरन आकाश एवं सभी लोकों को रूप, सौन्दर्य, आनन्द पहुंचने वाले देव के रूप में स्तुति के योग्य कहे गए हैं।

उच्चकोटि के संन्यासी अपनी प्रखरता बनाए रखने के लिए आनन्द और उत्सव में निमग्न रहने के लिए इसी प्रकार की साधनाएं तो अपनाते हैं अपने जीवन में . . .

की न्यूनता को समझ कर सिद्धाश्रम ने यह व्यवस्था दी कि जीवन में कोई न कोई ऐसी साधना या ऐसी घटना अवश्य हो जिससे साधक अपने जीवन की खोई हुई गति प्राप्त कर सके, जिससे अटकाव दूर हों और साधक तीव्र हो आगे बढ़ सकें। जीवन में जो प्रतिदिन की सुबह एक उदासी और घिसापिटा क्रम लेकर आकर खड़ी हो जाती है, वह क्रम समाप्त हो।

आनन्द अपने मूल में एक चेतना है न कि चमत्कार। आनन्द की मूल धारण चेतना में ही छुपी है। साधना का रहस्य भी चेतना में ही छुपा है। साधना के द्वारा इस शरीर के अक्षय शक्ति कोष में जिस प्रकार से विखण्डन की क्रिया आरम्भ होती है वही फिर कभी धन-सम्पत्ति का आधार बनती है, तो कभी रोग-मुक्ति का और वही आगे जाकर उस परम सुख एवं उस अनिवर्चनीय आनन्द का आधार भी बनती है। किसके भीतर यह विखण्डन किस साधना से आरम्भ हो जायेगा कुछ कहा नहीं जा सकता, लेकिन एक साधना ऐसी भी है जो सभी साधनाओं के मध्य एक अलग प्रभाव, एक अलग स्फुलिंग रखती है और वह है सिद्धाश्रम द्वारा विकसित की गयी **''त्वष्ट्रा साधना''। त्वष्ट्रा देव का उल्लेख अतिप्राचीन, ऋग्वेद कालीन है एवं इनकी विस्तृत साधना पद्धति का वर्णन यजुर्वेद में बहुतायत से आकाश, पृथ्वी व सभी लोक के निवासियों को रूप प्रदान करने वाले देव के रूप में किया गया है।**

यहां सौन्दर्य का तात्पर्य केवल दैहिक सौन्दर्य से नहीं वरन आंतरिक सौन्दर्य से है, उस चेतना के प्रवाह से है जिससे व्यक्ति के अंदर का आह्लाद छलक कर उसके चेहरे पर ओस की भांति दिख सके। भारतीय सौन्दर्य-आराधना के पीछे जो दृष्टि रही उसका तात्पर्य ही यही है कि व्यक्ति आनन्द का साक्षी बन सके, सहभागी बन सके, उसके साथ संयुक्त हो सके, सन्यस्त हो सके। **तब सन्यास और गृहस्थ दो अलग-अगल जीवन शैलियां भी नहीं रह जाती। क्योंकि सन्यास रुढ़िवादिता का विनाश ही हो तो है।**

संन्यास दिवस एक प्रकार से दैनिक और रूढ़िवादी जीवन को कुछ विश्राम देकर एक नए संकल्प का दिवस है, जिस दिन साधक दिनचर्या से अलग हटकर सोचता है कि ऐसा क्या किया जाए जो उसके जीवन को सामान्य लोगों से अलग प्रकट करे, श्रेष्ठ बनाए, वह किस प्रकार गुरु-चरणों तक पहुंचे और उनके चरणों का आश्रय लेकर इसी जीवन में वहां तक जा सके जो आनन्द की उद्‌गम भूमि, आनन्द की गंगोत्री **सिद्धाश्रम** के नाम से विभूषित है।

त्वष्ट्रा साधना वास्तव में उस वेग की ही साधना है, जिसके द्वारा जीवन में आनन्द का प्रवाह उत्पन्न हो सकता है। **यजुर्वेद** के उनतीसवें अध्याय के नवें श्लोक में स्पष्ट कहा गया है:-

त्वष्टा वीरं देवकामं जजान
त्वष्टुरर्वा जायत आशुरश्वः।
त्वष्टेदं विश्वै भुवनं जजान
बहोः कर्त्तारमिह यक्षि होतः।।

''त्वष्ट्रा देवता, देवताओं की कामना वाले, यज्ञ के करने वाले, वीर पुत्र उत्पन्न करते हैं। त्वष्ट्रा द्वारा ही शीघ्रगामी और सब दिशाओं में व्याप्त होने वाला अश्व उत्पन्न होता है। वही त्वष्ट्रा इस सम्पूर्ण विश्व का रचियता है। हे होता! इस प्रकार अनेक कर्म वाले परमात्मा का इस स्थान में यजन करो।''

त्वष्ट्रा देव की साधना - उपासना प्राचीन काल में विविध यज्ञों द्वारा एवं कई माह तक चलने वाले यज्ञों के रूप में अत्यन्त लोकप्रिय रही, किन्तु वर्तमान समय में न तो उन जटिल यज्ञ पद्धतियों का ज्ञान सुलभ रह गया न वैसे 'होता' रह गए जो तपस्या के तेज-बल से युक्त होकर यज्ञ के माध्यम से उनका आह्वान कर सकें, अपने यजमान को उनकी शक्तियों का लाभ दिला सकें। इसी कारणवश कालान्तर में विशिष्ट साधकों ने और सिद्धाश्रम के योगियों ने ज्ञान-चिन्तन द्वारा वे उपाय ढूंढे जिनके द्वारा इस साधना को पुनर्जीवित किया जा सके। यज्ञ के स्थान पर मंत्रात्मक एवं यंत्रात्मक उपाय ढूंढे गए क्योंकि

यंत्रात्मक उपाय अपनाने से, उचित यंत्र की स्थापना से, साधक के जीवन में साठ प्रतिशत से भी अधिक कार्य तो स्वतः हो ही जाता है। विशिष्ट साधकों ने अपनी प्रज्ञा से ज्ञात किया कि प्रकृति का एक अनुपम उपहार है जिसे उन्होंने **'त्वष्ट्रा'** की संज्ञा से विभूषित किया। उन्हें ज्ञान था कि जो कुछ ब्रह्माण्ड में है वह प्रकृति में भी है ही, और इसी 'त्वष्ट्रा' के द्वारा उन्होंने साधना कर यह अनुभव पाया कि इसका सम्बन्ध विशेष मंत्र से कर देने पर ठीक वही फल प्राप्त होते है, ठीक वही वेग और अश्व के समान बल प्राप्त हो जाता है, जो अन्यथा यज्ञ द्वारा प्राप्त होता था।

ऊपर त्वष्ट्रा के वर्णन में उन्हें जिस 'अश्व' का उत्पन्न करने वाला कहा गया है उसका अर्थ यही है साधक अत्यधिक बलवान एवं इतना अधिक पुष्टता से भरा हो जाता है जिस प्रकार से एक जंगली अश्व, जो अपने अद्वितीय बल के कारण किसी प्रकार से संभाला ही नहीं जा सकता।

'त्वष्ट्रा' वास्तव में जिस रूप में साधकों ने प्राप्त किया वह **श्वेत रंग की एक विशिष्ट मणि** है, जिसे स्थापित कर साधना की जाती है। यह साधना विशेष रूप से इसी संन्यास जयन्ती से ही सम्बन्ध रखती है, जिसे साधक अपनी सुविधानुसार दिन या रात्रि में कभी भी सम्पन्न कर सकता है। सिद्धाश्रम प्रणीत साधना होने के कारण और संन्यस्त साधना होने के कारण यदि साधक स्वयं भी गेरुए रंग के वस्त्र धारण कर साधना के उन क्षणों में एक संन्यासी की भांति बैठे तो वह पूर्ण क्षमता से इस साधना के तेजबल को अपने अन्दर समा सकता है। सामने किसी पात्र में **'त्वष्ट्रा'** को स्थापित कर, प्रार्थना कर, अपने शरीर में तेजबल के साथ-साथ आनन्द का उद्गम उद्‌भूत होने के लिए प्रार्थना साथ ही करें। निम्न मंत्र का जप **'स्फटिक माला'** से पांच माला करना पूर्ण सफलता दायक माना गया है।

मंत्र

ॐ ह्रीं भव त्वष्ट्रा ह्रीं फट्

मंत्र-जप के उपरान्त साधक को चाहिए कि इन दोनों सामग्रियों को श्वेत वस्त्र में बांध कर किसी पवित्र सरोवर में विसर्जित कर दे और उस आनन्द के साक्षीभूत बने, उस आनन्द से इतना अधिक सराबोर हो जाए कि वह उसके पास से स्वतः ही बिखर कर दूसरे के जीवन में भी उतर सके। उसके आनन्द से अन्य व्यक्ति भी आनन्दित हो सकें।

अपने आनन्द का इस प्रकार बिखर जाना ही, इस प्रकार दूसरे के लिए उपयोगी हो जाना ही सही अर्थों में संन्यास की मूलभावना है। ❁

(पृष्ठ ७९ का शेष)

सकता है। अपने रूचि और इच्छा के अनुरूप जीवन का मार्ग चयन करने में समर्थ हो सकता है।

इसके साथ ही साथ उपनयन संस्कार की एक विशेषता यह भी होती है कि शिशुओं को संस्कारित करने के साथ ही देश व समाज में वह सब कुछ घटित किया जा सकता है जिसकी आज आवश्यकता सर्वोपरि है। यदि वर्तमान शिशुओं एवं किशोरों को संस्कारित कर दिया गया तो आने वाला समय स्वयं संवर जायेगा ही और प्रत्येक किशोर आगे चलकर कई अन्य को संस्कारित करने की क्रिया को सम्पन्न करते हुए एक श्रेष्ठ वातावरण बनाने में सक्रिय सहयोग देगा। उपनयन संस्कार के व्यापक प्रभाव हैं स्वयं बालक के जीवन को भी उन्नतिशील बनाने में और सामूहिक रूप से भी।

इन्हीं सब परिस्थितियों पर विचार करते हुए पूज्य गुरुदेव ने यह निर्णय लिया है कि यदि इस देश में एक सशक्त और सुसंस्कारित पीढ़ी को सामने लाना है तथा प्रत्येक बालक को जीवन में उन्नतिशील बनने का अवसर देना है तो उन्हें उपनयन संस्कार द्वारा उस चेतना के सम्पर्क में लाना होगा जिसे शास्त्रों में गुरु की चेतना कहा गया है।

इस विराट कार्य के लिए गुरु पूर्णिमा के अवसर पर एक कार्यक्रम सम्पन्न किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत पांच से पन्द्रह वर्ष की आयु वर्ग के मध्य प्रत्येक बालक व बालिका को निःशुल्क रूप से उपनयन संस्कार द्वारा संस्कारित किया जायेगा। उन्हें गुरुदेव के स्पर्श व आशीर्वाद का सुअवसर दिया जायेगा, जिससे यह श्रेष्ठ संस्कार कर्मकाण्डों एवं प्रदर्शन के स्थान पर अपने मूल रूप में पुनः प्रतिष्ठित हो सके। किशोरों में ज्ञान व बुद्धि की वृद्धि के साथ ही साथ गुरु- शिष्य परम्परा को स्थापित किया जा सके।

आगामी गुरु पूर्णिमा के अवसर पर जब पूज्य गुरुदेव के समक्ष ऐसे सैकड़ों शिशु व किशोर उपस्थित होकर पूर्ण विधि- विधान से उपनयन संस्कार से संसकारित होंगे, यज्ञोपवीत के पावन बन्धन द्वारा गुरुदेव से अपने जीवन की चेतना को जोड़ेगें तथा उनके नेत्रों द्वारा प्रदत्त शक्तिपात को आत्मसात करेंगें तो ऐसा दृश्य अद्‌भुत व ऐतिहासिक होने के साथ-साथ उन बच्चों के अभिभावकों के जीवन में भी पुण्यदायक होगा क्योंकि इस प्रकार से ही उनके परिवार का बालक भविष्य में आगे बढ़कर उस स्थिति तक पहुंच सकेगा कि स्वयं के नाम के साथ - साथ परिवार व अपने माता-पिता के नाम को भी सम्मानित बना सके। जिस बालक का उपनयन संस्कार इस प्रकार से साक्षात् पूज्य गुरुदेव द्वारा सम्पन्न होगा फिर वह तो अपने मातृकुल व सम्पूर्ण पितृ कुल को भी धन्य करने वाला सिद्ध होगा ही।

द्विज व अद्विज के व्यर्थ के द्वंद्व से देश को निकाल कर यह सभी को द्विजत्व प्रदान करने की ऐतिहासिक घटना सिद्ध होगी, क्योंकि यही हमारी सनातन परम्परा रही है। ❁

ये अचूक प्रयोग

साबर मंत्रों की प्रस्तुति के क्रम में इस माह प्रस्तुत है सामान्य जीवन में आने वाली समस्याओं के ऐसे समाधान जिनके उपयोग प्रत्येक गृहस्थ साधक को अपने दैनिक जीवन में आवश्यक रहते ही हैं।

क्योंकि साबर साधनाएं विशेषतः जन-सामान्य के जीवन से ही तो जुड़ी हैं . . .

अद्भुत ही कही जा सकती है भारत के नाथ योगियों की गौरवशाली परम्परा। कुछ तीखे, कुछ हठीले, उग्र, सौम्य और तप की प्रचण्डता से भरे हुए नाथ योगी! ऐसे योगियों की धरोहर, उनके साधनात्मक जीवन का अकूत भंडार आज तक स्पष्ट करता है कि किस प्रकार से वे सर्वथा फक्कड़ और निस्पृह रहते हुए भी सभी सिद्धियों, ऐश्वर्य को अपनी मुट्ठी में बांध कर रखते थे। सही अर्थों में वे योगी थे और इस काया को ही सभी कुछ का मूल मानते थे। बिना किसी अन्य माध्यम के उन्होंने अपने अन्दर प्रवेश किया, अपने शरीर के एक-एक तथ्य को परखा और इस बात को विश्वासपूर्वक कह सके कि सभी कुछ इसी शरीर में विद्यमान है। **फिर इसका यह परिणाम रहा कि वे अपने जीवन में वह सब कुछ प्राप्त कर सके जो उन्होंने अपना लक्ष्य बनाया।** वे सही अर्थों में हठयोगी ही थे। 'हठ' का तात्पर्य नाथ सम्प्रदाय में गूढ़ अर्थ युक्त है। नाथ योगी उन गूढ़ अर्थों में भी 'हठ' युक्त थे और सामान्य अर्थों में भी हठी थे, अर्थात् जो चाहते थे, प्राप्त करके ही रहते थे।

शरीर को साध लेना उनका परम लक्ष्य था और इससे भिन्न वे किसी अन्य मोक्ष या निर्वाण की कल्पना भी नहीं करते थे। **उनकी साधना पद्धति भी इसी कारणवश व्यवहारिक अधिक रही, यद्यपि उनके लक्ष्य भौतिक नहीं थे। उनके लक्ष्य आध्यात्मिक ही थे** और इसी वहाने समाज को वहुत कुछ मिल गया। विशेष रूप से काया सम्बन्धी ज्ञान तो अद्भुत ही रहा। नाथ सम्प्रदाय के सर्वाधिक महत्वपूर्ण अग्र पुरुष **गुरु गोरखनाथ** ने अपनी 'गोरखवाणी' में इस गूढ़ ज्ञान को अत्यन्त सरल शब्दों में प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने ज्ञान को जिन रूपकों और उपगाओं में ढाला, उसके कारणवश नाथ सम्प्रदाय भी बौद्ध सम्प्रदाय की ही भांति सामान्य जन का सम्प्रदाय वना, उन्हीं की भाषा में अपनी बात रखने वाला, उनके दैनिक जीवन में सहयोगी और सहायक।

गुरु मत्स्येन्द्रनाथ जी और उनके वाद **गुरु गोरखनाथ** की परम्परा कई सदियों तक अक्षुण रही। उत्साही व प्रखर नाथ योगियों ने आगे बढ़कर साबर मंत्रों के क्षेत्र में नई-नई खोजें कीं। जीवन के इतने अधिक पक्षों को समझा, जिसको देखकर आश्चर्य होता है कि कैसे **सर्वथा एकाकी जीवन जीने वाले, कामना-रहित योगियों को गृहस्थ जीवन के विविध पक्षों को लेकर, उसमें आने वाले उतार-चढ़ाव और छोटी से छोटी बात का ज्ञान था।** इसका कारण सम्भवतः यही था कि इस पंथ में जो योगी थे वे सामान्य वर्गों से आये थे अथवा वे दैवी-प्रज्ञा सम्पन्न ऐसे युग-पुरुष थे जिन्होंने सामान्य जीवन व्यतीत किया।

ऐसे ही प्रखर योगियों में **चर्पटीनाथ जी** का नाम अत्यन्त सम्मान से लिया जाता है। चर्पटीनाथ जी को गोरख परम्परा में साक्षात् भगवान ब्रह्मा का ही पुत्र कहा गया है, जिन्होंने नाथ सम्प्रदाय के आदि गुरु, भगवान शिव के मूर्त रूप **दत्तात्रेय जी** से दीक्षा प्राप्त कर अपने जीवन को प्रकाशित किया। **चर्पटीनाथ जी के विषय में प्रसिद्ध है कि उन्होंने अपने शिष्य जीवन में ही सात करोड़ साबर मंत्रों की** रचना कर दी थी। यदि इसे एक बार असम्भव भी मान लें तब भी उनकी प्रखरता और असीम क्षमता का कुछ बोध तो होता ही है। नाथ योगियों के मध्य चर्पटीनाथ जी से सम्बन्धित लोक कथायें, गीत आज तक उसी सम्मान से गाये जाते हैं, विशेष कर उत्तर-प्रदेश के सम्पूर्ण तराई प्रदेश में। **चर्पटीनाथ जी** का स्थान पूर्वी उत्तर-प्रदेश में एक देव पुरुष और लोक देवता के रूप में सुस्थापित है। वहां के निवासियों की प्रबल मान्यता है कि यदि चर्पटीनाथ जी का स्मरण कर किसी रोगी को जल पिला दिया जाए या उसके घाव पर लगा दिया जाए तो वह उसी क्षण से स्वस्थ होने लगता है। यही नहीं वे तो अपनी दिन-प्रतिदिन की समस्याओं के लिए, छोटी से छोटी बात के लिए निश्छल भाव से चर्पटीनाथ जी का स्मरण, अपने किसी पूर्वज के रूप में, आग्रह और आत्मीयता से करते हैं एवं लाभ भी प्राप्त करते हैं।

इस अंक में हम साबर मंत्रों के उसी विशाल भंडार से चुनकर तीन प्रयोग प्रकाशित कर रहे हैं जो उस क्षेत्र के निवासियों द्वारा अनुभव सिद्ध हैं। यद्यपि स्पष्ट नहीं होता कि कौन से मंत्र स्वयं चर्पटीनाथ जी द्वारा रचित है और किन मंत्रों में उनकी परम्परा में हुए योगियों ने काल के अनुरूप परिवर्तन किए। क्योंकि साबर मंत्रों के सम्बन्धों में यह उल्लेखनीय है कि अनेक साबर मंत्र मूलतः किसी और स्वरूप में रचे गए थे, जिनमें कालान्तर में युग के अनुरूप परिवर्तन भी होते रहे।

बालरोग निवारणार्थ - रोग तो क्लेश दायक होते ही हैं, किन्तु बालरोग की समस्या और भी जटिल होती है। बाल्यकाल, जीवन में ऐसा समय होता है जब शिशु में कोई न्यूनता आ जाए, कोई विकार उत्पन्न हो जाए अथवा सभी कुछ ठीक होते हुए भी विकास भली-भांति न हो रहा हो, तब माता-पिता को समझ नहीं आता कि वे अपने शिशु के लिये क्या करें। **जब घर का शिशु ही नहीं स्वस्थ होता है तब माता-पिता के दिल भी मुरझा जाते हैं।**

अक्सर बच्चे पता नहीं कि न कारणों से सूखते चले जाते हैं और सभी उपायों के बाद भी उनमें वह खिलखिलाहट व चुलबुलाहट नहीं दिखती जो बचपन का एक आवश्यक अंग होती है। यह सामान्य दशा नहीं होती। यदि बच्चा इस तरह से सुस्त, चिड़चिड़ा और निर्बल बना रहे तो इसके पीछे शारीरिक कारणों के साथ-साथ अन्य कारण भी हो सकते हैं जैसे घर में अशुभ आत्मायें आदि . . . और बच्चा संवेदनशील होने के कारण उनसे शीघ्रता से ग्रसित हो जाता है।

साबर मंत्रों में बालरोग के लिए अनेक प्रयोग मिलते हैं, जिनसे सामान्य रूप से तो लाभ होता ही है तथा अनिष्ट का निवारण भी सम्भव होता है। ऐसे सभी प्रयोगों में बच्चे के पिता को ही साधनात्मक उपाय करना पड़ता है। **'मधुरूपेण रुद्राक्ष'** ऐसे सभी प्रयोगों में निवारण के लिए स्वयं-सिद्ध माना गया है और यदि वह विशिष्ट मंत्रों से सिद्ध हो तब तो लाभ द्विगुणित हो जाते हैं। ऐसा मंत्र सिद्ध रुद्राक्ष बालक के गले में अथवा कमर में धारण करा देना लाभदायक रहता है। साथ हीं **प्रति रविवार** बालक के पिता **हकीक माला** से निम्न मंत्र की एक माला मंत्र जप भी कर लें, यह आवश्यक है।

मंत्र

ॐ क्लीं रोगान्नशेषाय क्लीं फट्।।

२. रोजगार प्राप्ति हेतु - इस युग की सबसे जटिल समस्या बेरोजगारी ही है जिसके जाल में उलझ कर अनेक युवक न केवल अपने जीवन का उत्साह-उमंग खो देते हैं, वरन उनके सामने अपने अस्तित्व को बचाये रखने की समस्या भी आकर खड़ी हो जाती है। सभी तरह के प्रयत्न करने के बाद भी जब निराशा ही हाथ लगती है तो व्यक्ति का जीवन पर से भी विश्वास उठ जाता है। **ऐसी विकट स्थिति में जब साधक को आजीविका प्राप्ति न हो रही हो** या मनचाहा कार्य न मिल रहा हो तब यह प्रयोग एक विशेष स्थान रखता है। नाथ योगियों की भाषा में **'कुस्तड़ा'** कहा जाने वाला एक विशिष्ट यंत्र रख कर यदि साधक एक बुधवार से आरम्भ कर अगले बुधवार तक निरन्तर प्रति रात्रि में निम्नलिखित मंत्र की एक माला मंत्र जप **'मूंगे की माला'** से कर लेता है तो उसे लाभ मिलने की क्रिया आरम्भ हो जाती है।

मंत्र

ॐ श्रीं मम् कार्य सिद्धि करि करि ह्रीं फट्।।

मंत्र जप के उपरान्त साधक को चाहिए कि वह यंत्र को तो अपने शरीर पर धारण कर ले, जबकि माला को किसी पेड़ की जड़ में छोड़ आए। इन्टरव्यू या रोजगार के सम्बन्ध में बातचीत करते समय इस यंत्र को अपनी देह पर अवश्य धारण किए रहें।

३. अनायास लड़ाई-झगड़े होनाः- कई-कई बार ऐसा होता है कि व्यक्ति सीधा-शांत होते हुए भी अनायास झगड़े-झंझट में उलझने को मजबूर हो जाता है या उसके साथ अनायास मान-हानि की स्थिति बनती रहती है। अदने से अदना आदमी उसे खरी-खोटी सुना देता है और वह तिलमिलाकर रह जाता है, कुछ कर नहीं पाता। **यह तो सभ्य व्यक्ति की शिष्टता होती है कि वह ऐसी सभी स्थितियों में शांत रहता है, अपने बड़प्पन को नहीं छोड़ता, लेकिन मन को पीड़ा तो पहुंचती ही है।** ऐसा क्या किया जाए जिससे कोई हमारे स्वाभिमान को न कोई कुचल सके, कोई अनायास पीड़ा न दे। इसके लिए भी साबर साधनाओं में एक श्रेष्ठ साधना दी गई है। इस प्रकार के अपमान और कष्ट मूलरूप में 'बाधा' ही हैं, जिनका निवारण करने के उपाय के रूप में **'सर्वबाधा निवारण यंत्र'** एक अचूक यंत्र है। यह प्रयोग एक मंगलवार का है। रात्रि में अथवा प्रातः साधक अपनी इच्छानुसार किसी भी समय साधना में बैठकर यंत्र को स्थापित कर संक्षिप्त गुरु पूजन कर **'मूंगा माला'** से गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप करें तथा निम्न मंत्र की भी एक माला मंत्र-जप करें:-

मंत्र

ॐ ह्रौं हसौं ह्लीं हुं फट्।।

मंत्र-जप के उपरान्त उपरोक्त यंत्र को धागे में पिरोकर गले में अथवा बांह पर धारण कर लें। जीवन की उपरोक्त तीनों स्थितियां अपने-अपने ढंग से साधक को विचलित करने वाली अथवा उसके मार्ग में बाधा डालने वाली हो सकती हैं। इन लघु प्रयोगों के माध्यम से साधक इनका समाधान सहज ही प्राप्त कर सकता है।

साधना का वास्तविक चमत्कार जिसने उसे साधारण से असाधारण बना दिया।

आखिर यक्षिणी को. . .

“

केवल एक यक्षिणी की ही नहीं, सप्त यक्षिणीयों के सम्मिलित साधनात्मक प्रभाव की कथा। एक अत्यन्त साधारण व कुरुप साधक के सम्पूर्ण जीवन को बदल देने की सत्य घटना।

क्योंकि इस साधना का आधार शिव - शक्ति की संयुक्त साधना जो था।

”

यह घटना मध्यप्रदेश के धार जिले की है। ब्राह्मण परिवार में जन्मा बालक जीवराज बचपन में अत्यन्त सुन्दर, तेज, शिक्षा में अग्रणीय था। पिता साधारण गृहस्थी थे, जो अध्यापक की नौकरी के साथ-साथ थोड़ा बहुत पूजा पाठ कर अपनी गृहस्थी की गाड़ी चलाते थे। बालक जीवराज को अपने परिवार में जो विशेष पंडिताई का वातावरण मिला, वह धीरे-धीरे उसका शौक बन गया।

परिवार में पूजा पाठ की परम्परा कई पीढ़ियों से चली आ रही थी, और उसके पिता के पास पुस्तकों का संग्रह भी था। जब बालक जीवराज १६ वर्ष का था तो उसे चेचक का प्रकोप हुआ और इस कारण उसे बड़ी ही दारूण पीड़ा सहनी पड़ी, **जान तो बच गयी लेकिन उसके चेहरे पर चेचक के निशान पड़ गये, जिससे चेहरे की सुन्दरता एवं तेज समाप्त सा हो गया।** अब उसे अपना चेहरा भी दर्पण में देखना अच्छा नहीं लगता था। उसे अपने-आप पर घृणा एवं गुस्सा आने लगा और धीरे-धीरे एकान्तप्रिय हो गया उसने स्कूली शिक्षा छोड़ दी और फिर धीरे-धीरे दिन-रात पिता के संग्रह में पड़ी प्राचीन पुस्तकों, शास्त्रों में ही डूबा रहता।

उसकी धीरे-धीरे तंत्र, मंत्र में इतनी अधिक रूचि हो गई कि हर समय कुछ न कुछ बुदबुदता रहता। कई प्रकार की विभिन्न तांत्रिक वस्तुओं पर किसी मंदिर में अथवा गांव के बाहर एकान्त में जाकर प्रयोग करता रहता। कई बार तो वह घर में किसी को बताये बिना रात्रि में श्मशान भी चला जाता, जब ये सारे समाचार उसके पिता को ज्ञात हुए तो उन्हें बड़ी चिन्ता हुई।

तब एक दिन उसके पिता ने उसकी जन्मकुण्डली इन्दौर के ही एक ज्योतिषी को दिखाई तो वह ज्योतिषी उस कुण्डली को देखकर आश्चर्यचकित रह गया, कहा कि यह बालक तो वाक्-सिद्धि, रूप, सौन्दर्य एवं असीमित धन-धान्य का स्वामी होगा, लेकिन पिता ने कहा कि मुझे तो ऐसा कोई कारण नहीं दिखता कि यह बालक बड़ा होकर जीवन में कुछ कर सकेगा।

अपना वचन निभाना पड़ा

उन्होंने सोचा कि इसका विवाह कर ही दिया जाय, तो संभवतः जीवराज ये सारे चक्कर भूल जायेगा **लेकिन धनहीन और कुरूप व्यक्ति का कहां आसानी से विवाह हो पाता है?** फिर भी किसी तरह दूर जबलपुर के पास एक गरीब ब्राह्मण परिवार मे किसी तरह सम्बन्ध किया गया। स्त्री अत्यन्त साधारण और अशिक्षित भी थी। जीवराज ने माता-पिता की इच्छा को मानते हुए विवाह तो कर दिया, परन्तु वैवाहिक जीवन में भी उसे रोज के ताने, व्यंग बाण सुनने पड़ते। वह किससे मंत्रों के बारे में, तंत्र के बारे में चर्चा करे और कौन उसके मन की बात को समझे? **उसे मंत्र शक्ति पर पूर्ण विश्वास इसलिए था कि कई बार उसे ऐसी अनुभूतियां हुई** कि जिस कारण उसने इस दिशा में आगे विभिन्न साधनाएं प्रारम्भ कर दी थी।

रोज-रोज के झगड़े, परिवार वालों की उपेक्षा, पत्नी के व्यवहार से दुःखी होकर जीवराज नित्य सांयकाल के पश्चात् श्मशान चला जाता और आधी-आधी रात के बाद घर आता, और कभी-कभी तो पूरी रात गायब रहता। एक दिन पत्नी ने व्यंग में कहा कि तुम दिन-रात ये साधनाएं करते हो, कभी अपना चेहरा शीशे में देखा है, **क्या तुम्हारी मंत्र-शक्ति में इतना बल है कि वह तुम्हें सुन्दरता दे सके, और कुछ धन दे सके?** अन्यथा मेरा तो जीवन तुम्हारे जैसे व्यक्ति के साथ कष्टदायक, भार बन गया है।

ये वचन सुनते ही जीवराज ने उसी समय हाथ में जल लेकर पत्नी के सामने संकल्प लिया कि मैं आज से यह घर छोड़कर जा रहा हूं, और तुम्हें अपना मुंह तभी दिखाऊंगा, जब मेरा शारीरिक सौन्दर्य पुनः लौट आयेगा और साधना के बल पर इतना धन कमाकर लाऊंगा कि तुमने अपनी सात पीढ़ियों में भी न देखा होगा और न सुना होगा।

इतना कहकर जीवराज घर से निकल पड़ा। न उसके पास धन था, न कोई निश्चित मार्ग, मन में केवल एक दृढ़ संकल्प था। उसने साधना नगरी **उज्जैन** (जिसका प्राचीन नाम अवन्तिकापुरी था) का नाम सुन रखा था। शिप्रा के किनारे और आगे नर्मदा के किनारे कई सिद्ध पुरुषों, महात्माओं के आश्रम थे। वह किसी तरह भटकता-भटकता वहां पहुंचा, और **उज्जैन में महाकाल मंदिर** में बैठकर नित्य पूजा-अर्चना करने लगा।

"क्या तुम्हारी मंत्र शक्ति में इतना बल है कि वह तुम्हें सुन्दरता दे सके, धन दे सके? अन्यथा मेरा जीवन तो तुम्हारे जैसे व्यक्ति के साथ बंध कर भार बन गया है. . ."

जीवराज के हृदय में ये वाक्य तीर की भांति उतरते गये।

इस प्रकार पूजा करते-करते कई मास बीत गए, तब उसने एक दिन शपथ खाई कि यदि मेरी प्रतिज्ञा पूरी नहीं हुई तो मैं महाकाल के सामने ही अपना शीश काटकर अर्पित कर दूंगा।

जब वह आधी रात को मंदिर के प्रांगण में साधना कर रहा था तो अचानक उसे लगा कि कोई उसे पुकार रहा है, आस-पास कोई नहीं था। उसे लगा सीधे महाकाल का ही आदेश आ रहा हो। उसे सुनाई दिया कि आज से तुम्हारा नाम जीवानन्द है, तुमने मेरी जो पूजा-अर्चना की है उससे मैं प्रसन्न हूं, लेकिन तुम्हारे संकल्प में सिद्धि, कामाख्या पीठ क्षेत्र में साधना करने ही प्राप्त होगी।

कहां उज्जैन और कहां आसाम स्थित कामाख्या शक्तिपीठ, जहां सती पार्वती का गुह्यांग गिरने से यह सिद्ध शक्ति पीठ बना, लेकिन जीवानन्द को तो वहां जाना ही था।

अब तक जीवानन्द की दशा बड़ी विचित्र हो गई थी। बाल बढ़ गए थे, दाढ़ी बढ़ गई थी, शरीर बड़ा ही कृशकाय हो गया था।

सिद्धि की चाह में वह यात्रा करता-करता आखिर कामाक्षी तीर्थ पहुंच ही गया। वहां मंदिर से दूर एक पहाड़ी के ऊपर उसने शिव और शक्ति दोनों की समन्वित साधना सम्पन्न की। इस प्रकार साधना करते-करते उसे कई मास बीत गए।

नवरात्रि में एक दिन वह रात्रि को अपनी साधना कर अपनी कुटिया में सो रहा था तो आधी रात को अचानक कुछ आवाज सुनकर उसकी आंख खुल गई। देखा कि तेज संगीत बज रहा है और सामने कुछ ही दूरी पर सात नर्तकियाँ तेज गति से नृत्य कर रही है। उसे कुछ समझ में नहीं आया कि यह क्या लीला है? दूसरे दिन फिर यही क्रिया हुई, और यह नित्य का क्रम बन गया। जीवानन्द अपनी साधना भूल गया और रात्रि को उनका ही इन्तजार करने लग गया। वे जिस प्रकार अचानक आती थीं, उसी प्रकार प्रातः होने से पहले चली जाती थीं।

उसे समझ में नहीं आ रहा था कि यह विधाता का कौन सा खेल है, ये नर्तकियाँ कौन से मार्ग से आती है, और कब चली जाती है, कुछ पता नहीं चलता। सातवें दिन उसने सांयकाल अपने सामने

एक यज्ञ-वेदी बनाई और उसमें शिव का ध्यान करते हुए आहुतियां देने लगा और प्रार्थना की कि हे कामेश्वर महादेव! मैं आपका भक्त हूं, मेरा संकल्प कब पूरा होगा और यह क्या लीला है?

अचानक यज्ञ समाप्त होते ही उसे लगा कि उसके ललाट के मध्यभाग पर किसी ने मुष्टि से प्रहार किया है, और उसे एक परम तेजोमय प्रकाश दिखाई दिया। उस आत्म-साक्षात्कार, कुण्डलिनी जागरण में उसे ज्ञान मिला कि यह ही वह स्थान है और ये ही वे देवियां यक्षिणियां है, जिनके द्वारा तुम्हारे संकल्प, मनोरथ पूरे होंगे। इन्हें सिद्ध करो।

उस रात्रि को जब वे यक्षिणियां आकर अपना नृत्य करने लगीं तो जीवानन्द हिम्मत कर उनके पास पहुंच गया, और स्वयं भी उन्मत्त होकर नृत्य करने लगा। उसे कुछ ज्ञान नहीं रहा कि मैं क्या कर रहा हूं? अचानक उसने उनमें से एक का हाथ पकड़ लिया और प्रणय निवेदन करने लगा, लेकिन सभी यक्षिणियां उसी समय चली गई।

जब दूसरे दिन यक्षिणियां नहीं आई तो उसका मन नहीं लगा। उसे विचार आया कि मैं इन सातों को प्राप्त करके ही रहूंगा, और इस प्रकार उसने यक्षिणी साधना प्रारम्भ कर दीं।

इस प्रकार वह २१ दिनों तक निरन्तर सांयकाल से रात्रि भर साधना करता रहा। उसने यक्षिणी साधना के सभी नियमों का पालन किया प्रत्येक यक्षिणी का चित्र बनाया। प्रमाणिक यंत्र स्थापित किया और प्राण प्रतिष्ठा की। उसे अपने जीवन की कमियों को पूरा करना ही था।

आखिर साधना का फल मिला ही

निरन्तर इस साधना के पश्चात् २२ वें दिन जैसे ही चन्द्रमा अर्द्धरात्रि में आकाश में एकदम ऊपर पहुंचा और चारों ओर निर्मल प्रकाश फैला हुआ था कि एक साथ नूपुरों, घुंघुरुओं, ताल, मृंदग की आवाजें गूंजने लगी और उसके साथ ही वातावरण में सुगन्ध फैल गया मानो किसी ने तरह-तरह के इत्रों की वर्षा कर दी हो, और एक के बाद एक सात रूपसी सुन्दरियां आकर जीवानन्द के सामने उपस्थित हुई।

उन्होंने कहा कि तुम हमारे

सप्त यक्षिणी साधना

“. . . चारों ओर निर्मल प्रकाश फैला था, नुपूरों, घुंघुरूओं, ताल मृदंग की आवाजें गूंज उठी। वातावरण में मानों इत्र की वर्षा हो गई हो। एक के बाद एक सात रूपसियां आकर उपस्थित थीं।”

जिस साधना को सम्पन्न कर जीवराज जैसे एक सामान्य व्यक्ति ने अपने जीवन का स्वरूप ही बदल दिया। सौन्दर्य, बल, सौभाग्य सब कुछ प्राप्त कर लिया **वह सामान्य यक्षिणी साधना ही नहीं वरन् विशेष शक्ति युक्त सप्त यक्षिणी साधना थी।** जिसकी प्रेरणा साक्षात् महाकाल से मिली हो, जिसकी पूर्णता कामाख्या के सिद्ध कामपीठ पर हुई हो, उसमें किसी प्रकार की न्यूनता सम्भव भी कैसे? इसी से इस विशेष साधना को सामान्य यक्षिणी साधनाओं से अलग हट कर विशेष पद्धति से सम्पन्न किया जाता है।

इस साधना का आधार है - कामाख्या की अधिष्ठात्री देवी **‘कामाक्षी काली’,** जिनके वरदायक प्रभाव को साधना में समाहित करते हुए अपनी समस्त इच्छाओं की पूर्ति की जा सकती है। इस साधना में **कामाक्षी काली का यंत्र** को आधार बना कर जिन सात यक्षिणियों का साधना सम्पन्न की जाती हैं वे हैं— **कामेश्वरी, महामाया, सुरसुन्दरी, महाभया, विलासिनी, मनोहारी एवं माहेन्द्री।**

कायाकल्प, दिप्- दिप् करता सौन्दर्य, अचूक वशीकरण सिद्धि प्रखर पौरुष, इच्छानुसार धन और वायुगमन सिद्धि - ये हैं इन यक्षिणियों के साधना प्रत्यक्ष वर! साथ ही साधक को असीम सौन्दर्य युक्त सात यक्षिणियों की जीवन पर्यन्त जो प्रियता मिलती है उसकी तो कोई तुलना ही नहीं।

किन्तु इस प्रकार की विशिष्ट साधनाएं पन्नों पर स्पष्ट नहीं की जा सकतीं। साधक के विशेष अनुरोध पर विचार करने के उपरान्त ही उसको इस साधना से सम्बन्धित पैकेट भेजा जा सकता है, जिसे **सप्त यक्षिणी साधना पैकेट** की संज्ञा दी गई है और इसके साथ ही सप्त यक्षिणियों को सिद्ध करने के **गोपनीय मंत्र व पूर्ण प्रामाणिक साधना सामग्री केवल व्यक्तिगत रूप से ही भेजी जा सकती है।**

प्रिय हो, तुम्हारी साधना ने, प्रणय निवेदन ने हमें तुम्हारे अधीन कर लिया है। **उन सात यक्षिणियों ने अपना परिचय दिया।** प्रथम थी, कामेश्वरी, द्वितीय महामाया, तृतीय सुर सुन्दरी, चतुर्थ महाभया, पंचम विलासिनी, षष्ठम मनोहरा, सप्तम माहेन्द्री।

इन यक्षिणियों ने कहा कि हममें से प्रत्येक तुम्हार प्रणय स्वीकार कर तुम्हें उपहार देना चाहती हैं, जो सात उपहार जीवानन्द को यक्षिणियों से प्राप्त हुए थे। वे थे—

१. कायाकल्प, २. तेजामेय सौन्दर्य ३. वाक्‌सिद्धि, ४. वशीकरण सिद्धि, ५. अतुलित बल, ६. विपुलित धन और ७. अदृश्य सिद्धि।

यक्षिणियों ने कहा कि जीवन में जब भी तुम हमारा स्मरण करोगे, मंत्र से हमारा आह्वान करोगे, तब हममें से प्रत्येक तुम्हारे पास तत्काल उपस्थित होगी, चाहे तुम किसी भी स्थान पर जाकर रहो। हम यक्षिणियों को वायुगमन सिद्धि प्राप्त है, इस कारण स्थान की दूरी का हमारे लिए कोई महत्व नहीं है।

जीवानन्द ने कहा कि मैं तुम्हारे इन उपहारों को स्वीकार करता हूं, परन्तु मैं चाहता हूं कि तुम वास्तविक जीवन में मेरे साथ आकर रहो, इस पर यक्षिणियों का कहना था कि यह हमारे लिए सम्भव नहीं। हम श्रापित देवियां है, हमारा प्रणय अलौकिक है, पूर्व जीवन में तुम स्वयं देव पुरुष थे और तुम्हारे पास साधना की शक्ति थी, इस कारण हमने तुम्हारा वरण किया है, लौकिक रूप में हमारा तुम्हारा दैहिक सम्बन्ध नहीं हो सकता, लेकिन तुम्हारे भीतर जो शक्ति समाहित अब होगी, उसी कारण तुम अपने जीवन में जिस स्त्री का भी वशीकरण करना चाहोगे, वह वशीभूत होकर तुम्हारी दासी बनकर रहेगी।

इतना कहकर यक्षिणियां उसे अपने हाथ से स्पर्श करती हुई चली गई, मानों उसे स्पर्श करते हुए शक्ति के उपहार एक के बाद एक प्रदान कर रही हो, और जीवानन्द उसी मुद्रा में बैठा रहा, उसे स्पष्ट आभास हो रहा था कि उसके भीतर शरीर के अंग-प्रत्यंग में एक ऊष्मा प्रवाहित हो रही है।

प्रातः दूसरे दिन उसने नदी में स्नान करते हुए अपना चेहरा देख तो कुछ परिवर्तन लगा, **अपने मुंह पर हाथ फेरा तो मालूम पड़ा कि चेहरे के ऊपर दाग, धब्बे, गड्ढे समाप्त हो गए हैं।**

उसके बाद उसने रात्रि में फिर यक्षिणियों का इन्तजार किया लेकिन वे उपस्थित नहीं हुई, और वह निराश हो गया उसने सोचा कि शायद मैं कोई स्वप्न देखकर उठा हूं। साधना के द्वारा इतना सब कुछ कैसे सम्भव है? उसने परीक्षा लेने की सोची और जैसे ही नेत्र बन्द कर धन की इच्छा की और आंखें खोली तो सामने स्वर्ण मुद्राएं पड़ी थी। तब उसे विश्वास आया, और तभी उसे ज्ञान हुआ कि मुझे उन भगवान शंकर धन्यवाद एवं समर्पण देना चाहिए जिनकी कृपा से इस साधना में मुझे सिद्धि प्राप्त हुई।

पुनः वह अपनी यात्रा पर निकला और जहां वह जाता लोग उसके सम्मान में खड़े हो जाते **उसके चेहरे पर तेज इस प्रकार टपक रहा था मानो वह कोई देव पुरुष हो।** उसने उज्जैन में महाकाल की पुनः आराधना कर अपना धन्यवाद अर्पण किया और कहा कि मुझे जीवन में वह सब कुछ प्राप्त हो गया है जिसकी मैंने इच्छा आपके सामने व्यक्त की थी। अब मैं पुनः गृहस्थ में जाकर एक बार अपने घर, परिवार को अपनी साधना का बल बताना चाहता हूं।

जीवानन्द जब अपने गांव पहुंचा तो गांव वालों ने उसे पहचाना ही नहीं, उन्होंने समझा कि कोई राजपुरुष आया है, और गांव के लोगों ने स्वागत-सत्कार किया। जब जीवानन्द ने अपना परिचय दिया तो किसी को विश्वास न हुआ। उसने अपने माता-पिता और घर परिवार के बारे में पूछा तो सब चुपकर गए।

उसने समझा कि कुछ विशेष बात अवश्य है, अतः सीधा घर गया तो देखा कि घर की हालत अत्यन्त दारूणमय है। माता उसकी याद में रो-रो कर आंखों की दृष्टि खो बैठी थी, पिता प्रौढ़ावस्था में ही वृद्ध दिखने लग गए है, और जब उसने अपनी पत्नी के बारे में पूछा तो उसे सबसे बड़ा आघात लगा। उसे मालूम पड़ा कि उसकी अनुपस्थिति में पत्नी अन्य किसी के साथ चली गई है, और आज तक उसका कुछ पता नहीं चला।

इन सब स्थितियों को देखकर उसने अपनी साधना बल से अपने माता-पिता को धन दे दिया, उनके लिए नवीन गृह का निर्माण करा दिया, सब सुख-सुविधाओं का प्रबन्ध कर दिया लेकिन उसे सांसारिक जीवन से घृणा हो गई थी, इस कारण कुछ समय अपने ग्राम में रहने के पश्चात् पुनः अपनी साधना स्थली कामाख्या शक्ति पीठ पहुंच कर वहीं रहने लग गया।

आज भी वहां लोग याद करते है कि जीवानन्द नामक महाराज यहां रहते थे, लेकिन जब उनकी प्रसिद्धि और उनके चमत्कारों के बारे में बातें फैलने लगी तो वे वहां से कहीं चले गए और आज तक उनका कोई पता नहीं हैं। **यह घटना मुझे उनके ग्राम के ही एक निवासी से ज्ञात हुई थी।**

हे मां! बड़ी-बड़ी अंखियन वारो

गोपियों की ठिठोली और कहा - सुनी के बीच उलझते- फंसते, राह ढूंढते उनकी बड़ी-बड़ी आंखें और भी कितनी तरल हो गई थीं, कुछ और भी रंग उतर आया था उन आंखों में, प्रेम का रंग और मिलन के आस को लेकर गम्भीरता। एक-एक पल जो छूटा जा रहा था, बीता जा रहा था अपनी ही चिरसंगिनी के बिना। उसके बिना कितने बेचैन और पीड़ित हो गए थे, वहीं चिरसंगिनी जो मिली तो इसी जन्म में, लेकिन हमेशा की मिली हुई लगने लगी। एक जन्म का परिचय ही जो बीते हुए पिछले कई जन्मों का एकाएक हो गया। जो सदा मूक रही। **जिसकी आंख ने बस एक बार देखा , और उस एक बार गहरी दृष्टि से देखने के बाद फिर देखना ही न चाहा,** और देखती भी क्यों? क्या एक बार देखकर ही उनको अपने अन्दर उतार नहीं लिया था। शायद कभी मन में हुलस उठी हो कि उनको एक बार फिर से उसी दिन की तरह निहारूं, जिस तरह से पहली-पहली बार अचानक सामने आ जाने पर देखा था, लेकिन आंसुओं की जो एक पर्त आ गई थी उसने फिर देखने न दिया।

मिले तो आंखें मिलन के दर्द से भर गयीं, गए तो यादों की कसक से भर गई। मिलन और बिछोह के इन्हीं पलों के बीच, लुका-छिपी में वे कब खुद को भी बिसार बैठीं, पता नहीं। वे जो देखकर हलचल से भर जाती थीं, अब भी वे अपनी देह और मन को नहीं संभाल पा रही थीं। हुआ बस यह पहले जहां उस बिखराव के पीछे कुछ मिठास थी, वह अब कुछ उदास हो गई। बस कुछ एक पल ही उनके जीवन में उतर कर स्थायी हो गए। उनका सारा अस्तित्व उनमें ही रच-पच गया, उन्हीं पलों में। धीमे-धीमे, उन पलों में जो साथ रहे उनको, उनके न होते हुए भी अपने में ऐसा उतार लिया, उनमें इतना अधिक खो गई कि **उनके न होते हुए भी जागीं तो उनके साथ, बोलीं तो उनके साथ, खाया तो उनके साथ और सोई भी तो उनके ही साथ।** होंठो पर ताले लग गए। कौन जान सकता है कि वे कहां गुमसुम हो गयीं-पीड़ा में या प्रेम की पराकाष्ठा में।

और इसी से वे अपनी उसी एकाकी, कुछ उदास और बेहद खामोश चिरसंगिनी के पास जाने को तड़फ गए, **क्योंकि प्रेम भी तो एक मौन है।** वहां अपना ही तो 'कुछ' ऐसा है जिसे बार-बार पाने का मन ललकता है, और उसमें कुछ कहना भी कैसा, कुछ सुनना भी कैसा? मूक रहकर निहार कर क्या प्रेम नहीं होता? जिसे निहार कर राधा, 'राधा जू' बन गई, आराध्या बन गयी और कृष्ण तो अमर ही हो गए , प्रेम के प्रतीक बन गए , प्रेम के सौन्दर्य के पर्याय बन गए, जिनकी पलकों की कोर पर ऐसे प्रेम को पाकर पता नहीं कितना सौन्दर्य आकर एकत्र हो गया।

ऐसे प्रेम के उस साकार स्वरूप से कौन नहीं मिलना चाहता था? बस गोपियां ही नहीं ग्वाले, वृद्ध, वृद्धायें और यहां तक कि पशु-पक्षी भी तो व्याकुल रहते थे, उन आंखों की कोर में छुपे रंग के एक कण को चुरा लेने में। रास्ते में तेजी से आते एक-एक पेड़, एक-एक मोड़ को निहारते हुए, क्योंकि हर चप्पे से कुछ बातें जो जुड़ी थीं। अपना जीवन, छेड़छाड़ और लुका-छिपी जो जुड़ी थी। ऐसी लुका-छिपी जो दूसरे को पाने से भी अधिक खुद को ही न्यौछावर कर देने को लेकर की जाती थी। खुद को न्यौछावर कर ही तो प्रेम में फिर कुछ पाया जा सकता है। कनखियों से एक-एक पग पर धरती पर लिखी अमिट कविताओं को पढ़ते हुए, जो उनके ओठों से निकली और राधा के कानों में उतरी, उनको कुछ याद करते, कुछ भूलते उनकी पदचाप नृत्य कर उठी।

उनकी पदचाप से बस वृन्दावन की धरती को ही नहीं सारे विश्व के जीवन को संगीत मिला, प्रेम मिला, प्रेम करने की शैली मिली। **कृष्ण आदि से अन्त तक प्रेमी और**

केवल प्रेमी ही थे-अचूक प्रेमी, निश्छल प्रेमी, एकाकी प्रेमी, मूक प्रेमी, कुछ उदासी और कुछ कसक से भरे अप्रतिम प्रेमी। तभी तो राधा ने उनको अपने रोम-रोम में देखा और उन्होंने उससे भी आगे बढ़कर उन्हें प्रकृति के एक-एक कण में देखा। गीत, संगीत, काव्य, कला, परम्परा, जीवन-पद्धति और सम्पूर्ण प्रकृति कृष्ण की ऐसा प्रेम भरी दृष्टि पाकर ही तो खिल उठी। दोनों का ही प्रेम अपने-आप में पूर्ण था। दोनों ही अपने-अपने ढंग से ऐसी अलौकिकता में डूबे थे जिसकी कोई उपमा ही नहीं।

न वे लीलाधारी थे, न वंशी बजाने वाले, न माखन चोर, न रास प्रवीण और न युद्ध कुशल। वे सम्पूर्ण रूप से आंखों में समाई प्रेम की अस्मिता से सराबोर ही थे। उन्हें जीवन में प्राप्त करना, उन्हें रोम-रोम में उतार लेना अत्यन्त कठिन कार्य है, क्योंकि उनकी जो प्रेम की धारणा थी उसे समझना ही अत्यन्त कठिन है। प्रेम, जो कि प्रदर्शन नहीं है, प्रेम, जो उद्वगिन नहीं है, प्रेम- जो फूहड़ नहीं है और जो वासना तो कदापि है ही नहीं, वही प्रेम कृष्ण का प्रेम था। **प्रेम में कुछ भी तो नहीं होता, बस एक व्यञ्जना ही तो होती है, एक इशारा ही तो होता है, बेहद खामोश कि, 'मैं तेरा हूं!'** और वही प्रेम व्यक्त कर राधा उनकी और एकमात्र उनकी बन सकी। यही उच्च स्तर पर मधुरा भक्ति है।

फिर यह भी आवश्यक नहीं कि मधुरा भक्ति में राधा ही बना जाए, कृष्ण बनकर के भी इसे उतारा जा सकता है, क्योंकि कृष्ण का अर्थ ही है प्रेम, निःशर्त प्रेम और सही कहूं तो **प्रेम का पंथ पकड़ने के लिए कृष्ण बनना ही होगा।** किसी एक राधा के लिए नहीं, कृष्ण की ही भांति कण-कण में राधा को देखते हुए— ऐसी राधा के लिए, जो कृष्ण को प्रथम बार देखकर विश्वास ही नहीं कर सकी कि क्या इतना अधिक सौन्दर्य भी धरा पर उतर सकता है, क्या किसी पुरुष की आंखों में इतना अधिक प्रेम भी समा सकता है!

, ऐ सखि पेखल एक अपरूप
सुनइत मानति सपन सरूप।

ज्यों कोई स्वप्न ही आंखों के सामने तैर रहा हो! **प्रेम भी स्वप्निल आंखों से देखा गया जीवन का एक यथार्थ है,** जीवन का सौन्दर्य है। पुरुष का यह सौन्दर्य, प्रेम का यह सौन्दर्य किसी और ढंग से नहीं केवल और केवल आंखों से उतरता है, और आंखों से ही दूसरे किसी में उतारा जा सकता है, उसे अपना बनाया जा सकता है। **निहारने से ही तो प्रेम अलौकिक बन जाता है, असीम सौन्दर्यवान बन जाता है, ज्यों कृष्ण का बना, ज्यों उनकी तिरछी देखने की शैली में एक क्षण में ही कई-कई महारास हो गए,** रास तो आंखों से ही रचा जाता है। महारास, आंखों के नृत्य से ही पूरा होता है। पुरुष फिर सपन सरूप क्यों नहीं लगेगा। 'पुरुष' का अर्थ लिंग-बोधक नहीं, जो प्रेम में न्यौछावर हो सके वही 'पुरुष' है, जिसकी दृष्टि एकटक हो जाय वही 'पुरुष' है, जिसे जीवन में अपने प्रेम के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही न हो वही 'पुरुष' है, और ऐसे पुरुष ही प्रेमी बनते हैं, रासयुक्त बनते हैं महारास करना और कराना सिखा देते है।

प्रेम में लक्ष्य कुछ भी हो सकता है, प्रेम स्त्री-पुरुष सम्बन्धों तक ही सीमित नहीं है, वह तो प्रेम की सबसे मुखर अभिव्यक्ति मात्र है। प्रेम आंखों का सौन्दर्य है, एक सम्मोहिनी है जिसकी हिलोर हृदय से उठकर आंखों में हल्की नीली झील की ही तरह कुछ ठहरी और कुछ थरथराती बनी रहती है, दीपक के लौ की तरह नृत्य करती रहती है, जिसको देखकर पता नहीं कहां-कहां से कौन-कौन आकर न लिपट जाय, यह तो नेत्रों का चुम्बकत्व है। किसी को बांध लेने की कला है। जीवन की एक स्थायी घटना है।

नेत्र चुम्बकत्व दीक्षा

प्रेम का यह सौन्दर्य, नेत्रों की ही मोहिनी, देखने की बानगी- सभी कुछ व्यक्ति के अन्दर उतर सकता है, उसका जीवन संवार सकता है, ठीक उसे भगवान श्री कृष्ण की ही भांति सम्मोहक और प्रेम के रस में भीगा बना सकता है, उसकी इच्छाओं की पूर्ति करा सकता है, यदि उसे **'शक्तिपात युक्त नेत्र चुम्बकत्व दीक्षा'** प्राप्त हो जाए।

भगवान श्रीकृष्ण ने अपने शिष्य जीवन में सम्मोहन की साधना को विशेष स्थान दिया था, किन्तु सम्पूर्ण सम्मोहन ज्ञान प्राप्त करने के बाद भी वे नहीं समझ पा रहे थे कि क्यों उनके अन्दर ऐसी चकाचौंध भरी जगमगाहट उतर नहीं पा रही है, जो किसी को एक बार में ही अपना बना ले और तब उन्होंने अपने **गुरु सांदीपन** से इसका रहस्य जानना चाहा, प्रत्युत्तर में गुरु सांदीपन ने अपने तपोबल को दीक्षा में परिवर्तित कर भगवान श्रीकृष्ण को यही **नेत्र चुम्बकत्व दीक्षा** दी, जिसके पश्चात ही कृष्ण लाखों-लाखों गोपियों को अपने पीछे चलने के लिए बाध्य करने वाले अनोखी आभा से युक्त पुरुष बन सके, अपने नयनों की सम्मोहिनी से हलचल देने वाले हो सके।

जिनकी आंखें एक जादू बनकर सारे व्यक्तित्व में बोलने वाली हो गई, किसी को भी मंत्र-मुग्ध कर देने में पूर्ण सक्षम!

भुलाई नहीं

गुमसुम सी अकेली रातों में जब नर्म हवा के झोंके आकर जगा कर कह रहे हों कि चलो चांदनी का पैरहन पहन कर आसमानों में घूम आयें और पूरे दिन की तपन को एक गई-गुजरी, भूली-बिसरी बात बना दें, सितारों से घुल-मिल कर कुछ देर कुछ बातें कर लें, कुछ बातें कह दें, तब क्या कभी सोचा है कि आसमां पर बिखरे इशारों की तरह यह सितारे कैसे बने? इनकी झिलमिलाहटों में किसी के माथे पर चमकती बिन्दी जैसा कुछ कैसे कौंधने लगा, क्या ये खुद ब खुद ही बन गए?

शबे गम की तीरगी में मेरी आह के इशारे
कभी बन गए हैं आंसू कभी बन गए हैं तारे

कोई एक ही रात लेकिन जब वह रात आंसुओं, सुबकियों और यादों से भरी बेताब हो तब सितारों के राजदां बनने पर समझ में आने ही लगता है कि ये बस यों ही नहीं ढल गए, इन्हें सचमुच अश्कों ने ही ढाला है और एक-एक गम की याद में ये जीवन के खो गए लम्हें ही हैं, जो जगमगा-जगमगा कर किसी याद को वापस पास लाने के लिए ही आसमान में आवारा उड़ रहे हैं।

उड़ते हुए देखे नहीं क्या आपने लम्हे
इक रात आप भी मेरे मेहमान रहे हैं

अफसोस कि आज बताना पड़ रहा है, याद दिलाना पड़ रहा है कि आप भी तो उन लम्हों में साथ थे! उदास अकेली रातों में तब अपने-आप से बात करने के लिए यह झिलमिलाहटें ही अपनी रह जाती हैं। किसी खुसूस याद को रात की ठन्डक की ही तरह अपने अन्दर उतारते हुए . . . खामोश आहटें! लगे कि कोई सरगोशी अपने अन्दर तक उतर कर भिगो गई है, अरमानों को जगा कर सोती हुई दुनियां में अकेला मुझे ही दीदार-ए-शौक का तन्हा मुसाफिर बनाकर छोड़ गई है . . .

सोता संसार झिलमिलाते तारे
अब भीग चली है रात मुझमें आजा

रात को अपने अन्दर उतारने का बहाना या अपने अन्दर के सितारों को जगमगा लेने का बहाना! जो अपनी ही आंख में तारे की तरह कोई पलकों पर सजा हुआ था, छुपा हुआ था, उसे याद कर लेना और जब ऐसा तारा रात की खामोशियों में खिला तो मन की गुनगुनाहटें बोल ही उठीं . . .

आंख का तारा आंख में है
अब न गिनेंगे तारे हम

आंखों के तारे को जगमगाहट मिलने की बस एक रात की यादें, उस पल जो कुछ गुजर कर "लम्हे" बन गए, वे मन के आकाश में जगमगाए भी और रातरानी के फूलों की तरह महमहाये भी, वे ही आंखों से ढुलके भी क्योंकि वे लम्हें ही तो अपने हैं, अपने थे और उसके बाद जो कुछ बचा है वे तो उनसे मिले सहारे हैं, जो जीवन की रातों में सितारों की झिलमिलाहटें हैं। लेकिन जिन्दगी के ऐसे सितारों में कोई कसक, उसाँसें भी क्या नहीं छुपी होतीं—

तारों की आंखें भर आई मेरी सदा-ए-दर्द पर
उनकी निगाहें भी तेरा नाम बता कर रह गई

कुछ पल और लम्हें बेशक बहुत खिले लेकिन सितारों से ज्यादा रोशनी देते भी तो कैसे? पर उस मद्धिम रोशनी में भी लज़्ज़त-ए-जिन्दगी छुपी हुई थी और वे भी अपनी मूक निगाहों से नाम याद दिला कर, उदास होकर रात के पिछले पहर झिलमिला-झिलमिला कर सोने को मजबूर हो ही गए।

सितारे छिपे झिलमिला झिलमिला कर
तेरे जागने वाले रो रो के सोये।।

जो कभी हसरतों की आंख-मिचौली के साथी थे और मन में सुगबुगाहट पैदा करते थे, अपनी दूधिया रोशनी से कोई परदा पहना देते थे, वे ही उदासी का सामां बन गए। सौ-सौ बहाने किए उन लम्हों को याद करने के लिए, और सौ-सौ बहाने किए उनको भुलाने के लिए, और इन कोशिशों में खुद को भी भुलाएं रखने के लिए, इस दुनियां में ही एक अलग दुनियां बनाकर उसमें जी लेने के लिए, जिसका आगाज़ होता था तो रोज शाम ढले और बसर होती थी सहर होते - होते।

दिल को बारहा समझाया . . .

याद इतनी खूब नहीं मीर बाज आ
नादां! फिर वह जी से भुलाया न जाएगा

लेकिन जो आकर समाया वो भूलने-भुलाने के लिए तो आया नहीं था, वह तो चुपचाप रग-रग में घुल-मिल जाने के लिए ही आया था और अपनी अदाओं से इसको बखूबी सरअन्जाम दे भी गया, एक-एक जर्रे में समा गया, सांस-सांस में महक गया, आंखों में चमक बनकर उतर गया और दिल के झुरमुट में गूंजी बांसुरी की धुन की तरह ही रच-पच गया।

न जाने क्यों मन में फिर भी इतने करीब आकर एक गुत्थी बनी रह गई . . .

इतने करीब आके भी जाने किसलिए
कुछ अजनबी से आप कुछ अजनबी से हम

कितनी मिठास लिए एक कशिश, तड़फ और इसरार, एक तिनके भर की दूरी जो रह गई, जिसे शर्मसारी कहा जाए या अल्हड़पन की नादानी, लताफत (मृदुता) या दोशीजगी (कुंवारेपन) की अदा, पर **क्या यही ''कुछ अजनबीपन'' मुहब्बत का खामोश इजहार नहीं** और फिर यह तो है ही कि . . .

तुझको पा लेने में वो बेताब कैफियत कहां
जिन्दगी वो है जो तेरी जुस्तजू में कट गई

बड़ी मुश्किलों से एक-एक लम्हें को संजोये, एक-एक दिन मिलने की हसरतों में अजीब सी दीवानगी में काटा था। जिस तरह जीने की आदत पड़ गई थी, अकेलेपन में जिस तरह से तड़फना आदतों में शुमार हो गया, उसके बाद तो मिलकर भी हैरत ही रही। हाथों में हाथ डालकर भी लबों की खामोशी बरकरार रह गई . . .

आपका साथ है उदास हूं मैं
हाथ में हाथ उदास हूं मैं
जाने क्या हो गया मेरे दिल को
चांदनी रात है उदास हूं मैं

फिर तो जिस चांदनी को ओढ़ कर निकले थे वह भी कुछ पराई सी हो गई, उसके साथ भी शर्मसारियां जुड़ गई— वही चांदनी जो पैरहन बनी गोकि परदा बनी। पता नहीं राज खुल जाने से झिझक आ गई या किसी तीसरे का होना खटकने लगा भी या इन्तजार के लुत्फ की बातें जाती रही, पता नहीं क्या हुआ लेकिन कुछ हो जरूर गया।

इसके पहले सुबह फूटे ऐ दोस्त
बिजली की तरह हमपे टूटे ए दोस्त
उड़ते हुए लम्हात को यूं अपना लें
इक लम्हा भी हाथों से न छूटे ऐ दोस्त

यही प्रेम है! एक-एक पल को पकड़ते हुए भी कुछ सहमे रहना कि कहीं अगले पल मेरा प्रिय मुझसे बिछुड़ न जाए, मेरी आंखों में जो सितारे का नूर बनकर जगमगा रहा है, वह बुझ न जाए, ओझल न हो जाए-यही पाकीज़गी (पवित्रता) है। किसी एक रात में जगकर फ़लक पर बिखरी कुदरत की झिलमिलाहटों को देखकर भी बहुत कुछ सीखा जा सकता है, बहुत कुछ समझा जा सकता है और कोई पास हो तो समझाया भी जा सकता है, फ़लक पर बिखरे इन्हीं रंगों को अपने अन्दर उतारा जा सकता है। फ़ज़ाओं में बिखरे इन्हीं इशारों के रंग में रंगा जा सकता है। तब अपने अन्दर की झिलमिलाहटें, अपने अन्दर की चांदनी, अपने अन्दर की खूबसूरती भी उन्हीं इशारों के साथ उभर कर बाहर आ जाती है, दूसरे को भी रंगने को, किसी और को पैरहन (वस्त्र) देने को ढल जाती है . . .

इश्क दिल में रहे तो रुसवा हो
लब पे आये तो राज हो जाए

कभी यों ही इश्क को लबों पर लाकर राज बनाकर देखें, ओंठ तिरछे से होकर उन पर कोई नाम लिख लेंगे। कशिश, कसक, इन्तजार, हसरत और कुछ बेकरारी मिलकर ही तो कहानी बनती है, जीवन की कहानी, जवानी की कहानी और तब नींद भला पलकों पर आकर ठहर भी कैसे सकती है . . .

हमें भी नींद आ जायेगी हम भी सो जायेंगे
अभी कुछ बेकरारी है सितारों तुम भी सो जाओ

और इन बेकरारियों में, इन सोने और जगने के बीच में, नीमबाज आंखों से कुछ देखने और न देखने के बीच में, कभी-कभी तो जिन्दगी और मौत के बीच में, दीवानगियों में और दर हकीकत इन आवारगियों में . . .

भुलाई नहीं जा सकेंगी ये बातें
हम बहुत याद आयेंगे, याद रखना

''मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये''

अर्थात् हजारों-हजारों व्यक्तियों में से कोई एक ही साधना के लिए प्रवृत्त होता है। जीवन को पूर्णता की ओर अग्रसर करने के लिए साधनामय होना अनन्त पुण्य राशि का प्रतिफल होता है।

प्रत्येक साधक की यह इच्छा रहती है कि वह अपनी साधना में शीघ्रातिशीघ्र सफलता प्राप्त कर ले, और इस क्रम में आवश्यक सूत्र जानने के लिए वे पत्र द्वारा निरन्तर ज्ञान प्राप्त करने को आतुर रहते ही हैं। साधना के प्राथमिक चरणों को स्पष्ट करता, नए साधकों के लिए एक आवश्यक लेख . . .

वास्तव में ही वे साधक धन्य है जिन्होंने इस घोर भौतिक युग में साधना मार्ग का आश्रय लिया है। निश्चय ही वे सामान्य व्यक्तियों से 'कुछ' नहीं वरन 'बहुत कुछ' अलग हट कर हैं। उनका सौभाग्य इससे भी सहस्त्र गुणा हो जाता है कि उन्हें पूज्य गुरुदेव सदृश्य जीवन्त और चैतन्य गुरु का सान्निध्य मिला है। साधना ही जीवन की वह श्रेयस्कर तथा श्रेष्ठ विधा है जिससे जीवन में सफलताएं मिलने के साथ-साथ अद्वितीय व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

साधना के महत्व को समझने के इच्छुक, पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में आने वाले साधकों की यह कामना रही है कि उन्हें उस प्रारम्भिक प्रक्रिया का ज्ञान हो जिसे वे अपने दैनिक पूजन में सम्मिलित कर सकें।

नित्य गुरुमंत्र का जप एवं दैनिक साधना करने के पूर्व यह आवश्यक है कि साधक के पास पीला आसन, पीली धोती, पंचपात्र, गंध, अक्षत, अगरबत्ती, दीप और नैवेद्य अवश्य हो। इसके साथ ही उसके पास **ताम्र पत्र पर अंकित गुरुयंत्र, स्फटिक** अथवा **रुद्राक्ष माला** होनी नितान्त आवश्यक है। नित्य स्नान करने के उपरान्त स्वच्छ धुली धोती पहन कर ही गुरु मंत्र जप के निमित्त पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख होकर बैठें।

सर्वप्रथम बांये हाथ में जल लेकर उसे दायीं हथेली से बंद कर निम्न मंत्र पढ़ें—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वास्थां गतोऽपि वा
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं सः बाह्याभ्यन्तरः शुचिः

इस अभिमंत्रित जल को दाहिने हाथ उंगलियों से अपने सम्पूर्ण शरीर पर छिड़के जिससे आन्तरिक और बाह्य शुद्धि हो। इसके उपरान्त पंचपात्र से आचमनी द्वारा जल लेकर तीन बार निम्न मंत्रों के उच्चारण के साथ आचमन करें।

ॐ अमृतो प स्तरणमसि स्वाहा, ॐ अमृतापिधानामसि स्वाहा, ॐ सत्यं यशः श्रीमयि श्रीश्रयतां स्वाहा

तदुपरांत शिखा पर दाहिना हाथ रखकर देवी शक्ति का स्थापन करें जिससे साधना में प्रवृत्त होने के लिए आवश्यक उर्जा प्राप्त हो सके—

चिद्रूपिणी महामाये दिव्य तेजः समान्विते, तिष्ठ देवि शिखार मध्ये तेजो वृद्धिं कुरुष्व मे

इसके उपरान्त मंत्रों के द्वारा अपने सम्पूर्ण शरीर को साधना के लिए पुष्ट व सबल बनायें। इसमें प्रत्येक मंत्र के साथ

सम्बन्धित अंग पर जल का स्पर्श करें।

ॐ बाङग में आस्येस्तु	–	**मुख पर**
ॐ नसोर्मे प्राणोस्तु	–	**नासिका पुटों पर**
ॐ अंशुर्मे चक्षुस्तु	–	**नेत्रों पर**
ॐ कर्णों मे श्रोतमस्तु	–	**कर्णो पर**
ॐ बाहु मे बलमस्तु	–	**दोनों बाजुओं पर**
ॐ ऊर्वोमे आजोस्तु	–	**दोनों जंघाओं पर**
ॐ अरिष्टानि में अंगानि सर्व सन्तु	–	**सम्पूर्ण शरीर पर**

अब अपने आसन के नीचे कुंकुम या चन्दन से त्रिकोण बनाकर उसमें अक्षत चन्दन व पुष्प निम्न मंत्र बोलते हुए समर्पित करें और हाथ जोड़कर प्रार्थना करें –

ॐ पृथ्वि त्वया धृतालोका देवि त्वं विष्णुना धृता
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्

यह प्रत्येक साधना का ही प्राथमिक व संक्षिप्त विधान है जिसको अवश्य ही अपनाना चाहिए। प्रायः साधना के मध्य साधक को लघुशंका या अन्य किसी कार्यवश उठने पर जो विघ्न-दोष व्याप्त होता है उसका शमन भी इसी विधान को पुनः दोहरा लेने से समाप्त हो जाता है। इस पूजन के पश्चात् साधक गुरु मंत्र-जप, चेतना मंत्र-जप, और गायत्री मंत्र जप कर सकता है। विशिष्ट साधनाओं के पूर्व उसे दिग्बन्धन एवं भूत-शुद्धि करना भी आवश्यक रहता है। दिग्-बन्धन के अन्तर्गत् रक्षाकारक देव भैरव का पूजन कर विघ्न-विनाश की कामना की जाती है, जबकि भूत-शुद्धि के अन्तर्गत अपने शरीर को विशिष्ट ढंग से शुद्ध व निर्मल कर साधना के प्रभाव को ग्रहण करने के लिए तैयार किया जाता है।

दिग्बन्धन के लिए आवश्यक है कि साधक **भैरव यंत्र** को काले तिल पर स्थापित कर निम्न मंत्र का उच्चारण करते हुए अपने बायें हाथ में जल या चावल लेकर दाहिने हाथ से चारों दिशाओं में ऊपर और नीचे छिड़क दें –

अपक्रामन्तु ते भूता ये भूता भूमि संस्थिताः
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्
सर्वेषामविरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

पूजा आरम्भ करने के लिए भैरव से हाथ जोड़कर अनुमति की प्रार्थना करें एवं गुड़ का भोग लगाएं –

ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्त दहनोपम
भैरवाय नमस्तुभ्यम् अनुज्ञां दातुमर्हसि।।

श्रेष्ठ साधक अपनी दैनिक साधना में उपरोक्त भैरव पूजन नियमित रूप से करते हैं।

भूत - शुद्धि

दायीं नासिका पुट को बंद कर, बाईं नासिका द्वारा श्वांस लेते हुए निम्न मंत्र बोलकर ऐसी भावना करें कि मैं मूलाधार स्थित जीवात्मा को सुषुम्ना पथ से ऊपर ले जाते हुए सहस्रार स्थित परम शिव के साथ एक करता हूं। फिर बाईं नासिका द्वारा श्वांस को बाहर निकालें। इसके बाद निम्न पांच मंत्रों द्वारा क्रमशः शोधन की भावना करें।

ॐ यं संकोचशरीरं शोषय शोषय स्वाहा।

मेरे सूक्ष्म शरीर का पोषण हो।

ॐ रं संकोच शरीरं दह दह पच पच स्वाहा।

मेरा सूक्ष्म शरीर दग्ध हो।

ॐ परम शिवामृतं वर्षय वर्षय स्वाहा।

अमृत धारा प्रवाहित हो।

ॐ लं शांभवशरीरं उत्पादय उत्पादय।

शिवमय स्वरूप का प्रादुर्भाव हो।

ॐ हंसः सोहम् अवतर अवतर शिवपदात्।

मैं ब्रह्म हूं।

इस तरह भावना करें। यदि इतने विस्तार पूर्वक भूत शुद्धि न कर पायें तो **'ॐ हंसः सोहम्'** इस मंत्र द्वारा अपने-आप को निष्पाप, अमृतमय तथा चैतन्य रूप भावित करे। तदन्तर **लघु गणपति विग्रह** स्थापित कर चन्दन, धूप, दीप, पुष्प एवं नैवेद्य से संक्षिप्त गणपति पूजन भी अवश्य करें।

उपरोक्त क्रम के द्वारा साधक अपनी साधनाओं में सफलता के अत्यन्त निकट हो जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य विशिष्ट विधान भी हैं जो साधना विशेष से ही सम्बन्धित होते हैं तथा उन्हें साधना के साथ ही पत्रिका में यथास्थान स्पष्ट कर दिया जाता है। प्रायः साधकों की एक अन्य जिज्ञासा रहती है कि **जहां-जहां 'सामान्य पूजन' का उल्लेख आता है उसका क्या अर्थ होता है?** ऐसे समस्त स्थितियों में पवित्रीकरण से लेकर आसन पूजन के उपरान्त यंत्र पर कुंकुम, अक्षत एवं पुष्प चढ़ा देना ही 'सामान्य पूजन' कहा गया है किन्तु इसके उपरान्त पंचोपचार एवं षोडशोपचार पूजन भी करना श्रेष्ठ माना गया है। पंचोपचार पूजन में धूप, दीप, नैवेद्य, पुष्प और गंध का समर्पण किया जाता है। **पत्रिका के आगामी अंकों में हम इनकी पूर्ण विधि भी प्रकाशित करेंगे** जिससे साधनाओं में रुचि रखने वाले साधक, गुरु साधना को अपने जीवन में महत्वपूर्ण स्थान देने वाले विशेष साधक सभी प्रकार से लाभान्वित हो सकें। ❁

अहोभाव

हमारे पाठक प्रायः अपने पत्रों में पूज्यपाद गुरुदेव के प्रति अपनी मनोभावनाएं व्यक्त करने के क्रम में कोई लघु कविता या काव्यात्मक विवरण भेजते ही रहते हैं। *उनकी इसी प्रतिभा को हमने एक दिशा देने का प्रयास किया है "अहोभाव" के माध्यम से, क्योंकि यह शिष्य या पाठक का अहोभाव ही तो है. . .*

आपको पूज्यपाद गुरुदेव के प्रस्तुत चित्र के आधार पर अपनी भावनाएं काव्य की चार पंक्तियों में भेजनी है और पुरस्कार से भी अधिक आशीर्वाद स्वरूप में **प्रथम** आने पर **एस सीरीज** की छः पुस्तकों का सेट, **द्वितीय** स्तर पर तीन पुस्तकें अथवा **तृतीय** पुरस्कार के रूप में एक पुस्तक का पात्र भी बन जाता है। रचना मौलिक एवं अप्रकाशित तथा अप्रचारित होने का दायित्व आप को प्रविष्टि के साथ एक पन्ने पर घोषित करना होगा।

अपनी प्रविष्टि इस प्रकार प्रेषित करें --

सम्पर्क : अहोभाव (२५), गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, नई दिल्ली-३४,फोन-०११-७१८२२४८

परिणाम : अहोभाव (२३)

माह **मार्च** के अंक में प्रकाशित **अहोभाव(प्रविष्टि संख्या २३)** के प्रति पाठकों का उत्साह प्रशंसा योग्य रहा अनेक पाठकों ने अपनी मनोभावनाएं अत्यन्त सुन्दर शब्दों में छन्द बद्ध कर हमें प्रेषित की। भावनाओं की दृष्टि से किसी भी पाठक की रचना किसी दूसरे से कम नहीं थी किन्तु शैली, काव्य, कला और शब्दों के उचित चयन के आधार पर जिन्हें सम्पादक मण्डल ने पुरस्कार योग्य घोषित किया उनके नाम हैं –

प्रथम पुरस्कार

गुरु वशिष्ठ से गुण हैं जिसमें, सकल विश्व का ज्ञान।
जिनके वचनामृत सुन-सुनकर सभी शिष्य अब बने महान।।
यंत्र मंत्र और तंत्र का जिसने किया नया सन्धान।
उनकी अमृत वाणी सुनकर नत-मस्तक है अब विज्ञान।।

के.के. चावरे(शिक्षक)
शा.मा.शाला, धारना,सिंवनी (म.प्र.)

द्वितीय पुरस्कार

सुनने के बाद गुरुवाणी कान पवित्र हो जाय,
सान्निध्य पाने के बाद सद्गुरु जी जीवन सफल हो जाय।
जन्म जन्मान्तर भटकते हुए आ गए हम,
सद्गुरु की दर्शन के लिए तरसते रहे हैं हम।।

सूरज बाबू न्यौपाने, आन्तरिक व्यवस्था शाखा
गृह मन्त्रालय, सिंह दरबार, काठमाण्डू,नेपाल

तृतीय पुरस्कार : श्री सुधाकर कौशिक, परशुराम भुवन, ६ वां माला, जुनी डोम्बिवली(वेस्ट), थाना, महाराष्ट्र

समस्त विजेताओं के पुरस्कार प्रेषित किए जा रहे हैं।

पूर्ण गृहस्थ सुख साबर प्रयोग

यदि प्रेमी-प्रेमिका परस्पर विवाह करने के इच्छुक हों और दोनों की रजामंदी हो परन्तु किसी वजह से लड़की के घर वाले या लड़के के घर वाले रजामन्द न हो तो यह प्रयोग महत्वपूर्ण है, और ऐसा प्रयोग करने पर घर वालों के मन बदल जाते हैं तथा वे विवाह के लिए हां कर देते हैं। यह प्रयोग प्रेमी या प्रेमिका में किसी एक को करना चाहिए। शुक्रवार के दिन प्रातः स्नान कर पूर्व की ओर मुंह कर बैठ जाएं और सामने **दो मुट्ठी सरसों** तथा **दो गोमती चक्र** रख दें एवं **हकीक माला** से निम्न मंत्र की एक माला मंत्र जप करें -

मंत्र

बिस्मिल्ला मेहमंद पीर आवे घोड़े की सवारी पवन को वेग मन को सम्भाले अनुकूल बनावे हां भरे कहियो करे मेहमंद पीर की दुहाई सबद साचा पिण्ड काचा फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।

मंत्र जप के बाद दो पुड़िया बनाये। एक पुड़िया में एक मुट्ठी सरसों तथा एक गोमती चक्र एवं दूसरी पुड़िया में भी ऐसे ही बांध कर एक पुड़िया अपने घर में डाल दे तथा दूसरी पुड़िया दूसरे के घर में डाल दें तो शीघ्र ही लाभ होता है। यह प्रयोग अत्यन्त तीव्र और महत्वपूर्ण है।

तांत्रोक्त गुरु साधना

प्रत्येक साधना का मूल आधार गुरुदेव ही होते हैं और विशिष्ट सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक हो जाता है कि साधक अपने जीवन में तांत्रोक्त गुरु पूजन को स्थान दे। योग्य साधक माह में कम से कम एक बार पूर्ण विधि विधान से तांत्रोक्त गुरु पूजन अवश्य सम्पन्न करते ही हैं।

विभिन्न पद्धतियों में तांत्रोक्त गुरु पूजन की मूल विधि कौन सी है, इसकी जिज्ञासा हमारे नवीन पाठकों को बनी रहती थी। इसी कारणवश इस महत्वपूर्ण लेख को उनकी सुविधा के लिए प्रकाशित किया जा रहा है।

तन्त्र साधनाओं में गुरु को आधार माना गया है, गुरु ही शिष्य को तन्त्र का पूरा ज्ञान करा सकते हैं, उसका प्रायोगिक ज्ञान दे सकते हैं, जिससे शिष्य अपने मार्ग में कहीं भटक न जाए और लाभ के स्थान पर अपनी हानि नहीं कर बैठें।

अतः तन्त्र साधना में इच्छुक साधक को कम से कम महीने में एक बार अपने स्थान पर गुरु देव का तान्त्रोक्त पूजन अवश्य करना चाहिए। चूंकि यह साधना तन्त्र की है अतः पूजन भी पूर्ण तांत्रोक्त विधि से सम्पन्न होना चाहिए।

समस्त साधनाओं का प्रारम्भ और समापन गुरु से ही होता है, भारतवर्ष ही नहीं अपितु विश्व के सभी मार्गों एवं सम्प्रदायों में गुरु का पद सर्वोच्च रूप से स्वीकार किया गया है, यों तो सभी ग्रन्थों में गुरु को प्रमुखता दी गई है, परन्तु तन्त्र में तो गुरु को समस्त महाविद्या साधनाओं एवं अन्य देव-साधनाओं से भी ऊपर उठकर सर्वोच्चता प्रदान की गई है, उन्हें भगवान शिव का साक्षात् स्वरूप माना गया है।

ॐ संविद्रूपाय शान्ताय शम्भवे सर्वसाक्षिणे।
सोमनाथाय महते शिवाय गुरुवे नमः।।

''यामल तंत्र'' में गुरु, देवता और मन्त्र में कोई भेद नहीं माना गया है।

गुरुरेकः शिवः प्रोक्तः सोऽहं देवि न संशयः। गुरुत्वमपि देवेशि! मन्त्रोऽपि गुरुरुच्यते।। अतो मन्त्रे गुरौ देवे, न हि भेदः प्रजायते।।

देवता-गुरु मन्त्राणामैक्यं, सम्भावयन् धिया।
तदा सिद्धा भवेन्मन्त्राः।।

''मुण्ड माला तन्त्र'' में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि जो साधक गुरु, देवता और मंत्र में भेद नहीं समझता तथा इन तीनों को परस्पर एक दूसरे का पूरक समझता है वही जीवन में पूर्ण सिद्ध साधक बन सकता है।

मन्त्रे वा गुरु-देवे वा न भेदं यस्तु कल्पते।
तस्य तुष्टा जगद्धात्री, किन्न दद्याद् दिने-दिने।।

भगवान शिव ने स्वयं कहा है, कि 'हे देवि! गुरु ही एक मात्र शिव कहे गये हैं और मैं वही हूं, इसमें कोई सन्देह नहीं, तुम जगत जननी अम्बिका स्वरूपा हो और तुम भी गुरु, मन्त्र और दुर्गा हो, अतः मन्त्र, गुरु और देवता में कोई भेद नहीं होता, इन तीनों की एकता भावना, बुद्धि द्वारा करते रहने से ही मन्त्र सिद्ध होता है, जो साधक मन्त्र, गुरु और देवता में कोई भेद नहीं करता, उस पर जगदम्बा प्रसन्न होकर सब कुछ दे देती है।''

यही नहीं अपितु **''सुन्दरी तापिनी तांत्रिक ग्रन्थ''** में स्पष्ट कहा गया है—

यथा घटश्च कलशः कुम्भश्चैकार्थ-वाचकाः।
तथा देवे मन्त्रो च गुरुश्चैकार्थ-वाचकाः।।

अर्थात् जिस प्रकार घट, कलश और कुम्भ तीनों का एक ही अर्थ होता है, उसी प्रकार मन्त्र देवता और गुरु तीनों एक ही अर्थ वाले हैं।

कुण्डलिनी के मूलाधारादि षटचक्रों में सर्वोपरि स्थान श्री गुरुदेव का ही नियत किया गया है, अधोमुख सहस्रदल-पद्म-कर्णिकान्तर्गत मृणाल रूपी चित्रिणी नाड़ी से भूषित गुरु मन्त्रात्मक द्वादश-वर्ण (ह स ख फ्रें ह स क्ष म ल व र य)

रूपी द्वादश दल पद्म में अ- क- थ आदि त्रिरेखा और ह- ल- क्ष कोण से भूषित कामकला, त्रिकोण में नाद बिन्दु रूपी मणि पीठ अथवा हंस-पीठ पर शिव स्वरूप श्री गुरुदेव का स्थान है।

''पादुका तन्त्र'' में गुरु को शिव और शक्ति का समन्वित स्वरूप माना है, और गुरु का ध्यान इस प्रकार बताया गया है –

''निज-शिरसि श्वेत-वर्ण सहस्र - दल-कमल - कर्णिकान्तर्गत - चन्द्रमण्डलोपरि स्व-गुरुं शुक्ल-वर्ण शुक्लालंकार -भूषितं ज्ञानानन्द-मुदित-मानसं सच्चिदानन्द विग्रहं चतुर्भुज ज्ञान-मुद्रा-पुस्तक-वराभय-कर त्रिनयनं प्रसन्नं-वदनेक्षणं सर्व देव-देवं वामांग वाम-हस्त-धृत-लीला कमलया रक्त-वसना-भरणया स्व-प्रियया दक्ष-भुजेनालिंगतं परम-शिव-स्वरूपं शान्तं सुप्रसन्नं ध्यात्वा तच्चरण-कमल-युगल-विगलदमृत-धारया स्वात्मानं प्लुतं विभाव्य मानसोपचारैराराध्य''।

जो साधना में पूर्णता चाहते हैं , जो सही अर्थों में सिद्ध योगी बनने की इच्छा रखते हैं, जो सम्पूर्ण प्रकृति को अपने अनुकूल बनाने की भावना रखते हैं, उनके लिए तंत्र मार्ग ही श्रेष्ठ है, और तंत्र में गुरु पूजा अत्यावश्यक मानी गई है।

''काली विलास तन्त्र'' में स्पष्ट रूप से बताया गया है–

गुरु-पूजां विना देवि, स्वेष्ट-पूजां करोति यः।
मन्त्रस्य तस्य तेजांसि हरते भैरवः स्वयम्।।
पूजा-काले च चार्वंगि! आगच्छेच्छिष्यमन्दिरम्।
गुरुर्वा गुरुपुत्रो वा पत्नी वा वर-वर्णिनि।।
तदा पूजां परित्यज्य पूजयेत् स्वगुरुं प्रिये।
देवता-पूजनार्थं यद् गन्ध-पुष्पादिकं च यत्।।
तत्सर्वं गुरुवे दद्यात् पूजयेन्नग-नन्दिनि।
तदैव सहसा देवि! देवता - प्रीतिमाप्नुयात्।।

अर्थात् हे देवी! जो बिना गुरु पूजा किये अपने इष्ट या देवता का पूजन करता है, उसके मन्त्र का तेज भैरव हर लेते हैं, हे प्रिये! यदि इष्ट पूजन के समय में भी श्री गुरुदेव, गुरु-पुत्र या गुरु-पत्नी शिष्य के घर आ जाए तो तत्काल इष्ट पूजन अथवा साधना क्रम उसी क्षण बीच में ही छोड़ कर गुरुदेव की पूजा करें, देवता की पूजा के लिए जो भी सामग्री शास्त्रों में बताई गयी है, उसी से गुरुदेव की पूजा करनी चाहिए और ऐसा करने पर ही इष्ट एवं देवता प्रसन्न होते हैं।

इस साधना में आगे जो सामग्री का विवरण आता है, उसकी व्यवस्था साधक पहले कर लें जल पात्र, गंगाजल, चन्दन, कुंकुंम, केशर, अष्टगन्ध, अक्षत पुष्प, विल्व पत्र, दीप मुख्य हैं। गुरु पूजा में अपने पूजा स्थान में हर समय गुरु चित्र अथवा मूर्ति अवश्य स्थापित करें, पूजा में **गुरु यन्त्र, षट्चक्र कुण्डलिनी जागरण यन्त्र, पच्चीस गुरु प्रसाद फल** आवश्यक है, इनकी व्यवस्था भी कर लें।

तान्त्रोक्त विधि सबसे महत्वपूर्ण एवं एक विशेष क्रम से की जाने वाली विधि है, इस विधि में किसी प्रकार की सूक्ष्मता नहीं की जा सकती, पूर्ण शास्त्रीय विधान आवश्यक है, सर्वप्रथम अपने सामने पूजा स्थान में एक अलग खण्ड बना लेना चाहिए जिसमें गुरु पूजा की सभी सामग्री रखी जा सके। इस विशेष तांत्रोक्त सामग्री का बार - बार स्थान बदला नहीं जाना चाहिए।

इस विशेष स्थान, जो विशेष ताक (आला या खण्ड) हो सकता है, पूरे स्थान पर पीला वस्त्र बिछा दे इसकी दीवारों पर पीला वस्त्र अथवा कागज लगा दें, साधक - साधिका के वस्त्र भी पीले हों, पूर्व दिशा को मुंह कर सम्पूर्ण पूजन करना है।

सर्वप्रथम तांत्रोक्त गुरु यन्त्र स्थापित करें, गुरु चित्र फ्रेंम में मढ़वाकर लगा दे, गुरु के आगे षट्चक्र कुण्डलिनी जागरण यन्त्र स्थापित करें, इस यन्त्र के नीचे अष्ट गन्ध से अपना नाम अवश्य लिख दें, अब गुरु ध्यान कर जिस क्रम में मन्त्र और सामग्री दी गई हैं, उसी क्रम में पूजा करें।

गुरु ध्यान -

द्विदल कमल मध्ये बद्धसंवित्समुद्रं।
धृतशिवमयगात्रं साधकानुग्रहार्थम्।।
श्रुतिशिरसिविभान्तं बोधमार्तण्डमूर्तिं।
शमिततिमिरशोकं श्रीगुरुं भावयामि।।
हृदंबुजे-कर्णिकमध्यसंस्थं सिंहासने संस्थितदिव्यमूर्तिं।
ध्यायेद्गुरुं चन्द्रशिलाप्रकाशं चित्पुस्तकाभीष्टवरंदधानम्।।

आह्वान -

ॐ स्वरूपनिरूपण हेतवे श्री गुरवे नमः।
ॐ स्वच्छप्रकाश-विमर्श-हेतवे श्रीपरमगुरवे नमः।
ॐ स्वात्माराम पंजरविलीन-तेजसे श्री परमेष्टि गुरवे नमः, आह्वायामि पूजयामि।।

षोडशी क्रम के अनुसार आह्वान के बाद गुरुदेव को अपने शरीर के षट्चक्रों में स्थापित करें।

श्री शिवानन्दनाथ परा-शक्त्यम्वा मूलाधारे स्थापयामि
श्री सदाशिवानन्दनाथ चिच्छक्त्यम्वा स्वाधिष्ठान चक्रे स्थापयामि।
श्री ईश्वरानन्दनाथ आनन्द शक्त्यम्बा मणिपुर चक्रे स्थापयामि
श्री विष्णु-देवानन्दनाथ ज्ञान-शक्त्यम्बा विशुद्ध चक्रे स्थापयामि
श्री ब्रह्म-देवानन्दनाथ क्रिया-शक्त्यम्बा सहस्रार चक्रे स्थापयामि

चन्दन अक्षत -

निम्न नौ **'सिद्धौध'** का उच्चारण करते हुए, गुरु के चरणों पर चन्दन, अक्षत समर्पित करें –

ॐ उन्मनाकाशानन्दनाथ-जलं समर्पयामि
श्री समनाकाशानंदनाथ-गंगाजलं स्नानं समर्पयामि

व्यापकानन्दनाथ-सिद्धयोगा जलं समर्पयामि
शक्त्याकाशानन्दनाथ-चन्दनं समर्पयामि
ध्वन्याकाशानन्दनाथ-कुंकुमं समर्पयामि
ध्वनिमात्राकाशानन्दनाथ-केशरं समर्पयामि
अनाहतकाशानन्दनाथ-अष्टगन्धं समर्पयामि
विन्द्वाकाशानन्दनाथ-अक्षतं समर्पयामि
द्वन्द्वाकाशानन्दनाथ-सर्वोपचारार्थे समर्पयामि

पुष्प-बिल्व पत्र -

अब गुरु यन्त्र, गुरु चित्र एवं षट्चक्र जागरण यन्त्र पर पुष्प पर एवं बिल्व पत्र अर्पित करें—

दीप -

श्री महादर्पनाम्बा सिद्ध ज्योतिः समर्पयामि
श्री सुन्दर्यम्बा सिद्ध प्रकाशं समर्पयामि
श्री करालाम्बिका सिद्ध दीपं समर्पयामि
श्री त्रिबाणाम्बा सिद्ध ज्ञान दीपं समर्पयामि
श्री भीमाम्बा सिद्ध हृदय दीपं समर्पयामि
श्री कराल्याम्बा सिद्ध सिद्ध दीपं समर्पयामि
श्री खराननाम्बा सिद्ध तिमिरनाश दीपं समर्पयामि
श्री विधीशालीनाम्बा दीपं समर्पयामि
श्री सोममण्डल नीराजनं समर्पयामि

नीराजन -

इसके बाद ताम्र पात्र में जल, कुंकुम, अक्षत एवं पुष्प लेकर गुरु चरणों में समर्पित करें —

श्री सूर्यमण्डल नीराजनं समर्पयामि
श्री अग्निमण्डल नीराजनं समर्पयामि
श्री ज्ञानमण्डल नीराजनं समर्पयामि
श्री ब्रह्ममण्डल नीराजनं समर्पयामि

तत्पश्चात् अपने दोनों हाथों में पुष्प लेकर निम्न **'पंच पंचिका'** उच्चारण करते हुए इन दिव्य महाविधाओं की प्राप्ति के लिए प्रार्थना करें —

१. पंच लक्ष्म्य :- १. श्री विद्या-लक्ष्म्यम्वा, २. श्री एकाक्षर-लक्ष्मी लक्ष्म्यम्वा, ३. श्री महालक्ष्मी-लक्ष्म्यम्वा, ४. श्री त्रिशक्ति-लक्ष्मी-लक्ष्म्यम्वा, ५. श्री सर्वसाम्राज्य-लक्ष्मी लक्ष्म्यम्बा।

२. पंच कोश :- १. श्री विद्या-कोशाम्वा, २. श्री पर-ज्योति-कोशाम्वा, ३. श्री परि-निष्फल-शाम्भवी-कोशाम्वा, ४. श्री अजपा-कोशाम्वा, ५. श्री मातृका कोशाम्वा।

३. पंच कल्पलता :- १. श्री विद्या कल्पलताम्वा, २. श्री त्वरिता कल्पलताम्वा, ३. श्री पारि-जातेश्वरी कल्पलताम्वा, ४. श्री त्रिपुटा कल्पलताम्वा, ५. श्री पंचवाणेश्वरी- कल्पलताम्वा।

४. पंच कामदुधा :- १. श्री विद्या-कामदुधाम्वा, २. श्री अमृतपीठेश्वरी कामदुधाम्वा, ३. श्री सुधांशु कामदुधाम्वा, ४. श्री अमृतेश्वरि-कामदुधाम्वा, ५. श्री अन्नपूर्णा कामदुधाम्वा।

५. पंच रत्नविद्या :- १. श्री विद्या-रत्नाम्वा, २. श्री सिद्धलक्ष्मी-रत्नाम्वा, ३. श्री मातंगेश्वरी रत्नाम्वा, ४. श्री भुवनेश्वरी रत्नाम्वा, ५. श्री वाराही रत्नाम्वा।

*उपरोक्त **"पंच-पंचिका"** विश्व की श्रेष्ठ साधनाएं हैं और इन साधनाओं की प्राप्ति के लिए ही गुरुदेव से प्रार्थना की जाती है इसमें प्रत्येक साधना का उच्चारण कर **"प्राप्तिं प्रार्थयेत्"** बोलना चाहिए, उदाहरण के लिए **"पंच लक्ष्म्य"** में पहली साधना **"श्री विद्या लक्ष्म्यम्बा प्राप्तिं प्रार्थयेत्"** उच्चारण करना चाहिए, इसी प्रकार से अन्य स्थान पर भी उच्चारण करते हुए हर बार 'गुरु प्रसाद फल' अर्पित करना आवश्यक है।*

श्री मन्मालिनी -

तदुपरांत तीन बार श्री मन्मालिनी का उच्चारण करना चाहिए, जिससे कि गुरुदेव की शक्ति, तेज और सम्पूर्ण साधनाएं पूर्णता के साथ प्राप्त हो सके।

ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंसः सोऽहं गुरुदेवाय नमः।

अन्त में हाथ जोड़कर गुरुदेव की प्रार्थना स्तुति करें—

लोक-वीरं महत्पूज्यं, सर्व-रक्षा-करं विभुम्।
शिष्य-हृदयानन्दं, शास्तारं प्रणमाम्यहम्।।
प्रि-पूज्यं विश्व-वन्द्यं विष्णु-शम्भोः प्रियं सुतम्।
क्षिप्र-प्रसाद-निरतं, शास्तारं प्रणमाम्यहम्।।
मत्त-मातंग-गमनं कारुण्यामृत-पूरितम्।
सर्व-विघ्न-हरं देवं, शास्तारं प्रणमाम्यहम्।।
अस्मत्-कुलेश्वरं देवं, अस्मच्छत्रु-विनाशनम्।
अस्मादिष्ट-प्रदातारं शास्तारं प्रणमाम्यहम्।।
यस्य धन्वन्तरिर्माता, पिता रुद्रो भिषक्-तमः।
तं शास्तारमहं वन्दे, महा-वैद्यं दया-निधिम्।।

सम्पूर्ण पूजन के पश्चात् गुरु आरती सम्पन्न करें और समर्पण करें, कि "हे गुरुदेव! ये सब पूजन आपको ही समर्पित है अपनी कृपा बनाये रखें।"

श्री शनि प्रयोग

नौ ग्रहों में शनि अत्यन्त क्रूर और विध्वंसक ग्रह माना गया है। यदि शनि जीवन में अनुकूल हो जाए, तो कंगाल व्यक्ति को भी लखपति बना देता है, और शनि यदि जीवन में विपरीत प्रभाव डालने लगे, तो व्यक्ति की धन-सम्पत्ति और ऐश्वर्य को मटियामेट भी कर डालता है।

यह जरूरी नहीं है, कि यदि शनि की दशा चल रही हो तभी शनि का प्रयोग करें, या शनि की साढ़ेसाती चल रही हो अथवा जन्म-कुण्डली में शनि विपरीत अवस्था में हो तभी शनि की पूजा करें। ऐसी कोई बात नहीं है।

शास्त्रों में कहा गया है कि, न मालूम कब शनि नुकसान पहुंचा दे, इसलिए साधक को चाहिए कि वह प्रत्येक शनिवार को निम्न प्रयोग सम्पन्न करे, यह प्रयोग **शनि जयन्ती** से ही प्रारम्भ किया जाना चाहिए, पर यदि यह सम्भव न हो तो किसी भी शनिवार से यह प्रयोग प्रारम्भ कर सकते हैं, और पूरे वर्ष भर प्रत्येक शनिवार को इस साधना के लिए दस मिनट देने चाहिए, क्योंकि इस साधना में दस-पन्द्रह मिनट ही लगते हैं।

जिन्हें संस्कृत का ज्ञान हो तो वे संस्कृत उच्चारण करें, और यदि संस्कृत का ज्ञान नहीं हो तो हिन्दी का उच्चारण करें।

साधना प्रयोग

साधक **शनि जयन्ती ०६.०६.६४** के दिन या किसी भी शनिवार को प्रातःकाल स्नान कर अपने पूजा स्थान में बैठ जाए और सामने **''शनि महायंत्र''** को स्थापित कर दे, यह विशेष रूप से मंत्र सिद्ध होना आवश्यक है और आगे जीवन भर यह आपके लिए उपयोगी रह सकता है। प्रत्येक साधक के लिए अलग-अलग महायंत्र की आवश्यकता होती है, उदाहरण के लिए पति अपने महायंत्र पर प्रयोग करे, और इसी प्रकार यदि पत्नी चाहे तो अपने अलग **'शनि महायंत्र'** पर पूजन प्रयोग करे।

सामने शनि महायंत्र को छोटे से काले कपड़े पर स्थापित कर दें, यन्त्र के सामने काले तिल और गुड़ का भोग लगाएं, और नीचे लिखे मंत्र का मात्र ग्यारह वार उच्चारण करें।

शनि उच्चारण के बाद **शनि भार्या मंत्र** का उच्चारण भी कर दें।

शनि स्तोत्र

कोणस्थः पिंगलो वभ्रुः कृष्णो रौद्रान्तको यमः
सौरिः शनिश्चरो मन्दः पिप्पलादेन संस्तुतः।
एतानि दश नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत्
शनिश्चर कृता पीड़ा न कदाचित् भविष्यति।।

हिन्दी शनि स्तोत्र

१. कोणस्थ, २. पिंगल, ३. वभ्रु, ४. कृष्ण, ५. रौद्र, ६. अन्तक, ७. यम, ८.. सौरि, ६. शनिश्चर, १०. मन्द — **इन दस नामों का उच्चारण ग्यारह बार करना चाहिए।**

शनि भार्या स्तोत्र

ध्वजिनी धामिनी चैव कंकाली कलह-प्रिया
कलही कंटकी चापि अजा महिषी तुरंगमा।
नामानि शनि-भार्याः नित्यं जपति यः पुमान्
तस्य दुःखनि नश्यन्ति सुखं सौभाग्यमेधते।।

हिन्दी शनि भार्या स्तोत्र

१. ध्वजिनी, २. धामिनी, ३. कंकाली, ४. कलह-प्रिया, ५. कलही, ६. कंटकी, ७. अजा, ८. महिषी ६. तुरंगमा।

साधक को चाहिए कि प्रत्येक शनिवार को ''शनि नाम'' तथा ''शनि भार्या नाम'' का उच्चारण ११ बार करे तो उसके जीवन में शनि का दुष्प्रभाव व्याप्त नहीं होता, अपितु शनि पूर्णरूप से सहायक रहता है।

साधना सम्पन्न होने के बाद शनि यंत्र को सुरक्षित स्थान पर रख दें या पूजा स्थान में रहने दें, यदि किसी शनिवार को यह प्रयोग नहीं भी हो तब भी चिन्ता करने की जरूरत नहीं है। यथासंभव प्रत्येक शनिवार को महायंत्र के सामने इन नामों का उच्चारण करने से सभी दृष्टियों से सुख, सम्पत्ति, सौभाग्य और ऐश्वर्य प्राप्त होता है तथा उसके जीवन में आने वाले कष्ट, बाधाएं और परेशानियां दूर हो जाती हैं।
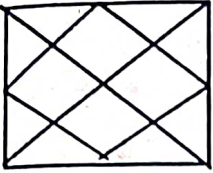
ज्योतिष प्रश्नोत्तर

प्रकाशचन्द जैन, भीलवाड़ा
प्रश्न– **व्यापार करना चाहता हूं।**
उत्तर– वर्तमान नौकरी में ही धन व सम्मान प्राप्त होगा।

अनिल कुमार बाली, नयी दिल्ली
प्रश्न– **पुत्र योग कब तक?**
उत्तर– ज्योतिष दृष्टि से पुत्र योग नहीं किन्तु पुत्रेष्टि प्रयोग द्वारा संभावित।

पुरुषोत्तम राज, सागर
प्रश्न– **कौन सा रत्न धारण करूं?**
उत्तर– चार रत्ती का नीलम, दाहिने हाथ की मध्यमा में।

अशोक जी० जैन, बंबई
प्रश्न– **ऋण मुक्ति कब तक?**
उत्तर– अभी कुछ समय कठिन है।

कमल राज जी० भारती, बड़ौदा
प्रश्न– **विवाह कब तक?**
उत्तर– अगले वर्ष के उत्तरार्द्ध में।

सुरेश, मण्डी टाउन
प्रश्न– **तलाक कब तक मिलेगा?**
उत्तर– विवाद को आपसी सुलह समझौते से समाप्त कर दें। तलाक हानिकारक सिद्ध होगा।

हस्तकर किशोर प्रह्लाद, जल गांव
प्रश्न– **भाग्योदय हेतु कौन सी साधना करूं।**
उत्तर– मार्च के अंक में प्रकाशित अक्षय तृतीया की साधना।

मुकुन्द माधव तिवारी, देवास
प्रश्न– **पूर्ण लाभ हेतु कौन सी साधना करूं?**
उत्तर– वरुथिनी साधना।

देवेश चन्द्र, नालन्दा
प्रश्न– **मेरा चयन एम० बी० बी० एस० में कब होगा?**
उत्तर– आप बी० एम० एस० में प्रयास करें।

निशांत श्रीवास्तव, भिलाई नगर
प्रश्न– **कौन सा विषय लाभप्रद रहेगा?**
उत्तर– कामर्स विशेष रूप से।

मकपाणा भारत एस०, अहमदाबाद
प्रश्न– **लॉटरी में आकस्मिक धन लाभ कब प्राप्त होगा?**
उत्तर– वर्ष ९७ के अंत तक।

एस० पी० खरे, बांदा
प्रश्न– **नौकरी में कष्ट एवं मुकदमे बाजी का निदान बताएं?**
उत्तर– षष्टम् गुरु, मंगल- शनि युति एवं सूर्य, राहु संयोग के कारण संकट बने ही रहेंगे। तांत्रोक्त ढंग से त्रिपुर भैरवी साधना शीघ्र ही सम्पन्न करें तथा नियमित रूप से करते रहें।

श्रीमती राधा कुशवाहा, जगदलपुर
प्रश्न– **नेत्रों से पूर्व की भांति कब तक देखूंगी?**
उत्तर– मार्च अंक में प्रकाशित सूर्य साधना सम्पन्न करें। वर्षान्त तक लाभ होगा।

रणजीत सिंह शेखावत, हनुमानगढ़ टाउन
प्रश्न– **व्यापार करना कैसा रहेगा?**
उत्तर– ट्रांसपोर्ट के व्यवसाय में लाभ मिलेगा, जोखिम भी बना रहेगा। किन्तु उसके निवारण का उपाय कर यही व्यवसाय करें।

रजनीश कुमार मिश्रा, जबलपुर
प्रश्न– **मेरी सरकारी नौकरी कब तक लगेगी?**
उत्तर– बत्तीस से तैंतीसवें वर्ष के मध्य।

सुरेन्द्र कुमार शर्मा, बिलासपुर (हि० प्र०)
प्रश्न– **व्यक्तिगत प्रश्न।**
उत्तर– हां।

राहुल शर्मा, उदयपुर
प्रश्न– **साधना व शिक्षा में भविष्य बताएं?**
उत्तर– महासरस्वती साधना सम्पन्न करें, भविष्य उज्ज्वल है।

अक्षय दूबे, बुधनी ट्रैक्टर नगर (म० प्र०)
प्रश्न– **क्या मैं पुलिस इंस्पेक्टर बन सकूंगा?**
उत्तर– हां।

चन्द्रशेखर जायसवाल, सीधी
प्रश्न– **क्या इस वर्ष परीक्षा में सफल होंगे?**
उत्तर– हां।

कविता किरण, पटियाला
प्रश्न– **गृहस्थ जीवन सुखी और सफल कैसे होगा?**
उत्तर– दुर्गा साधना सम्पन्न करें।

सतीश गुप्ता, नई दिल्ली
प्रश्न– **किस वस्तु का व्यापार लाभदायक रहेगा?**
उत्तर– कागज अथवा प्रिन्टिग से सम्बन्धित।

अविनाश कुमार सिंह, भोजपुर
प्रश्न– **पिता की समस्या कब हल होगी?**
उत्तर– दिसम्बर तक निश्चित रूप से परिवर्तन होगा।

महेश पी० बेदी, बम्बई
प्रश्न– **कौन सा रत्न धारण करूं?**
उत्तर– ३ रत्ती का लहसुनिया बायें हाथ की कनिष्ठिका में।

जयदेव सिंह, जयपुर
प्रश्न– **दाम्पत्य जीवन सुखमय कैसे होगा?**
उत्तर– स्वयं शनि साधना करें तथा पत्नी को तीन रत्ती का पुखराज दांए हाथ में धारण करायें।

योगेश कुमार संगोरिया, इटारसी
प्रश्न– **यह वर्ष आर्थिक तौर पर कैसा रहेगा?**
उत्तर– श्रेष्ठ व सफलतादायक।

जितेन्द्र झा, वाराणसी
प्रश्न– **किस क्षेत्र में सफलता मिलेगी?**
उत्तर– विधि व्यवसाय में।

रामस्वरूप सम्पल, चण्डीगढ़
प्रश्न– **मकान का योग कब तक?**
उत्तर– दिसम्बर के प्रारम्भ तक।

कु० शुभांगी श्री खिस्ती, यवतमाल
प्रश्न– **विवाह कब तक? वर कैसा?**
उत्तर– इसी वर्ष, वर सरकारी सेवा में होगा।

अमरनाथ पाण्डेय, जौनपुर

कूपन क्रमांक :- ११९ (**कूपन पर ही प्रश्न स्वीकार्य होंगे**)

नाम :-..

जन्म तिथि :- ....महीना ....सन्..............

जन्म स्थान .... जन्म समय ....

पता (स्पष्ट अक्षरों में) :-..

....

आपकी केवल एक समस्या :- ....

कृपया निम्न पते को काटकर लिफाफे पर चिपकाएं :-

मंत्र - तंत्र - यंत्र विज्ञान कार्यालय
३०६, कोहाट इन्क्लेव, पीतम पुरा, नई दिल्ली-११००३४

व्यक्तिगत रूप से उत्तर प्राप्त करने के लिए केवल पोस्ट कार्ड(पता लिखा) प्रेषित करें

मेष - अति सामान्य माह। उपलब्धियां प्राप्त होते-होते रह जाएंगी, सामान्य से कहीं अधिक परिश्रम करने के उपरान्त भी पूर्ण लाभ नहीं मिलेगा। चित्त में उद्विग्नता रहेगी। दाम्पत्य जीवन में भी उतार-चढ़ाव आते ही रहेंगे। परिवार में कोई महत्वपूर्ण घटना घटित होगी। आय की स्थिति शोचनीय रहेगी। किसी मित्र का सहयोग लाभदायक रहेगा। गुप्त चिंता के प्रति स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहेगी। अधिकारी वर्ग सहयोगी नहीं रहेगा। शत्रु-संकट में किंचित तनाव रहित होंगे। किसी पूर्व परिचित से भेंट होने की सम्भावना है। धन के दुरूपयोग से बचें। शेयर आदि में धन नियोजित करने के लिए उचित माह नहीं है। निर्माण कार्यों में बाधा आने की सम्भावना है।

वृषभ - लड़ाई-झगड़े का त्याग करें। अपने मन का उद्वेग एवं गोपनीयता स्पष्ट न होने दें। राज्य पक्ष आपके विपरीत है अतः असंयम से कोई विशेष हानि भी हो सकती है। परिवार के वरिष्ठ सदस्यों का योगदान लेते रहें। अर्थोपार्जन के प्रति भी पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाएंगे। जीवन साथी से मनमुटाव रहेगा। मासांत में कहीं से आकस्मिक रूप से धन प्राप्त होगा। प्रेम-प्रसंगों में तीव्रता आएगी तथा सम्बन्धों में एक नया मोड़ आएगा। स्वास्थ्य पर्याप्त रूप से संतुलित रहेगा किन्तु आलस्य का त्याग आवश्यक है।

मिथुन - मन में डांवाडोल की स्थिति बनी रहेगी। उचित निर्णय-शक्ति का सर्वथा अभाव रहेगा। अधिकारी वर्ग के लिए विशेष कठिन माह। अधीनस्थों के असहयोग एवं उद्दंडता से मन खिन्न रहेगा। धन की स्थिति संतोषजनक रहेगी। किन्तु धन प्राप्ति के लिए प्रयासों में सघनता लानी आवश्यक है। परिवार से विशेष सहयोग मिलेगा, किन्तु पत्नी से तालमेल बिठाने में प्रायः कठिनाई अनुभव करेंगे। शत्रु पक्ष सक्रिय रहेगा। गुप्तघात से बचने का प्रयास करें। यात्राओं का यथासम्भव त्याग करें। पूर्व परिचित मित्र वर्ग ही विशेष सहयोगी सिद्ध होंगे। धन को फंसाने वाले कार्यों में न डालें। स्वास्थ्य उत्तम। राज्य पक्ष सहयोगी सिद्ध होगा। शेयर आदि में धन अभी न लगाएं।

कर्क - इस माह कुछ विशेष कार्य सम्पन्न होंगे। मन में संतोष रहेगा। सम्बन्धों में घनिष्ठता आएगी। विवाह सम्बन्धी प्रयास सफलता की ओर बढ़ेंगे। धन का नया स्रोत प्राप्त होगा। अपने व्यवसाय में मन लगेगा तथा उन्नति होगी। राज्य पक्ष से सहयोग प्राप्त होगा। शत्रु विद्वेष को भूल मित्रता की ओर बढ़ेंगे। तीसरे सप्ताह से लेकर माह के अंत तक किसी हल्की चोट के प्रति सावधान रहें। गृह निर्माण आदि निर्माण कार्यों को आरम्भ करने के लिए यह माह आपके अनुकूल नहीं है। माह के अंत में मनोरंजक कार्यक्रम सम्पन्न होंगे।

सिंह - दूरस्थ स्थानों से शुभ समाचार मिलेंगे। किसी बड़ी योजना का प्रारम्भ कर सकेंगे। मन में उत्साह व बल रहेगा। पारिवारिक सहयोग मिलेगा। आय की स्थितियों में मामूली सा ही परिवर्तन होगा, किन्तु व्यय पर नियंत्रण बना रहने से आय-व्यय चक्र संतुलित रहेगा। जमा-पूंजी की बढ़ोत्तरी के भी संकेत हैं। स्वास्थ्य संतुलित रहेगा। राज्य पक्ष अनुकूल रहेगा। यात्राएं पूर्ण फलप्रदायक व संतोषप्रद सिद्ध होंगी। शत्रु पक्ष निस्तेज होगा। सम्पूर्ण रूप से वर्ष का श्रेष्ठतम माह। इस माह अपने चिर-प्रतीक्षित कार्यों को पूर्णता देने का प्रयास करें। माह के मध्य में थोड़े उतार चढ़ाव देख सकते हैं किन्तु उनसे कोई विशेष विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा। माह का अन्तिम सप्ताह सर्वाधिक अनुकूल समय रहेगा।

कन्या - मन में दुर्बलता रहेगी। उहापोह एवं निर्णय - अनिर्णय की स्थिति से पूरे माह गुजरना पड़ेगा। आय यद्यपि श्रेष्ठ रूप से होगी, किन्तु प्रयास करने पर भी जमा-पूंजी का निर्माण सम्भव नहीं हो पाएगा। स्वास्थ्य में उतार-चढ़ाव बना रहेगा। योजनाओं को मूर्त रूप देने में बाधाएं बार-बार सामने आएंगी। शत्रु पक्ष शत्रुता का त्याग करेगा तथा पड़ोसियों से भी सम्बन्ध सुधार की ओर अग्रसर होंगे। किसी हल्की चोट के लगने की प्रबल सम्भावनाएं हैं। मासांत में संदिग्ध व्यक्तियों से सावधान रहें। किसी बड़े धोखे अथवा चोरी की सम्भावनाएं प्रबल हैं।

तुला - मन में खिन्नता रहेगी। मनचाहे कार्यों की पूर्ति में बाधाएं आएंगी। समाज व परिवार से उपेक्षा प्राप्त होगी। प्रेम-प्रसंगों में भी असफलता प्राप्त होगी। आय की स्थिति सामान्य से नीचे रहेगी तथा व्यय पर समस्त प्रयासों के बाद भी नियंत्रण स्थापित नहीं हो सकेगा। कलह की स्थितियां बनती रहेंगी। रोजगार प्राप्ति में भी निराशा ही हाथ लगेगी। जीवन साथी का सहयोग प्राप्त होगा। मित्रों की ओर से सामान्य लाभ ही प्राप्त होंगे। स्वास्थ्य उत्तम। यात्राएं भटकाव से भरी व्यर्थ ही कही जा सकती हैं। राज्य पक्ष से स्थिति मध्यम रहेगी।

धनु - यह माह कुछ विशेष उपलब्धियां प्रदान करने वाला होगा, विशेष रूप से जिनके विवाह आदि की बात चल रही हो। कार्यों की पूर्ति के लिए इस माह अवसर स्वयमेव उपस्थिति होते रहेंगे। पिछले कुछ समय से चली आ रही उहापोह एवं संदेह की स्थिति समाप्त होने से कार्य-क्षमता का भी तीव्रता से विकास होगा। आय का पक्ष मध्यम ही रहेगा। स्वास्थ्य के प्रति तीसरे सप्ताह में विशेष ध्यान रखें। यात्राएं मनोरंजन की दृष्टि से श्रेष्ठ रहेंगी, किन्तु कार्य-लाभ की दृष्टि से नहीं। योग्य मित्र व कार्यों में अच्छे सहयोगी मिलेंगे।

कुंभ - विरोधी बढ़ेंगे। अपने कार्यों एवं गतिविधियों का आंकलन स्वयं कर उन पर नियंत्रण स्थापित करें अन्यथा आने वाले समय में संकट का सामना करना पड़ सकता है। धन को सट्टे आदि में लगाने से धन फंस जाने का भय है। आलोचना बढ़ेगी तथा शत्रु पक्ष गुप्त ढंग से घात पहुंचाने की योजनाएं बनाता रहेगा। परिवार से विशेष सहयोग नहीं मिलेगा। पारिवारिक सदस्य आपके प्रति आलोचना युक्त रहेंगे। यात्राएं कई बार करनी पड़ सकती हैं। व्यापारी वर्ग विशेष चिंतित रहेगा। प्रेम-प्रसंगों में जड़ता आएगी। किसी विशेष पारिवारिक आयोजन को अगले माह तक के लिए स्थगित कर दें।

वृश्चिक - आकस्मिक धन प्राप्ति के प्रबल योग हैं। मन में उथल-पुथल रहेगी। परिवार से असहयोग मिलेगा। पत्नी से अनबन बनी रहेगी। किसी गुप्त चिंता से मन में उद्विग्नता रहेगी। कार्यों को व्यवस्थित रूप देने में बाधाएं बार-बार उपस्थित होंगी। शत्रु-पक्ष पीड़ा दे सकता है। मित्र वर्ग प्रायः सहयोगी सिद्ध नहीं होगा। राज्य-पक्ष बाधक बना ही रहेगा। मुकदमे बाजी आदि में उलझनें से बचें। मानसिक शांति एवं क्रोध पर नियंत्रण के लिए गणपति साधना उपयोगी सिद्ध होगी। शेयर आदि में धन लगाने की योजना को वर्तमान में स्थगित ही कर दें।

मकर - गंभीरता बढ़ेगी व स्थायित्व आएगा। योजनाओं को पूरा करने के लिए तेजी से सचेष्ट होंगे तथा १२ तारीख के बाद स्थितियां तेजी से आपके पक्ष में निर्मित होने लगेंगी। परिवार के प्रति झुकाव बढ़ेगा तथा परिवार से भी पूरा सहयोग प्राप्त होगा। आय की स्थितियों में सुधार आएगा। अंतिम सप्ताह किसी विशिष्ट घटना से जुड़ा होगा। वाद-विवाद अथवा मुकदमे आदि में स्थितियां आदि आपके पक्ष में निर्मित होंगी। धन को नियोजित करने के बारे में भी सोच सकते हैं। वाहन प्रयोग के प्रति विशेष सावधान रहें, विशेष कर द्वितीय सप्ताह में।

मीन - अध्ययन में सफलता मिलेगी। मन में शान्ति का प्रादुर्भाव रहेगा। विचारों में क्रमबद्धता आएगी तथा तनाव दूर होंगे। परिवार से दूरी बढ़ेगी। आय की स्थिति श्रेष्ठ रहेगी। किसी गुप्त चिंता का अंत होगा। पूर्व परिचितों से भेंट का सुयोग उपस्थित होगा। मनचाहे कार्य को करने में अभी कुछ समय अड़चनें और आएंगी। प्रेम-प्रसंग में अनुकूलता आएगी। मित्र वर्ग ही आलोचक बनेगा। शत्रु समाप्त होंगे। इस माह में प्रारम्भ किए गए कार्य भविष्य में लाभप्रद सिद्ध होंगे।

व्रत पर्व एवं त्यौहार

१३.०५.९४	वैशाख शुक्ल ३	अक्षय तृतीया,परशुराम जयन्ती	०४.०६.९४	ज्येष्ठ कृष्ण ११	अपरा जयन्ती
१५.०५.९४	**वैशाख शुक्ल ५**	**शंकराचार्य जयन्ती**	०९.०६.९४	ज्येष्ठ कृष्ण ३०	शनि जयन्ती
१७.०५.९४	वैशाख शुक्ल ७	गंगा सप्तमी	१२.०६.९४	ज्येष्ठ शुक्ल ३	राहु जयन्ती (रवि पुष्य)
१९.०५.९४	वैशाख शुक्ल ९	जानकी जयन्ती	१[illegible].०६.९४	ज्येष्ठ शुक्ल ५	बटुक भैरव जयन्ती
२०.०५.९४	वैशाख शुक्ल १०	महावीर कैवल्य ज्ञान	१८.०६.९४	ज्येष्ठ शुक्ल ९	धूमावती जयन्ती, गंगा दशहरा
२१.०५.९४	वैशाख शुक्ल ११	मोहनी एकादशी	१९.०६.९४	ज्येष्ठ शुक्ल ११	निर्जला एकादशी
२३.०५.९४	वैशाख शुक्ल १३	नृसिंह जयन्ती	२३.०६.९४	ज्येष्ठ शुक्ल १५	कबीर जयन्ती
२६.०५.९४	ज्येष्ठ कृष्ण २	ज्ञान (नारद) जयन्ती	**२५.०६.९४**	**आषाढ़ कृष्ण २**	**संन्यास जयन्ती**
०३.०६.९४	ज्येष्ठ कृष्ण १०	सर्व सिद्धि जयन्ती	२६.०६.९४	आषाढ़ कृष्ण ३	पाप मोचिनी दीक्षा दिवस

यौन रोग

डॉ० साधना
२५, सुभाष मार्केट, शिवाजी नगर,
छटा वस स्टाप, भोपाल (म.प्र.)

प्रस्तुत लेख की लेखिका डॉ. साधना यद्यपि किसी परिचय की अपेक्षा नहीं रखती क्योंकि वे अपने व्यक्तित्व एवं देश की विभिन्न प्रमुख व प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में निरन्तर शोधपरक लेखों की प्रस्तुति के साथ पाठक वर्ग के समक्ष एक विशिष्ट छवि बना ही चुकी हैं। व्यवसाय से होम्योपैथिक चिकित्सिका के रूप में भोपाल में अपने निजी क्लीनिक में कार्यरत रहते हुए भी वे जिस प्रकार से आयुर्वेद, योग एवं विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों में समान रूप से अधिकार रखती हैं, उनकी प्रखरता का ही परिचायक है। मैं इन पंक्तियों के माध्यम से उनका एक नवीन परिचय अपने सुविज्ञ पाठकों से कराने का इच्छुक हूं कि डॉ० साधना अपने चिरपरिचित स्वरूप के साथ ही साथ पूज्य गुरुदेव की शिष्या भी हैं , जो अपने गुरु के प्रति पूर्ण रूप से श्रद्धावनत् व समर्पित रही हैं। डॉ० साधना अपनी समस्त सफलताओं का श्रेय केवल मात्र पूज्य गुरुदेव के आशीर्वाद को ही देती हैं।

- सम्पादक

यौन रोग में बहुत सी बीमारियां आ जाती हैं, यौन रोग पुरुषों को भी हो सकते हैं और स्त्रियों को भी। पुरुषों के यौन रोग निम्नलिखित होते हैं:—

१. शीघ्रपतन होना

२. शुक्रमेह (बिना अनुमति के अनजाने में वीर्यपात होना, उसे शुक्रमेह कहते हैं), किसी स्त्री को स्वप्न में देखकर या किसी कामुक चिंतन से स्वप्न में वीर्यपात होने को स्वप्नदोष कहेंगे।

शीघ्रपतन की प्रथम अवस्था में तो समय-अवधि ही कम होती है और कुछ सेकण्ड बाद वीर्य-स्खलन हो जाता है, और अतृप्त स्त्रियां बैचेन हो जाती है। ऐसा बार-बार होने से उसे हिस्टीरिया के दौरे पड़ने लगते है अथवा वह उन्माद आदि रोगों की शिकार हो जाती है। स्त्री और पुरुष दोनों का जीवन बड़ा नीरस, अशान्त और दुःखी हो जाता है। पति-पत्नी में मन-मुटाव होते हैं फिर लड़ाई-झगड़े तक शुरू हो जाते है और चिकित्सा कराने के बाद भी शीघ्रपतन होता रहता है, तो पुरुष को आत्मग्लानि होने लगती है और हीन भावना से उसके मन में आत्महत्या का विचार भी आने लगता है। **शीघ्रपतन नपुंसकता का पूर्व लक्षण है।**

शीघ्र पतन के कई कारण हो सकते हैं:—

१. अत्यधिक हस्तमैथुन करना— ज्यादा हस्तमैथुन करने से शिश्न मुण्ड पर स्थित तंत्रिकायें बहुत अधिक संवेदशील हो जाती हैं। इससे संभोग के कुछ समय बाद ही वीर्य स्खलित कर देती हैं।
२. स्वप्नदोष अधिक होना।
३. अप्राकृतिक तरीके से संभोग करना अथवा स्त्री संभोग बहुत अधिक करना, बाजीकारक, वीर्य- वर्धक, दवाईयों का अधिक सेवन करना, शरीर में ज्यादा मात्रा में वीर्य का बढ़ जाना, कब्ज रहना।
४. गुप्तांगों के रोग जैसे सुजाक, सिफलिस आदि होना।
५. बहुत लम्बे समय तक संभोग का अवसर न मिलने पर भी ज्यादा मात्रा में शुक्राशय में वीर्य एकत्रित होता रहता है जिससे पुरूष की काम-इच्छा बहुत बढ़ जाती है और ऐसे में जब व्यक्ति संभोग करता है तब शीघ्र स्खलित हो जाता है।
६. आत्मविश्वास की कमी तथा मन का भय— शारीरिक व मानसिक थकान इत्यादि अनेक कारण होते हैं। जिनसे यह रोग उत्पन्न होता है।

यौन रोग देश की प्रमुख समस्या बनते जा रहे हैं जिसका सबसे जटिल रूप एड्स एक भयावह रूप ले चुका है। यौन रोगों का क्षेत्र बहुत व्यापक है जिसके प्रारम्भिक रूप में व्यक्ति की शारीरिक अक्षमता, यौन क्रीड़ा में असफल रहना, शीघ्र पतन, स्वप्नदोष आदि यौन रोग माने गए हैं।

अचूक औषधियां

फासफोरिक एसिड-३०– यह दवा वीर्य-नाश से उत्पन्न पुराने रोगों में अनुकूल होती है। जिन लोगों का बहुत पहले, बहुत अधिक स्वप्न दोष की बीमारी के कारण शरीर बहुत कमजोर हो गया हो, पुराने शरीर में कमजोरी आ गई हो, टांगे कमजोर और रीढ़ की हड्डी में दर्द होता हो, संभोग के समय अपूर्णता रहती है, और बहुत अधिक वीर्य स्खलित हो जाता हो।

लायकोपोडियम-३० – लिंग की अत्यधिक शिथिलता, लिगोंद्रेक होते ही शीघ्रपतन, यह दवा वृद्धों तथा जिनको यकृत का दोष है उनके लिए अधिक लाभदायक है।

एग्नसकास्ट-३०– यह दवा उन लोगों के लिए अधिक उपयोगी है जिन्होंने अपने जीवन का अधिकांश भाग व्यभिचार में बिताया हो, ऐसे व्यक्ति शारीरिक दृष्टि से नपुसंक होते है, और मानसिक दृष्टि से अत्यधिक कामुक होते हैं।

कैलेडियम-३०– बहुत अधिक हस्तमैथुन के बाद आई कमजोरी, कामेन्द्रिय एकदम थुलथुली हो जाती है तथा यह दवा उन रोगियों के लिए ज्यादा उपयुक्त है जिन्हें बिना पूर्ण उत्तेजना के ही वीर्यपात हो जाता है।

जिंकम मेटालिकम-३०– कामेन्द्री के बहुत अधिक समय तक दुरुपयोग में यह दवाई अनुकूल होती है, रोगी पीले चेहरे, धंसे चेहरे वाला, आंखों के चारों ओर नीले घेरे वाला होता है तथा ऐसे रोगी का मुख्य लक्षण होता है, कि उसके बैठे-बैठे टांगों में कंपन होता है।

डायस्कोरिया-३०– यह दवा भी शीघ्रपतन के लिए बहुत अच्छी है जब जनन अंग बहुत अधिक शिथिल हो जाते है और व्यक्ति अपने-आप को बेहद कमजोर महसूस करता है।

डेमीयाना- (मूल अर्क)– यौन संबंधी स्नायविक दुर्बलता के कारण नपुंसकता।

सेबाल सर्ववेटा (मूल अर्क)– जनन अंग ठण्डे तथा इन्द्रिय व अण्डकोष सिकुड़े।

स्टेपेसएग्रीया-३०– अति विषय-भोग के कारण नपुंसकता।

ओनोसमोडियम (सी० एम०)– पुरूष या स्त्री की सेक्स की इच्छा बिल्कुल नहीं होने से सी० एम० की एक शक्ति की मात्रा की देने से सारा नक्शा बदल जाता है तथा जिन स्त्रियों को संतान नहीं होती हो उन्हें सन्तान हो जाती है।

नूफरल्यूरियम Q (मूल अर्क)– यौन इच्छा का सर्वथा अभाव, टट्टी-पेशाब करते समय वीर्य-स्खलन। नपुंसकता, इन्द्रियों की अत्यधिक शिथिलता और शीघ्र पतन में लाभदायक।

थूजा Q– ६ बूंद सुबह शाम १/२ कप पानी से लेना स्वप्नदोष की महाऔषधि है।

और स्तम्भन के ये तंत्रात्मक विधान!

भारतीय तंत्र ग्रंथों में अन्य विधानों के साथ - साथ वीर्य स्तम्भन व बल प्राप्ति के अचूक प्रयोग दिए गए हैं। मुख्य रूप से जड़ी - बूटियों पर आधारित ये प्रयोग विभिन्न तंत्र ग्रंथों में स्पष्टता व प्रामाणिकता के साथ वर्णित किए गए हैं। सामान्य भाषा में हम इन्हें टोटका कह सकते हैं किन्तु अनेक वैद्यों का कहना है कि उन्होंने अपने रोगियों को औषधियों के साथ इनका भी प्रयोग करा कर उन्हें नव-जीवन दिया है।

- **कमल गट्टे** को शहद के साथ पीस कर नाभि के उपर लेप करने से जब तक लेप लगा रहेगा तब तक पुरूष स्खलित नहीं होगा।
- यदि तुलसी के बीजों का चूर्ण पान में खाया जाए तो लम्बे समय तक पुरुष का वीर्यपात नहीं होता, किन्तु यह प्रयोग कुशल वैद्य की देख - रेख में करना ही उचित है।
- **शूकर दन्त** को कपड़े के साथ कमर में बांध कर सम्भोग करने से स्त्री को पूर्ण सन्तुष्टि प्राप्ति होती है। यह प्रयोग कैसा भी नपुंसक पुरुष हो, प्रबलता से लाभ देने वाला सिद्ध होता ही है।
- सोमवार के दिन रक्त - अपामार्ग को निमन्त्रण दे आएं और मंगलवार की प्रातः उखाड़ कर ले आए, इसको कमर में बांध कर सम्भोग करने से भी पूर्ण स्तम्भन प्राप्त होता है।
- श्मशान में उगे हुए नीली पौधे की जड़ को कमर में बांधने से भी पूर्ण रति - सुख प्राप्त होता है।
- **मंत्र सिद्ध शुक्र गुटिका** लेकर उसे काले धागे के साथ कमर में जिस स्त्री का नाम लेकर बांधे, वह सम्भोग में पूर्ण सुख प्रदान करने वाली सिद्ध होती ही है।

“गुरु” एक गुंजरण हैं
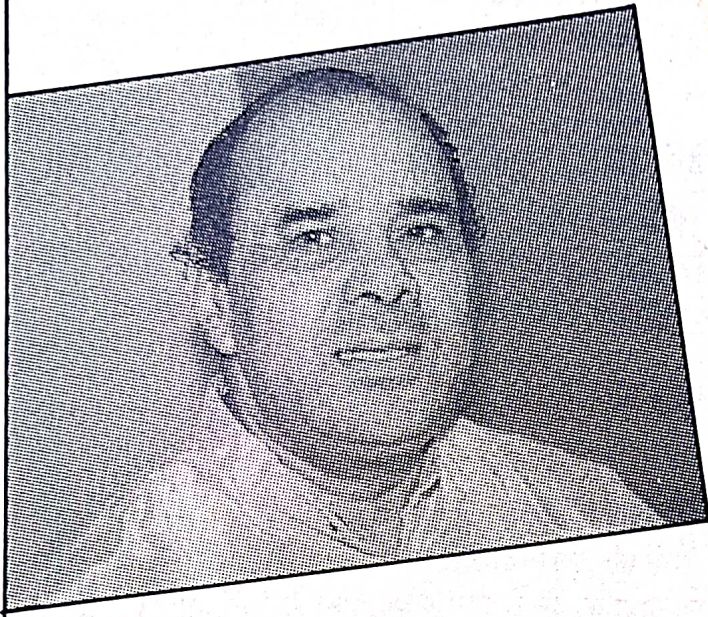
पत्रिका कैसेटः प्रतिमाह की पत्रिका ऑडियो कैसेट के माध्यम से आपके पास। प्रत्येक अंक में आयी साधनाओं को प्रमाणिकता से वर्णित करती हुई।

नोट- जनवरी ९३ का दुर्लभ एवं अब अप्राप्य अंक भी पत्रिका कैसेट **‘जनवरी १९९३’** के माध्यम से उपलब्ध है। प्रामाणिक मंत्रों का उच्चारण. . . सरस और महत्वपूर्ण।

प्रत्येक पत्रिका कैसेट मूल्य ४२/- रु०
(डाकव्यय अतिरिक्त)

वीडियो कैसेट

महाकुम्भ ८९

पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में गंगा के पावन तट पर बीते एक सप्ताह का अंकन. . . अनेक गोपनीय साधनाओं के साथ, जिन्हें देखकर, उन्हें अपने जीवन में उतारकर कई साधक जीवन में वे सभी साधनायें सिद्ध भी कर चुके हैं।

गुरु पर्व (१९९३ पानीपत)

सिद्धाश्रम गमन प्रयोग, पूज्य दादा गुरुदेव **परमहंस स्वामी सच्चिदानन्द जी** आह्वान प्रयोग, लक्ष्मी प्रयोग, वीर वैताल दीक्षा . . . अनेक दिव्य व अलौकिक चिन्तनों से भरा एक कैसेट जो अभी तक साधकों के बीच हलचल मचा रहा है। समाप्त हो गए कैसेट की प्रतियां पुनः उपलब्ध।

वीडियो कैसेट प्रत्येक मूल्य २०१/- रु०
(डाक व्यय अतिरिक्त)

ऑडियो कैसेट

ऑडियो कैसेट के माध्यम से आपके घर में, आपके मन में और आपके सारे जीवन में, वीडियो कैसेटों के माध्यम से आपके सामने मुस्कराते हुए रोम-रोम को अपनी उपस्थिति का अहसास कराते हुए।

कुण्डलिनी योग

कुण्डलिनी तत्व और कुण्डलिनी जागरण के माध्यम से योग की एक दुर्लभ पद्धति का सरल विवेचन।

शक्तिपात दीक्षा

दीक्षाओं के रहस्य के साथ शक्तिपात को जीवन में उतारता, जिसके मंत्र मात्र सुनकर साधकों के शरीर में स्फुरण आरम्भ हो गए।

निखिल स्तवन

पूज्य गुरुदेव की अभ्यर्थना में सिद्धाश्रम स्थित योगीराज ब्रह्माण्डेश्वरानन्द द्वारा रचित दिव्य स्तोत्र आपके घर की एक नितांत आवश्यकता।

लक्ष्मी सिद्धि

लक्ष्मी साधनाओं की ऑडियो कैसेटों द्वारा प्रस्तुति के क्रम में एक महत्वपूर्ण कैसेट। विशेष रूप से सिद्धि पक्ष पर केन्द्रित होते हुए।

प्रत्येक कैसेट ३०/- रु० डाक व्यय अतिरिक्त।

सम्पर्क
मंत्र तंत्र यंत्र वि.।.
डॉ० श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी
जोधपुर (राज.)
फोन-०२९१-३२२०९
अथवा
गुरुधाम
३०६, कोहाट एन्क्लेव
पीतमपुरा, नई दिल्ली-३४
फोन-०११-७१८२२४८
फेक्स-०११-७१८६७८

जब पूज्य गुरुदेव ने षोडशी साधना सम्पन्न की

भगवती त्रिपुर सुन्दरी षोडशी के नाम का स्मरण ही सौन्दर्य और जीवन का श्रृंगार है। कितनी भी महाविद्या साधनाएं क्यों न कर ली जाएं, कैसी भी शक्ति या सिद्धियां क्यों न प्राप्त कर ली जाएं, किन्तु भगवती षोडशी की साधना के विना सभी कुछ अधूरा ही तो है। **विना षोडशी के लावण्य से अभिभूत हुए जीवन नीरस और निस्तेज ही तो है।** क्योंकि यथार्थ में 'श्री' की जननी काव्य की सृजनकर्त्री और वैभव की आश्रयस्थला भगवती षोडशी ही तो हैं। केवल जिनके सौन्दर्य और श्रृंगार का वर्णन करने में ही योगी और लालित्य से विभूषित कविरूपा मुनिजन जीवन-पर्यन्त परिश्रम कर करके थक गए किंतु फिर भी अतृप्त ही रह गए, क्योंकि देवी का यही स्वरूप, सही अर्थों में प्रकृति का सम्पूर्ण स्वरूप है। अन्य महाविद्या स्वरूपों में तो वे किसी एक पक्ष विशेष की स्वामिनी हैं, किन्तु षोडशी स्वरूप में प्रकृति स्वरूपा बनकर प्रतिक्षण गतिशील और प्रकृति की ही भांति प्रवाह से भरी हैं। जहां अन्य महाविद्यायें शक्ति की प्रखरता से, दिव्यता से आभूषित है, वहीं मां भगवती षोडशी एक वेगवान नदी की
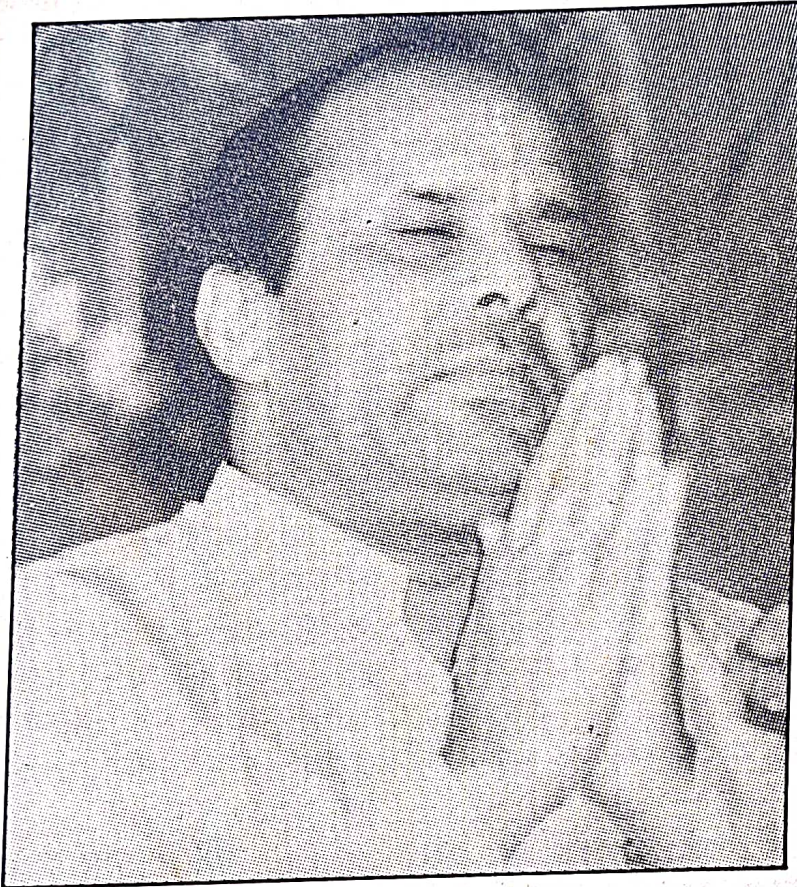
पूज्य गुरुदेव के गुरुभ्राता परमहंस स्वामी प्रवज्यानन्द जी से प्राप्त एक अद्भुत विवरण, साक्षात् पूज्यपाद गुरुदेव के साधनात्मक जीवन की कथा. . . . कई रहस्यों पर से पर्दा उठाता हुआ, षोडशी साधना के एक - एक पक्ष को उजागर करता हुआ।

साधना - सूत्र के जिज्ञासु साधकों के लिए ऐसा विवरण तो साक्षात् वरदान ही है. . .

ही भांति सम्पूर्ण सौन्दर्य और विविधता के साथ निरन्तर गतिशील हैं।

महाविद्या साधनाओं में तो ये एक परम्परा की परिचायक 'श्री' कुल की गौरवशाली स्वामिनी हैं। शास्त्रों में वर्णित है कि जिन्हें सौभाग्य से षोडशी साधना का क्रम गुरु - परम्परा में प्राप्त हो जाए, जीवित जाग्रत गुरु के श्रीमुख द्वारा ज्ञात हो जाए, उनके सौभाग्य की तो तुलना ही नहीं की जा सकती, क्योंकि इस प्रकार की साधना - परम्परा प्राप्त होने का अर्थ है कि ऐसा शिष्य अपने जीवन में पूर्ण सफल, वाक्सिद्ध, ऐश्वर्यवान व नेतृत्व करने वाला होगा ही। **'षोडशी'** जोकि सम्पूर्ण वैभव की एकमात्र गर्वीली अधिष्ठात्री हैं, उनका आश्रय प्राप्त हो जाने के बाद इसमें आश्चर्य कैसा? गुरु-परम्परा में यही विद्या इतनी अधिक गोपनीय रखी गई कि इसके सिद्ध साधकों की सूची में आज तक गिने-चुने साधक ही सम्मिलित हो सके हैं। **आदि शंकराचार्य** इसी मत के पोषक व सिद्ध आचार्य थे। भगवत्पाद आद्यशंकराचार्य प्रारम्भ में अद्वैत के ही षोषक थे किंतु कालान्तर में उन्होंने भी जब शक्ति की आराधना व आवश्यकता जीवन में अनुभव की, तब शक्ति के इसी स्वरूप को अपने जीवन में उतारा। उनके बाद योग्य शिष्यों के अभाव में यह महत्वपूर्ण साधना **'श्रीविद्या'** साधना लुप्त ही हो गयी।

मुझे यद्यपि ज्ञात था कि पूज्यपाद गुरुदेव के कंठ में आद्य शंकराचार्य के पश्चात् लुप्त हो गई यह महत्वपूर्ण विद्या सुरक्षित है किन्तु प्रसंग आने पर उन्होंने उसे हर वार दूसरी ओर मोड़ दिया और मैं अपनी पात्रता की कमी जान कर उनसे आग्रह पूर्वक ज्ञात न कर सका, क्योंकि श्री विद्या साधना सामान्य विद्या नहीं है, और न षोडशी महाविद्या, एक महाविद्या मात्र है। षोडशी तो पूरे जीवन का और समस्त साधनाओं का सार है। **षोडशी का अर्थ ही है जो अपने-आप को षोडश कलायें समाहित किए हुए हो, जिन षोडश कलाओं से युक्त भगवान श्रीकृष्ण जैसे अवतरण सम्भव हुए।** किन्तु पूज्यगुरुदेव के सन्यस्त जीवन के साक्षी, श्रेष्ठ सन्यासी **स्वामी प्रवज्यानन्द जी** के द्वारा इस बात का भेद खुल सका कि पूज्यपाद गुरुदेव न केवल इस साधना के सिद्धतम आचार्य हैं, वरन वे अपने नित्य के जीवन में भगवती त्रिपुर सुन्दरी का साक्षात् प्रतिक्षण करते ही रहते हैं। भवगती षोडशी का साक्षात् करना एवं उनका साहचर्य होना इस बात का परिचायक होता है कि जीवन में ऐसी अजेयता मिल जाती है जिससे जीवन के समस्त क्षेत्रों में व्यक्ति अद्वितीय बन सकता है। उसको इतना अधिक सम्मोहनकारी प्रभाव प्राप्त हो जाता है कि उसे देखने मात्र से, उसके रोम-रोम से आते तेज से, सामने वाला आज्ञा पालन करने को तत्पर हो उठता है। वह फिर सम्मोहन करता नहीं, सामने वाले स्वयं सम्मोहित होने को बाध्य हो जाते हैं।

स्वामी प्रवज्यानन्द जी, पूज्य गुरुदेव की भांति इसका रहस्य बताने के विशेष इच्छुक नहीं थे, किन्तु मेरे अत्यधिक आग्रह के बाद वे भी उन दिनों में खो गए जब पूज्य गुरुदेव के साथ उनकी भी षोडशी साधना के क्षण व्यतीत हुए, मां के नर्तनशील स्वरूप-षोडशी स्वरूप की साधना में. . .

सारी प्रकृति ही उस सांयकाल षोडशीमय होती लग रही थी जब **स्वामी प्रवज्यानन्द जी** अपने साधनात्मक दिनों की याद में लीन हो गए, मानों मां भगवती जगदम्बा स्वयं ही उस दिन वर्णन सुनने उपस्थित हो गई थी, दिवस का अवसान हो रहा था और डूबते सूरज का सिन्दूरी रंग पत्ते-पत्ते पर बिखरता हुआ सारी घाटी को लालिमा और सुनहरी आभा से भरता हुआ उनकी अभ्यर्थना में अपना अर्घ्य प्रस्तुत कर रहा था। मन्दाकिनी के तट पर उस अगस्त्य मुनि की घाटी में पक्षी नित्य कलरव करना भूल गये थे, सारी प्रकृति अपना व्यापार कुछ क्षणों के लिए शांत करने का आतुर हो गई लगने लगी थी, मन्दाकिनी का जल नर्तन करना भूल रहा था और आसमान में उड़ते बादल भी ज्यों ठिठक गए थे। देखते ही देखते सामने हिमालय की चोटियां सुनहरे रंग में रंग गई और तब उस निःस्तब्धता को और भी निःस्तब्ध करती हुई **स्वामी प्रवज्यानन्द जी** की गुरु - गम्भीर वाणी गुंजरित हो उठी . . .

यहीं से कुछ दूर था वह स्थान जहां मैंने और निखिल जी ने साथ-साथ साधना प्रारम्भ की थी। मैं उनका छोटा गुरुभाई होने के कारण उन दिनों लगातार उनके सान्निध्य में रहने का सुअवसर पा सका था। निखिल जी उन दिनों सर्वथा मौन रहने लग गए थे। **एक प्रकार से इस पार या उस पार का हठ ठान चुके थे, जो उनकी पुरानी आदत रही है।** दिन-रात केवल भगवती षोडशी का ही चिन्तन, भगवती षोडशी का ही स्तवन और मंत्र-जप। हमें हमारे गुरुदेव ने स्पष्ट

केवल मैं ही नहीं स्तब्ध होकर सुन रहा था स्वामी प्रवज्यानन्द जी की गुरु गम्भीर वाणी, सारी प्रकृति ही ठिठक कर उस कथा को सुनने आ गई थी, अपना प्रकृति व्यापार छोड़कर।

एक अविस्मरणीय क्षण को पुनः साकार कर लेने के लिए . . .

कह रखा था कि मैं अपने ढंग से सन्तुष्ट होने के बाद ही निर्णय ले सकूंगा कि क्या **षोडशी दीक्षा** प्रदान करूं अथवा नहीं। एक प्रकार से यह साधना तो निखिल जी षोडशी दीक्षा पाने के लिए ही कर रहे थे, मुख्य साधना और मुख्य क्रम तो अभी बहुत दूर था, क्योंकि **षोडशी दीक्षा** प्राप्त हो जाना ही अपने-आप में इतनी गम्भीर घटना है, जिसका वर्णन ही नहीं किया जा सकता। क्योंकि **षोडशी दीक्षा** प्राप्त करने के बाद साधक विश्व स्तर से भी ऊपर उठकर ब्रह्माण्ड के रंगमंच पर आने की तैयारी में संलग्न हो जाता है। **निखिल जी को कोई चुनौती जैसी बात जीवन में मिले और वे उसे सामान्य घटना की तरह लें यह मैंने देखा ही नहीं।** मैंने उनके साथ रहकर यह देखा कि वे जिस साधना में बैठ जाते हैं, अपने-आप को पूरी तरह से उसमें डुबो देते है। इतने अधिक तल्लीन हो जाते हैं कि साक्षात् उस देवी या देवता की प्रतिकृति ही लगने लगते हैं। साधना का सूक्ष्मता से अध्ययन करना, जहां जो भी जानकारी मिले एकत्र करना और फिर एकान्त में जाकर साधना में संलग्न हो जाना, यह इनकी सदैव से विशेषता रही है। **इसी से जो साधनायें अन्य साधकों को वर्षों और जन्मों में सिद्ध होती है, वे उनको माह भर में ही सिद्ध होते देखा है।**

किन्तु इस बार चुनौती कठिन थी क्योंकि इस बार सामान्य साधना नहीं, साधनाओं की मूल भगवती षोडशी की साधना ही सम्पन्न करनी थी। सर्वथा मौन रहते हुए वे साधना में संलग्न थे और मैं तो अपनी साधना से भी अधिक उनके साथ गुरुभ्राता होते हुए भी शिष्य रूप में उनकी सुख-सुविधाओं को ध्यान अधिक रख रहा था, उनके शरीर और हावभाव में होने वाले परिवर्तनों को ही अधिक पढ़ रहा था। **मेरे समक्ष उनका व्यक्तित्व एक साधना ग्रंथ की भांति पृष्ठ दर पृष्ठ खुलता जा रहा था और सही कहूं तो मैं उनके आचरण से वह सब कुछ सीख रहा था जो मेरे लिए आसन पर बैठ कर माला घुमाने से अधिक महत्वपूर्ण था** क्योंकि जब तक साधना के इन आयामों को नहीं समझा जाता तब तक कोई साधना सिद्ध हो भी कैसे सकती है? कोई भी साधना और विशेष रूप से षोडशी महाविद्या साधना इतनी हल्की साधना है ही नहीं कि उसे जब चाहे तब सिद्ध कर लें। साधना के लिए देवतामय बनना पडता है और देवतामय कैसे बना जाता है, इसी का व्यवहारिक ज्ञान मैं निखिल जी के साथ रहकर प्राप्त करता जा रहा था।

उस अवसर पर निखिल जी (श्रीमाली जी) ने जो कुछ कहा वे इतिहास के अमिट अक्षर हैं. . .

"... मुझे प्रत्येक साधना के प्रत्येक पक्ष को स्वयं अपने ही जीवन में परख लेना है, तभी तो मैं आने वाले युग में अपने शिष्यों को कुछ बता पाऊंगी।"

उनका एक - एक शब्द मेरे कानों पर चोट करता लगा। पहली बार जाना कि साधना किन विराट लक्ष्यों को लेकर की जाती है।

षोडश बीज मंत्रों को समाहित किए हुए भगवती षोडशी का स्वरूप क्या जड़, क्या चेतन और क्या जीवन के एक-एक पक्ष, सभी कुछ तो समाहित किए है और **मैं स्पष्ट अनुभव कर रहा था कि निखिल जी ने सामान्य पद्धति का त्याग कर भगवती षोडशी के षोडश बीज मंत्रों को एक-एक कर के अपने शरीर में समाहित करना प्रारम्भ कर दिया है।** एक अद्भुत सम्मोहन और अजीब सी चमक उनके सारे शरीर पर उतर आई थी और सदा से मौन रहने वाले निखिल जी दिन प्रतिदिन एक ऐसे आनन्द में विभोर होते जा रहे थे जिससे मुझे उनसे वार्तालाप के जो दुर्लभ क्षण मिलते थे वे भी समाप्त होने लग गये। साधना काल में उनके चेहरे और सम्पूर्ण शरीर के आसपास इतना अधिक प्रकाश उमड़ आता था कि उनकी ओर देखना कठिन हो जाता था। षोडशी साधना का यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि साधक को प्रारम्भ में काम, क्रोध, ईर्ष्या व मोह से अपने-आप को सर्वथा मुक्त कर लेना होता है। इस 'साधना' को करने के बाद ही भगवती षोडशी की "महासाधना" प्रारम्भ होती है। अपने एकान्त के क्षणों से निकल कर जब वे कभी बाहर आते और साधना कक्ष के बाहर स्थित एक बड़ी चट्टान पर अपना व्याघ्र चर्म बिछाकर बैठ जाते तथा एकटक आकाश की ओर देखते रहते तो उनके चेहरे पर उतर आया दर्प, ओज और भगवती षोडशी का लावण्य उनको ऐसी आभा देने लगता था **ज्यों साक्षात् कोई सिंह ही बैठा हो।** निस्पृह भाव से देखती उनकी दृष्टि कभी मन्दाकिनी के प्रवाह की ओर मुड़ जाती तो कभी शून्य में खो जाती। कभी ऊंचे-२ वृक्षों को निहारने लगती और कभी आकाश के पल-पल में हो रहे परिवर्तनों को। उनकी दृष्टि के परिवर्तन के साथ ही उनके चेहरे के भाव भी बदलते जाते थे, कभी उनके चेहरे पर नदी सा कुछ उमड़ने लगता, कभी वृक्षों सी कुछ छांव उतर आती और कभी आकाश की ही भांति निष्प्रपंच! मानो प्रकृति स्वरूपा मां षोडशी एक ऐसे पवित्र विग्रह का आश्रय लेकर उसमें स्थापित होती हुई अपनी ही रची प्रकृति को निहार रही हों। उनके गुरु-गम्भीर चेहरे पर उनकी चिर-परिचित दृढ़ता के साथ-साथ जो कोमलता और लावण्य उतर आया था वह स्पष्ट रूप से उन्हीं मां भगवती षोडशी का ही तो असीम सौन्दर्य था।

एक माह तक उनकी यही स्थिति रही। आहार आदि दिन प्रतिदिन सूक्ष्म होते-होते समाप्त ही हो गया था किंतु इतनी कठिन तपस्या के बाद भी चेहरे पर न तो कोई झुंझलाहट थी, न बैचेनी, न पीड़ा, बस वही एक भाव कि **"मुझे षोडशी दीक्षा लेनी है और अवश्य लेनी है!"**

एक माह बीतते- बीतते वह सुखद क्षण भी आया गया जब एक अन्य गुरुभ्राता ने आकर यह शुभ समाचार दिया कि हमें गुरुदेव ने बुलाया है। हमारे गुरुदेव उस स्थान से थोड़ा हटकर भीतर एक गुप्त स्थान पर पधारे थे। उनका यह आदेश एक प्रकार से संकेत था कि उन्होंने निखिल जी को षोडशी दीक्षा देने का मन बना ही लिया है और ऐसा ही हुआ। दीक्षा प्राप्ति के बाद निखिल जी के प्रयासों में और भी अधिक सघनता आ गई। **पहले जहां वह तीन घंटे विश्राम करते थे अब वह समाप्त होता हुआ एक घंटे का और उसके उपरान्त आधे घंटे का ही रह गया।** उसे विश्राम कहना भी उचित नहीं होगा, क्योंकि उस आधे घंटे में वे अपनी नित्य क्रियायें सम्पन्न करने के लिए ही तो उठते थे।

ऐसे ही एक अवसर की बात है जब वे कुछ अधिक प्रसन्न थे, मैंने डरते-डरते पूछा कि, "आप इतना अधिक परिश्रम क्यों कर रहे है, जबकि मैं तो स्पष्ट देख रहा हूं कि पूज्य गुरुदेव से दीक्षा प्राप्त करने से पहले ही आपके शरीर में भगवती षोडशी अपने सोलह बीज मंत्रों के साथ सम्पूर्ण करुणा और सम्पूर्ण श्रृंगार के साथ समाहित हो ही चुकी हैं, **स्पष्ट है कि आपको दीक्षा के पूर्व ही भगवती षोडशी का प्रत्यक्षीकरण भी हो ही चुका है,** फिर इतना अधिक परिश्रम क्यों, इतना अधिक तप क्यों?" उस अवसर पर उन्होंने अपने मौन को भंग कर जो बात कही वह इतिहास का एक अमिट क्षण है। वे बोले— **"यह सत्य है भगवती षोडशी का साक्षात् मुझे साधना के प्रारम्भ में ही हो गया था, किंतु मैं इस साधना के प्रत्येक पक्ष और प्रत्येक बिन्दु को अपना कर देख लेना चाहता था जिससे मैं अपने शिष्यों के समक्ष स्पष्ट बता सकूं कि इस साधना के क्या-क्या पक्ष है, कौन-कौन से उतार-चढ़ाव आते हैं और उनके क्या समाधान है।"**

जीवन में ऐसा प्रखर चिन्तन, इतनी उच्चभाव-भूमि और इतनी पैनी दृष्टि केवल उन्हीं की हो सकती है, जो जन्म से ही गुरुत्व के गुणों से विभूषित हो। एक प्रकार से उनकी यह बात सुनकर मुझे अपने-आप पर लज्जा हो आई क्योंकि मेरी साधना का उद्देश्य कुछ और था। मैंने षोडशी साधना के द्वारा केवल अपने जीवन को संवारने का चिन्तन रखा था। **निखिल जी** की बातों से मेरे सामने जीवन का एक नया अध्याय खुला कि साधनाएं किस प्रकार अपने 'स्व' से ऊपर उठकर की जानी चाहिए और जिस प्रकार निखिल जी कर रहे हैं। शायद यही रहस्य है कि वे जिस साधना को हाथ में लेते है वह उन्हें कुछ महीनों में ही सिद्ध हो जाती है, जबकि अन्य उसे वर्षों और कभी-कभी तो जन्मों में जाकर सिद्ध करते हैं।

हठ, आग्रह, तेजस्विता और उदात्तता का जैसा अनोखा सम्मिश्रण मैंने निखिल जी में देखा वैसा मैंने अपने साधक जीवन में और अब इस गुरु पद पर भी अन्य किसी में देखा ही नहीं। केवल एक ही व्यक्तित्व मुझे उनकी तुलना में समकक्ष लगते है और वे है **महर्षि विश्वामित्र।** यद्यपि मैंने महर्षि विश्वामित्र का साक्षात् दर्शन तो नहीं किया, किन्तु निखिल जी के रूप में मुझे सदैव ऐसा लगता ज्यों महर्षि विश्वामित्र ही इस रूप में गतिशील है। कभी मैंने निखिल जी के श्रीमुख से ही सुना था कि **महर्षि विश्वामित्र जिस साधना को करने का निश्चय कर लेते थे उसके विषय में जाकर केवल अपने गुरु से निवेदन मात्र कर देते थे** और कुछ समय पश्चात् सिद्ध करके जब वापस आते थे तो अगली साधना की आज्ञा मांगने के लिए ही आते थे। विविध साधनाएं और विविध पद्धतियां उनके हाथों में खेलती रहती थी और इसी प्रकार निखिल जी ने अपने जीवन में, अपने साधक जीवन और शिष्य जीवन में जिया है। एक साधना को लेकर या एक महाविद्या को पकड़ कर उन्होंने कभी अपने को पूर्ण माना ही नहीं। निरन्तर शोध करते रहना, निरन्तर संलग्न रहना और आत्मलीन रहना यही उनका सबसे बड़ा गुण और उनकी प्रियता का वातावरण है।

आज आश्चर्य होता है कि कैसे इतना प्रखर व्यक्तित्व अपनी उच्चकोटि की साधनात्मक भावभूमि छोड़कर, अपनी आत्मलीनता छोड़कर समाज में पहुंच गया है। शायद निखिल जी को इसका आभास था कि एक न एक दिन उन्हें उनके गुरु समाज में भेजेंगे ही और उन्होंने अपने को

निखिल जी द्वारा रचित षोडशी स्तोत्र, एक स्तोत्र ही नहीं उनके प्राणों से फूटी एक चिन्गारी है, जिसके प्रकाश में षोडशी को पहचाना जा सकता है, उनका साक्षात् किया जा सकता है।

मैं इसका साक्षी हूं किन्तु प्रयास करके भी उस आनन्द का वर्णन नहीं कर पा रहा।

- स्वामी प्रवज्यानन्द

विष पीने को तैयार भी कर लिया था किंतु मेरी स्मृति में तो वे कुछ एक क्षण ही अंकित है जब मैंने उनका साधनात्मक जीवन अत्यन्त समीप रहकर देखा। **उनके साधनात्मक जीवन में ही उनके 'गुरुत्व' का अनुभव किया।** निखिल जी से मुझे बाद में वह सम्पूर्ण विवरण भी ज्ञान हुआ जो उन्हें भगवती षोडशी की साधना के मध्य हुआ था। मां के उस जाज्वल्य और लालित्य से भरे स्वरूप को उन्होंने एक अत्यन्त मधुर व गम्भीर पद के माध्यम से काव्य में बांधा है, जिसका स्तवन उनके विशिष्ट शिष्य नित्य करते है और जिसके माध्यम से भगवती षोडशी का पूर्ण जाज्वल्यमान दर्शन करने में सफल होते है क्योंकि वह स्तोत्र मात्र स्तोत्र ही नहीं, निखिल जी के प्राणों और तप से घर्षण कर उत्पन्न हुआ अग्नि स्फुलिंग है जिसके प्रकाश में ही मां भगवती षोडशी का सम्पूर्ण सौन्दर्य और विशेषता देखी जा सकती है और मैंने भी देखी है। किन्तु निखिल जी के समान मां भगवती षोडशी के स्वरूप को पंक्तियों के माध्यम से मैं अंकित करने में असमर्थ हूं। मां तो विविध स्वरूपा है। उनके अन्दर इतने अधिक पक्ष समाहित है कि मैं किस पक्ष को लेकर उनका वर्णन करूं? उनका प्रत्येक पक्ष इतना अधिक सौन्दर्य से भरा है, कि उसको देखने के बाद चित्त उसी एक पक्ष में रम जाता है।

. . . यह कहते-कहते प्रवज्यानन्द जी भाव-विभोर हो गए, उनकी आंखों में आ गया एक अश्रुकण कह रहा था कि उन्होंने वास्तव में पूज्य गुरुदेव की कृपा से अपने जीवन में भगवती षोडशी का साक्षात्कार किया है।

स्वामी प्रवज्यानन्द जी की गम्भीरता और उन क्षणों की बोझिलता से मैं यह पूछने से वंचित रह गया कि वे वास्तव में किस बात से द्रवित हो उठे हैं– जगज्जननी मां भगवती षोडशी का स्मरण करके या पूज्यपाद गुरुदेव परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी का स्मरण करके!

सद्गुरु निखिलेश्वरानंद महात्म्य

सृष्टितत्व स्पंदित हुआ जब "एकोऽहम् बहुस्याम" उद्घोष हुआ।
ब्रह्मतत्व तब दिग्दिगंत ध्वनित हुआ प्रतिध्वनित हुआ।।
ईशतत्व का विराट रूप तब सिद्धाश्रम में स्फुरित हुआ।
वैश्वानर तब कोटि-कोटि में बिम्बित-प्रतिबिम्बित हुआ।।
ईशतत्व ने नव आकार लिया श्रेष्ठतम् दिव्यतम् सिद्धाश्रम में।
दिव्य रश्मियां फैली जहां से अखिल ब्रह्मांड दिग्दिगंत में।।
ईशतत्व से अवतरित हुआ विराट वैश्वानर भारत भू पर।
निखिलं मधुरं मधुरं निखिलं स्वर गूँज उठे वसुन्धरा पर।।
अखिल प्रकृति के यशोगान और देवपुष्पवृष्टि के साथ-साथ।
मर्त्यलोक के उद्धारहेतु निखिलेश्वरानंद बने विश्वनाथ।।
त्रिभुवन व्यापी सच्चिदानंद, महामहिम निखिलेश्वरानंद।
सिद्धाश्रम की उस तपोभूमि से मानवता को प्रकट आन्नद।।
कैलाश-मानसरोवर-सिद्धाश्रम के अनुपमेय मुकुट मणि।
तेजोमयी-करुणामयी-त्यागमूर्ति सद्गुरु ही शिव कल्याणमयी।।
सच्चिदानंद गुरुदेव का ले आशीष मंत्र-तंत्र-यंत्र उत्थान हेतु।
अहर्निश कार्यशील परम गुरुदेव अवतरित निःस्वार्थ-लोक कल्याण हेतु।।
"शिव-गोरक्ष-पतंजलि" योग त्रिदेव के साक्षात् रूप हैं सद्गुरु।
"चरक-सुश्रुत-निघंटु" त्रिवेणी के प्रयागराज भी सद्गुरु।।
सोलह-कलापूर्ण, ऋद्धि-सिद्धि सम्पन्न, निस्पृह मन सद्गुरु।
त्रिलोकरूपी त्रिकालमयी त्र्यंबकेश्वर सद्यरूप सद्गुरु।।
कृपानिधि सागर मोक्ष प्रदायक सर्वकालिक सद्गुरु।
वरद हस्त जिनका अखिल विश्व पर धन्य-धन्य सद्गुरु।।

– रणजीत सिंह भोगल, पुणे

भैरवी

त्रिपुर सुन्दरी

दस महाविद्याओं की उग्र स्वरूपा साधनाओं में एक सशक्त महाविद्या किंतु अपेक्षाकृत कम प्रचलित एवं कम लोकप्रिय। जिनकी साधना में छुपे हैं त्रिविध रहस्य। महाविद्या साधनाओं की पूर्ण तांत्रोक्त स्तुति के क्रम में एक अभिनव प्रस्तुति। प्रामाणिक साधना-विधि के साथ, शीघ्रता से जीवन में भय, उन्माद, आशंका, मूठ प्रयोग आदि स्थितियों को समाप्त करने के लिए।

यह सम्पूर्ण जीवन वास्तव में आदि से अन्त तक भय से ही तो जुड़ा है। एक व्यक्ति जब से अपने शैशव को त्याग कर जीवन की चैतन्यता में प्रवेश करता है तब से लेकर अपनी अन्तिम श्वास लेने तक भयभीत ही रहता है। केवल प्रत्यक्ष शत्रु या आघात करने पर उद्धत व्यक्ति ही हमारा शत्रु नहीं होता। **जीवन की प्रत्येक परिस्थिति जो हमें सशंकित बनाये रखती हो वे ही भय हैं और ऐसी सैकड़ों स्थितियां होती हैं।** ये स्थितियां जीवन के वर्ष बीतने के साथ-साथ केवल स्वरूप में ही परिवर्तित होती जाती हैं, समाप्त नहीं होतीं। फिर यह भी महत्वपूर्ण नहीं रह जाता कि व्यक्ति शारीरिक रूप से कितना सबल है या उसके पास धन-सम्पदा का क्या बल है, क्योंकि जीवन की सुरक्षा, जीवन की सम्पूर्ण निर्भयता इससे निर्मित होती भी नहीं। कल्पना कीजिए उस स्थिति की जब कोई अत्यन्त धनाढ्य व्यक्ति अपनी कार में जा रहा है और उसका भयानक एक्सीडेन्ट हो जाए, अपहरण हो जाए या कोई स्वस्थ व्यक्ति किसी गम्भीर रोग से ग्रस्त हो जाए। फिर वहां सारा धन का बल, शरीर का बल और किसी भी प्रकार की कोई आश्वस्त करने वाली स्थिति एक ओर सिमट कर रह जाती है। आज के परिपेक्ष्य में जबकि जटिलताएं बढ़ती जा रही हैं, सामाजिक विघटन बढ़ गए हैं तथा व्यक्ति प्रतिदिन एकाकी होता जा रहा है, तब असुरक्षा और असुरक्षा-बोध और भी अधिक बढ़ गया है।

इस स्थिति को व्यक्ति एक सन्यस्त भाव ग्रहण करके ही मिटा सकता है, निश्चिन्त हो सकता है। और तब उसके अन्दर वे सभी प्रतिभायें, स्थितियां और आनन्द स्पष्ट हो सकता है, जो ईश्वर ने उसे मुक्त हस्त से प्रदान किया ही है। **इस निर्भयता के बोध को व्यक्ति अपने प्रयासों से अर्जित नहीं कर सकता** और जिस

अहंमन्यता के वशीभूत होकर वह ऐसे प्रयत्न करता है अर्थात् जिस शारीरिक-बल या बुद्धि-बल के आधार पर अपने चारों ओर सुरक्षा-चक्र खींचने का निरन्तर प्रयास करता रहता है, वे वास्तव में उसे और भी अधिक असहज व व्याकुल बनाए रखते हैं।

जीवन में वास्तविक निर्भयता और निश्चिन्तता के लिए आवश्यक है कि सदैव एक आश्वस्ति रहे, सुरक्षा-बोध को लेकर हड़बड़ाहट न रहे और ऐसा तभी प्राप्त हो सकता है जब किसी आन्तरिक बल की प्राप्ति हो या सही शब्दों में कहें जब हमारे पास कोई दैवी-बल हो। सुरक्षा का बोध, सुरक्षा की स्थिति, भय का समापन — ये सब आन्तरिक स्थितियां ही अधिक हैं और इसी कारणवश शास्त्रों में इस तथ्य को रखा गया कि सन्यस्त भाव का अवलम्बन लेना ही जीवन का वास्तविक सुरक्षा-बोध है। **सन्यस्त भाव का नितान्त रुढ़िवादी अर्थ करके इस बात की व्याख्या नहीं की जा सकती और यदि की गई तो इस दृष्टि से तो गृहस्थ व्यक्ति कभी सुरक्षित हो ही नहीं सकता!** यहां सन्यस्त भाव का अर्थ है कि व्यक्ति साधनाओं, दैवी शक्तियों और सर्वोपरि अपने गुरुदेव से साम्य स्थापित कर उस ज्ञान को प्राप्त करे, साधनाओं की वे गुह्य पद्धतियां समझे, जिन से उसे जीवन में दैवी-शक्ति की प्राप्ति निश्चित रूप से हो।

त्रिपुर भैरवी साधना एक ऐसी ही साधना है, जिसका अवलम्बन लेकर व्यक्ति उस सन्यस्त भाव में आरूढ़ हो सकता है जिससे उसके जीवन के सभी भय समाप्त हों और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सुरक्षा-चक्र मिल सके। यदि कोई बाधा हो तो वह समाप्त हो सके और भविष्य में कोई बाधा उपस्थित न हो सके।

त्रिपुर भैरवी साधना का स्थान दस महाविद्याओं के मध्य होना ही इनकी विशिष्टता को सूचित करने वाला है किन्तु यह स्वरूप अपेक्षाकृत कम प्रचलित रहा, जिसका कारण सम्भवतः यही है कि इनके अत्यन्त तीव्र स्वरूपा होने के कारण ही कालान्तर में इनकी साधना का प्रचलन कम हो गया, क्योंकि जितना तीक्ष्ण वेग होगा, जितनी तीव्र शक्ति होगी, उसको सम्भालने के लिए साधक को भी उतना ही पौरुषवान होना आवश्यक होता है।

यद्यपि साधना कोई भी निष्फल नहीं होती किन्तु जब तक समस्या विशेष के साथ सही साधना का समन्वय नहीं कर लिया जाता तब तक लाभ भी विशिष्टता के साथ नहीं मिल पाते हैं या यों कहें कि साधक को अपनी समस्या के सन्दर्भ में प्रत्यक्ष लाभ नहीं मिलते।

त्रिपुर भैरवी साधना सही अर्थों में जीवन के प्रत्येक भय को समाप्त करने की, चिरस्थायी शांति देने की ही साधना है। मूठ - प्रयोग के समापन की सफल विद्या तो है ही. . .
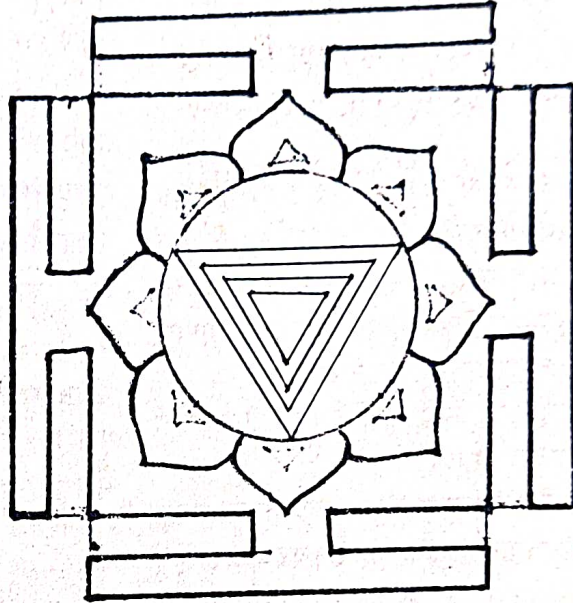
आपदा निवारण के रूप में बगलामुखी देवी की साधना का प्रयोग साधक अधिकांशतः करते हैं, किन्तु बगलामुखी देवी की साधना और त्रिपुर भैरवी की साधना में सूक्ष्म भेद यह है कि जहां बगलामुखी देवी, प्रकट और अप्रकट शत्रु के विनाश में सहायक है, **वहीं भगवती त्रिपुर भैरवी जीवन के सभी भय, भीषण स्थितियों, आपदा का निवारण करने में सक्षम हैं।**

भगवती त्रिपुर यथार्थतः महाभैरव की ही शक्ति है। उनकी मूल शक्ति होने के कारण उनसे भी सहस्रगुणा अधिक तीव्र क्रियाशील हैं। साधक जिन लाभों को भैरव साधना से प्राप्त करता है उन्हें ही इस साधना के द्वारा अधिक तीव्रता और प्रखरता से प्राप्त कर सकता है। भैरव भय-विनाशक हैं और त्रिपुर भैरवी को आधार बनाकर ही अपनी शक्तियों का विस्तार करते हैं। त्रिपुर भैरवी साधना की सबसे गूढ़ विशेषता है कि यह प्रबल रूप से तांत्रोक्त बाधा निवारण की साधना है। **कैसी भी प्रबल मूठ का किसी पर प्रयोग कर दिया गया हो, कैसा भी भीषण तांत्रिक प्रयोग कर दिया गया हो, मारण प्रयोग या द्वेषवश वशीकरण प्रयोग कर दिया गया हो, गृहबन्ध या व्यापार बन्द प्रयोग सम्पन्न करवा दिया गया हो, त्रिपुर भैरवी साधना के उपरान्त वह निष्फल होता ही है** क्योंकि ऐसे समस्त तीक्ष्ण प्रयोगों में भैरव के जिस तामसिक स्वरूप

का अवलम्बन लिया जाता है, उसका निराकरण या उस पर प्रभावशाली नियन्त्रण त्रिपुर भैरवी साधना के अतिरिक्त अन्य किसी साधना से सम्भव ही नहीं।

मूठ प्रयोग आज भी प्रचुरता से किए और कराये जाते हैं और ऐसे समस्त प्रयोगों में व्यक्ति या तो दारुण रूप से मृत्यु को प्राप्त हो जाता है या इतनी अधिक पीड़ा भोगता है, जो मृत्यु से भी अधिक भयावह होती है तथा सारे उपाय करने के बाद भी उसे असफलता ही हाथ लगती है। सामान्य उपचारों की अपेक्षा व्यक्ति को चाहिए कि ऐसी स्थिति में त्रिपुर भैरवी प्रयोग सम्पन्न करे, और यदि कोई व्यक्ति त्रिपुर भैरवी की साधना महाविद्या रूप में कर लेता है तो वह अपना सम्पूर्ण जीवन निष्कंटक बनाने के साथ-साथ इतना अधिक तेजस्वी और तांत्रोक्त क्षमताओं से युक्त हो जाता है कि आगे बढ़कर दूसरे के उपचार में भी लाभदायक सिद्ध होता है।

त्रिपुर भैरवी का स्वरूप तीक्ष्ण अवश्य है किन्तु उससे भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। मां अपने शिशु के लिए कभी भी भयावह नहीं हो सकती यदि साधक का भाव शिशु का हो। अत्यन्त प्रचण्ड स्वरूपा मां भगवती त्रिपुर भैरवी अपनी सम्पूर्ण क्रोधमयता और उग्रता के उपरान्त भी अपने ओठों के एक कोने में ऐसी मृदुता समाये हुए हैं जो सिद्ध करती है कि देवी का कोई भी स्वरूप हो, उसमें मातृत्व होता ही है।

भैरव साधना से सम्बन्धित होने के कारण त्रिपुर भैरवी की साधना का दिन भी रविवार ही माना गया है। यह रात्रिकालीन साधना है। किसी भी रविवार को दस बजे के पश्चात् साधक लाल वस्त्र धारण कर ऊनी आसन पर दक्षिण-मुख होकर बैठे। सामने लाल वस्त्र पर **भगवती त्रिपुर भैरवी** का चित्र एवं **प्राण प्रतिष्ठित त्रिपुर भैरवी यंत्र** स्थापित कर लें। चूंकि भगवती त्रिपुर भैरवी और महाभैरव का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है अतः इस साधना में भैरव की स्थापना भी परम आवश्यक मानी गई है। भैरव की स्थापना काले तिलों की ढेरी पर या तो **'भैरव लिंग'** के रूप में **अथवा** भैरव लिंग अप्राप्त होने पर **'मधुरुपेण रुद्राक्ष'** के रूप में की जानी चाहिए। इस साधना में सफलता का सूत्र है कि यदि इस साधना सम्पन्न करने से पूर्व संक्षिप्त शिव पूजन कर लिया जाए तो साधक को साधना में न तो भय व्याप्त होता है और न कोई विपरीत प्रभाव झेलना पड़ता है। भगवान शिव की साधना करने के लिए अपने सामने **'भगवान शिव का प्राण प्रतिष्ठित चित्र'** एवं **'लघु शिवयंत्र'** स्थापित कर लें।

सर्वप्रथम भैरव– स्थापना अर्थात मधुरुपेण रुद्राक्ष पर एक लाल फूल चढ़ाकर निम्न ध्यान का उच्चारण करें तथा इस साधना को करने के लिए आज्ञा प्राप्त करें।

ध्यायेन्नीलाद्रि– कान्तिं शशिशकल धरं मुण्डमालं महेशं दिगूवस्त्रं पिंगलाक्षं डमरुमथ सृणिं खड्ग-शूलामयानि नागं घण्टां कपालं कर सरसिरु है र्विभ्रतं भीम दंष्ट्रम् सर्पाकल्पं त्रिनेत्रं मणिमय विलसत् किंकिणी नूपुराद्यम्

भैरव पूजन एवं भैरव आज्ञा के बाद भगवान शिव का पूजन करें, उनके चित्र के समक्ष श्वेत पुष्प चढ़ाएं और लघु शिव यंत्र का पूजन केवल श्वेत चन्दन, केवड़े के पुष्प (या केवड़ा जल) और अक्षत से करें। इसके पश्चात् मूल साधना प्रारम्भ होती है। भगवती त्रिपुर भैरवी के चित्र के सामने तेल का एक बड़ा दीपक जला कर लाल पुष्पों एवं एक बड़े फल को बलि रूप में निवेदित करें। यंत्र पर काजल और सिन्दूर का टीका करें तथा निम्न ध्यान उच्चरित करें–

उद्यद्भानु सहस्र कान्तिमरुण क्षौमां शिरोमालिकाम् रक्तालिप्त पयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम् हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्र विलसद् वक्त्रारविन्द श्रियम् देवीं बद्ध हिमांशु रत्न मुकुटां वदे समन्दस्मिताम्

उपरोक्त ढंग से ध्यान एवं पूजन करने के पश्चात् **सफेद हकीक माला** से निम्न मंत्र की एक अथवा ११ माला मंत्र जप करें।

मंत्र

।। हसैं हसकरीं हसैं ।।

मंत्र-जप सम्पूर्ण हो जाने पर यदि एक दिवसीय साधना के रूप में, मूठ प्रयोग आदि के विनाश के रूप में यह साधना सम्पन्न की है तो लघु शिव यंत्र, त्रिपुर भैरवी यंत्र, मधुरुपेण रुद्राक्ष एवं हकीक माला एक लाल वस्त्र में जितनी समस्याए हो उतने **तांत्रोक्त फलों** के साथ बांधकर (प्रत्येक समस्या का स्पष्ट उच्चारण करते हुए) दूसरे दिन विसर्जित कर दें तथा चित्रों को मढ़वा कर पूजा स्थान में स्थापित कर दें। यदि इसी साधना को महाविद्या रूप में सिद्ध करने की इच्छा हो तो उपरोक्त प्रयोग ग्यारह दिनों तक नियमित रूप से करना आवश्यक होता है तथा महाविद्या रूप में सिद्ध करने की आकांक्षा रखने वाले साधकों को नित्य ५१ माला मंत्र-जप करना अनिवार्य होता है, जिसे वे प्रातः एवं रात्रि दो बार में भी कर सकते हैं। इस सम्पूर्ण काल में ब्रह्मचर्य एवं स्वच्छता का पालन दृढ़ता से करना चाहिए। त्रिपुर भैरवी के सिद्ध साधक को आगे चल कर श्मशान साधनाओं, इतर योनियों की साधनाओं, उग्र साधनाओं में कोई भय रह ही नहीं जाता और महाभैरव की उसे असीम कृपा कई प्रकार से प्राप्त होने लगती है। ❋

गुरु साक्षात् परब्रह्म

परम पूज्य गुरुदेव,

कोटि कोटि वन्दना,

मैं एक सेवानिवृत सैनिक अफसर हूं। **मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान का जुलाई ९३ अंक** पहली बार पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। मैं बहुत अधिक रोमाञ्चित हो आया और बिना किसी विलम्ब के मैं पत्रिका का आजीवन सदस्य बन गया।

कलकत्ता शिविर के बारे में खबर मिलते ही १९ सित० ९३ के दिन मैं वहां पहुंच गया। २१ सित० ९३ की रात्रि के लगभग २०.३० बजे अलीपुर में गुरुदर्शन और चरणस्पर्श का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह मेरे जीवन का सर्वाधिक श्रेष्ठ और आनन्द का क्षण था।

गुरुदेव का प्रवचन आरम्भ हुआ और मैं एकटक उनके चेहरे पर ध्यान लगाकर निहार रहा था ताकि मैं उनका दिव्य मुखारविन्द को मेरे हृदय में बिठा सकूं। देखते ही देखते वह चेहरा बिल्कुल २०-२५ वर्ष का नवजवान का माफिक सुडौल और सम्पूर्ण रूप से भरा हुआ गोल हो गया। और उस चेहरे का रंग एकदम आसमान की तरह नीला हो गया। जो Back ground पर desorated पर्दा लगा हुआ था वह भी बिल्कुल आसमान के माफिक नीला हो गया। अब हमें दृष्टिगोचर हुआ कि यह तो साक्षात् भगवान् शिव का हूबहू रूप है, जो मेरे पूजा कमरे में है, जिसे मैं हर समय पूजा करते रहता हूं। वह दृश्य और चेहरा बहुत ही मनमोहक, अतिसुन्दर और दिव्य था। उस समय हमें महसूस हुआ जैसे भगवान् शिव शून्य गगन में बैठे हुआ झांक रहे हैं। हमें विश्वास नही हो रहा था कि इस कलयुग में इस प्रकार साक्षात् बाबा भोलेनाथ का सुन्दर छवि देखने का अवसर प्राप्त हो सकेगा, बिना तपस्या और साधना के। हमें यह भान हुआ कि शायद टी० वी० वाले का कैमरा का रिफलेक्शन होगा इसलिए

मैंने नजर हटाकर टी० वी० वालों को देखा और फिर उस दिव्य रूप को, किन्तु तब तो वहां वह था नहीं और गुरुदेव प्रवचन दे रहे थे।

अगले दिन २३ जन० ९३ को मैंने **रसेश्वरी दीक्षा** प्राप्त की।

२४ अक्टू० ९३ में भिलाई में मैंने शक्तिपात से **कुंडलिनी जागरण दीक्षा** लिया। जब गुरुदेव ने दीक्षा समाप्त की तो मुझे एक प्रकार की मदहोशी छा गई। मुझे लगा कि मैं गिरने वाला हूं। सीढ़ी से नीचे उतरना था लेकिन मुझे हिम्मत नहीं हुई नीचे उतरने का। मैं वहीं पर बैठ गया। उस समय मैंने देखा और अनुभव किया कि मेरे दोनों भुजाओं पर और घुटनों के थोड़ा ऊपर जांघ पर जैसे आखें फड़कती है वैसा हो रहा है। एक मिनट भी ज्यादा यह फड़कना होता रहा। ऐसा लगा कि सारे बदन पर कंपन छूटने वाला है लेकिन तकरीबन १० मिनट के पश्चात् मैं सामान्य स्थिति में आ गया।

यह मैंने अपनी फौजी लिहाजा से वर्णन किया है और अपनी बोलती भाषा में लिखने में कोशिश की है। यदि आप उचित समझें तो प्रकाशित कर दें ताकि सब पाठकों को विश्वास हो जाय कि गुरुदेव साक्षात् परब्रह्म स्वरूप है। इसमें दो राय नहीं है।

आपका चरण धूल

मेजर विनोद कुमार गुरुंग

बागडोगरा, दार्जिलिंग

महालक्ष्मी दीक्षा से कारोबार सुधरा

पूज्यनीय गुरुदेव जी,

चरण स्पर्श,

मैं लगभग एक डेढ़ साल से बहुत ही ज्यादा परेशान चल रहा था। क्योंकि मेरा कोई न कोई हर रोज नुकसान होता जा रहा था। मेरा कारोबार भी बहुत घट गया था। मैं बहुत परेशान था। जिन्दगी से तंग आ चुका था। इसी कारण मैं हर रोज परेशान होकर ४० या ५० रुपये तक की सिगेरट पी जाता था। तभी समय में बदलाव आना था कि मेरे ही शहर के एक मित्र मिले उन्होंने मुझे मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान का **महालक्ष्मी विशेषांक** पढ़ने के दिया, मैं बहुत ही आकर्षित हुआ और मैंने दीपावली पर कुछ अनुष्ठान भी किए। मैंने १० दिसम्बर को फोन किया तो देहली आश्रम वालों ने मुझे बताया कि गुरुदेव जी आज देहली में ही है। मैं अगले दिन सुबह देहली पहुंच गया और गुरुदेव जी ने मुझे **महालक्ष्मी दीक्षा** दी। जब मुझे दीक्षा देने का कार्यक्रम पूरा हो चुका और मैं घर जाने के लिए जब आश्रम से बाहर आया तो मेरे अन्दर एक बहुत बड़ा परिवर्तन आया हुआ था। जैसे घबराहट नाम की कोई चीज नहीं थी और मैं भूल गया कि मैं कभी ५० रुपये की हर रोज सिगरेट पीता था। आज मैं जान कर भी सिगरेट पीना चाहूं तो मैं सिगरेट नहीं पी सकता। पता नहीं गुरुदेव जी मेरे अन्दर किस प्रकार की शक्ति का संचार कर दिया हो। तमाम परिवार वाले मेरी सिगरेट को छोड़ने से खुश हैं और मेरे तमाम काम बनने शुरु हो गए हैं, कारोबार भी ठीक चल रहा है और मेरे को गुरु जी द्वारा दी गई नित्य प्रति की पूजा-साधना भी ठीक चल रही है और हर समय मेरा मन यही करता है कि मैं गुरुदेव जी को बार-बार मिलूं ताकि मेरा जीवन सफल हो।

आपका

शिष्य (सेवक)

श्रीनिवास सिगला, मेसर्स पंकज ट्रेडिंग कम्पनी, (क्वालिटी फरनीचर शोरूम)

नजदीक बड़ा डाकखाना, जिलाः- कैथल

मनोरंजन व ज्ञान का भरपूर खज़ाना

प्रथम सेट की अपूर्व सफलता के कारण छः पुस्तकों के स्थान पर आठ पुस्तकों की द्वितीय श्रृंखला . . .

सौन्दर्य

नयी परिभाषाएं, नयी व्याख्याएं, एक-एक शब्द सरसता में डूबा, मानों शब्दों से ही सौन्दर्य मूर्त रूप में खुद ब खुद ढल रहा हो प्रत्येक लेख अपूर्व मादकता में सराबोर।

तारा साधना

दरिद्रता के अंधकार से तारण देने वाली महाविद्या तारा की सिद्ध साधना पद्धति जिसके आधार पर साधकों ने नित्य प्रातः सिरहाने दो तोला सोना प्राप्त करना स्वयं अनुभव किया ही है।

तंत्र साधनाएं

युग के ही अनुरूप विभिन्न देवी-देवताओं की गोपनीय तांत्रोक्त साधनाओं को लघु कलेवर में पूर्णता से प्रकाशित करने का प्रथम व दुर्लभ अवसर।

जगदम्बा साधना

प्रत्येक शक्ति साधना, महाविद्या साधना अथवा किसी भी तांत्रोक्त साधना को सिद्ध कर लेने की, प्रथम बार में पूर्णता प्राप्त कर लेने की क्रिया, साथ ही मां भगवती जगदम्बा के जाज्वल्य रूप के दर्शन प्राप्त कर लेने का रहस्य भी तो!

सीरिज के

ब . . . ढ़ . . . ते

क . . . द . . . म

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य ५/-

पूर्ण जानकारी के लिए

सम्पर्क

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान

डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी, जोधपुर, (राज.) - ३४२००१

फोनः ०२९१-३२२०९

अथवा

गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, नई दिल्ली-११००३४

फोनः ०११-७१८२२४८

शिव साधना

सब कुछ किया किंतु इन औढरदानी देव का रहस्य न जाना, प्रसन्न करने की साधना पद्धति न प्राप्त की तो सब कुछ अधूरा ही रह जाता है क्योंकि जहां शिव है वहीं जीवन की पूर्णता, चैतन्यता, आनंद और निरोगता भी तो है।

उर्वशी साधना

प्रथम सेट में प्रकाशित *'अप्सरा साधना सिद्धि'* को विस्तार से प्रस्तुत करने के पाठकों के विशेष आग्रह के क्रम में एक सजीव पुस्तक। विवरण की अनोखी शैली, गोपनीय आबद्ध प्रयोग के साथ।

हिप्नोटिज्म

सम्मोहन के विशाल विषय को सरलता से लघु कलेवर में समेटने की क्रिया, जिससे साधक को अल्पकाल में ही सम्मोहन का महत्व और विशेष सूत्र मिल सके।

स्वर्ण सिद्धि

कीमियागीरी अर्थात् स्वर्ण निर्माण पद्धति भारत की ही सारे विश्व को देन रही है। इसी को सप्रमाण बताती हुई एक अनोखी पुस्तक।

अरविन्द प्रकाशन, जोधपुर की नवीन प्रस्तुतियां!

लहरों पर तैरने का सुख, हंसों की तरह किलोलें करने की बात, थिरकन और सारे शरीर से फूटती संगीत की लहरियां. . .

दीक्षायोग के अतिरिक्त शायद ही कोई अन्य योग इस यात्रा पर साथ ले चलता हो . . .

दीक्षा योग

समुद्र के किनारे रहने वाले मछुआरों को जब समुद्र के बीचों-बीच जाना होता है तो वे अधिक कुछ नहीं करते, समुद्र के थोड़ा और करीब आ जाते हैं अपनी नाव लेकर और उस क्षण, उस लहर की प्रतीक्षा करते रहते हैं जो आकर उन्हें अपने साथ खींच ले। सही लहर आई नहीं कि वे अपनी नाव को उफनती लहरों में बेहिचक छोड़ देते हैं, उठती-गिरती और हिचकोले खाती नाव थोड़ी ही देर बाद लहरों पर तैरती हुई ठीक वहां पहुंच जाती है, जहां फिर कोई हलचल नहीं, कोई तूफानों का शोर नहीं और सर्वत्र बिखरा हुआ एक प्रशान्त मौन . . . उड़ते हुए श्वेत पक्षी, थिरकन और समुद्र का वह स्थान-जो रत्नगर्भा है।

साधक भी ऐसा ही करते हैं। जब गुरु के समीप आते हैं तो उस धड़कन की प्रतीक्षा करते रहते हैं जब सही क्षण आये, उनकी कृपा की एक वेगवती लहर आए और वे उस पर तैर कर उस प्रशान्ति तक पहुंच सकें, जहां लहरों का मधुर संगीत, उसकी थपकियां और गुनगुनाहट ही बस शेष रह जाती हो।

किसी भी योग की अन्तिम स्थिति इसी प्रशान्त और गहन समुद्र के पास पहुंचने तक की ही यात्रा होती है। यही समाधि की वास्तविक स्थिति भी होती है और यही **'विचार-शून्य'** मन-मस्तिष्क को प्राप्त करने की दशा भी है। समुद्र बीचों-बीच में भी जाकर नितान्त शांत नहीं होता, गति वहां भी शेष रह जाती है पर वह गति तो जीवन का एक क्रम है, और ऐसी ही लहरों पर, ऐसी ही शांत लहरों पर उजले पंख लिए पक्षी आकर तैरते हैं, प्रेम के, आनन्द के और चैतन्यता के शुभ्र श्वेत पक्षी।

राजयोग, कर्मयोग, ज्ञानयोग, प्रेमयोग- जो भी जीवन में मिलन करा दे वही 'योग' है। जो अपने भीतर से ही जोड़ दे वही 'योग' है। जो अपने अन्दर की यात्रा

पूरी करा दे, बाहर भटकता मन उन्मनी होकर अन्तस की ओर लौट आए, यह जान जाए कि वह तो सदा से अक्षय कोष के मुंह पर बैठा था। ठीक उसके नीचे ही रत्नों का भंडार छुपा था। लहरों की सी थपकियां देती जीवन की हलचलों के नीचे, घोंघे और सीपी को छोड़ जहां मोती ही मोती भरे थे, वह वहां तक पहुंच जाए, तो वहां तक पहुंच जाना ही 'योग' है।

कुछ भी नहीं करना होता योग में। अपने को अपने भीतर खोज लेने के लिए व्यर्थ में भाग-दौड़ ही क्यों? जो सुख अपने अन्दर छुपा है उसके लिए इतनी उद्विग्नता क्यों? न बाह्य संसार में सुख है, न सुख के लिए इधर-उधर भटकने में सुख है। नेति, धोती की क्रियायें भी तब आवश्यक नहीं हैं। न घंटों आंख मूंद कर बैठना है, न सांस को किसी प्रकार से दबा कर छोड़ना है, न शरीर को उल्टा-पुल्टा करना है, क्योंकि ये सब योग की क्रियायें मात्र है। इनसे हम उस परम, उस अनिर्वचनीय सुख को प्राप्त कर ही लें, यह आवश्यक नहीं, जबकि दीक्षा ऐसा करती है।

दीक्षा एक बीज है जो किसी तरह से एक बार बस मन में पड़ जाय तो फिर वह अपनी जिजिविषा से कैसी भी सख्त धरती क्यों न हो उसको तोड़ कर अंकुरित हो ही जाती है। तब घुटन और अन्धकार के बाहर आशा का एक अंकुर फूटता है और वह उन्मुक्त आकाश की ओर निहारता हुआ, बढ़ते हुए आकाश को चूम लेने तक ऊंचा हो जाता है। **दीक्षा में भी ऐसा ही होता है।** अन्धकार और घुटन से लेकर उस निर्मल आकाश तक उठ कर उसको चूम लेना होता है। उस आकाश को जो गुरु का ही प्रतिरूप माना गया है, जो निर्मल कहा गया है और जिसमें अवस्थित होना एक योगी की अन्तिम स्थिति कही गयी है।

कोई भी योग की पद्धति हो, कोई भी साधना-पद्धति हो उसका लक्ष्य एकमात्र आध्यात्मिक ही होता है, लेकिन इस यात्रा में बहुत कुछ ऐसा भी स्पर्श में आ जाता है, जो दैनिक जीवन को संवारने वाला होता है।

अपने को अपने ही भीतर खोज लेने के लिए व्यर्थ में इतनी भाग दौड़ ही क्यों? जो सुख अपने ही अन्दर छुपा है उसके लिए इतनी उद्विग्निता क्यों?

दीक्षायोग क्रियाएं नहीं करवाता, उस आनन्द से परिचय करवाता है, जिसको प्राप्त करना ही किसी भी योग का लक्ष्य हो सकता है।

. . . किन्तु व्यवहारिक जीवन की उपेक्षा करके नहीं।

वृक्ष के जन्म के पश्चात् उस में एक चेतना होती है, जीवन-रस होता है, उछाह और एक निराली यात्रा होती है। घुटन से उठकर, सड़ाँध से निकल कर ऊपर आकाश छू लेने तक राह में वह पुष्प बिखेरता है, रंग, गंध और अपने सारे अस्तित्व का एक-एक कण। उसकी पत्तियां, उसकी जड़, उसकी शाखा, **क्या कुछ गीत नहीं गाती जीवन के।**

गुरु भी अपना प्रवाह देते हैं इस प्रकार एक योग करने के लिए! देवदार के वृक्ष की तरह पवित्र बनने के लिए और यह तो फिर होता ही है कि इस क्रम में बहुत कुछ और संवरता चला जाता है। **चाहे वह रोजमर्रा की जिन्दगी हो या बरसों से साथ चली आ रही मानसिक गुत्थी, शरीर की जड़ता, दबी-छुपी इच्छायें और भी बहुत कुछ,** क्योंकि मानव जीवन जहां अनन्त कामनाओं को समेटे है, वहीं अनन्त सम्भावनाओं को भी समेटे है— प्रेम की सम्भावनायें, दया, ममता, करुणा की भी सम्भावनायें जिनके माध्यम से किसी को छाँव मिले।

गुरु ऐसे ही वृक्ष उपजाते हैं, अपने आकाश रूपी हृदय से लगाते हैं, उन्हें सघन बनाते हैं जिनकी छांव के नीचे पूरी मानवता विश्राम करती है, पर वृक्ष . . . वृक्ष तो उन्मुक्त, नृत्ययुक्त उठता ही जाता है, उड़ता ही जाता है, धरा से उठकर आकाश में समाने के लिए।

यही इस युग का वास्तविक योग है। योग की अन्य पद्धतियां भी अपने स्थान पर अपने-अपने ढंग से महत्वपूर्ण हैं, किन्तु जिस पद्धति में अनन्त संभावनायें आ समायी हैं वही **दीक्षा योग** है।

जो घुटन में, सड़ांध में अपनी अस्मिता खो चुके है उन्हें उगना है एक वृक्ष की भांति, धरा पर अपने-आप को स्थापित करते हुए। जो निकल चुके हैं जीवन के प्रवाह से बंधे-बंधाएं क्रम को छोड़ और आ चुके हैं गुरु रूपी समुद्र के पास, उन्हें सही लहर पकड़ कर अब समुद्र के गर्भ में जाना ही है। **यही दीक्षा योग है।**

योग की परिभाषा प्रकृति से है। वृक्ष, पर्वत, सागर, नदियां पल-पल

जिस तन्मयता में लीन होकर अपने रोम-रोम से गुरु का जो अनहद गुंजरित कर रही हैं, उससे परे हटकर योग को कैसे कहें? **दीक्षा को शब्दों में बांध कर कैसे बतायें?** दीक्षा तप का एक बल ही नहीं, गुरु रूपी समुद्र का एक प्रवाह ही नहीं, यह तो उससे भी परे हटकर करुणा का एक अजस्र प्रवाह है। उसी करुणा का जो आज एक अप्रसांगिक शब्द हो गयी है। जिसको ग्रहण करना और प्रदान करना दोनों ही भुलाया जा चुका है। **दीक्षा प्रेम की रिम-झिम फुहार है जिसमें भीगना और भिगोना दोनों ही कविता की काल्पनिक बात जैसी मान ली गई है।** व्यवहारिक जीवन तो बहुत अधिक तीव्र, बहुत अधिक चतुर, बहुत अधिक वाक्-पटु और बहुत अधिक समझदार हो गया है!

इसी युग में सब गणित हो गया है। भावनायें और जीवन की उदात्त स्थितियां हास्यास्पद दृष्टि से देखी जाने लगी हैं। दीक्षा को जब गोल में ली जाने वस्तु समझ लिया गया है, तब **दीक्षायोग** जैसा कुछ कहना बहुत महत्वपूर्ण शायद नहीं है किंतु जीवन के नितान्त भौतिक क्षणों से ऊपर उठने पर या भोग के बाद भी अतृप्ति शेष रह जाने पर जो शून्य बचता है, हास्य के बाद भी तो मन के कोने में जो रुदन शेष रह जाता है, सारी जगमगाहटों के बावजूद जो अंधकार घना रह ही जाता है और सब कुछ होते हुए भी जिस 'कुछ' की कमी बेहद खटकती रहती है, उन सभी का उत्तर यही दीक्षा योग ही है, क्योंकि यह 'प्राण' का प्रवाह है।

एक क्षुद्र देह में बद्ध प्राण की असीम ब्रह्माण्ड में विस्तारित होने की जो कामना है, वही कभी प्रेम के माध्यम से, कभी करुणा के माध्यम से, कभी अपनत्व के माध्यम से विस्तारित होने को प्रत्येक व्यक्ति में थोड़ी या बहुत तड़फ लेकर रहती ही है। सामान्य व्यक्ति के दृष्टि-पटल के सामने पारिवारिक सम्बन्ध होते हैं जिन्हें वह अपना प्रेम, करुणा और अपनत्व देता है, और गुरु के सामने समस्त ब्रह्माण्ड उनका अपना होता है।

ऐसे ही प्राण स्वरूप गुरु के प्राणों में समाहित होने की क्रिया, रच-पच जाने की और घुल-मिल जाने की क्रिया है **'दीक्षा योग'।** जिसमें बस किसी पल आकर किनारे खड़ा हो जाना है, **वे खुद लहर बनकर आयेंगे और अपने भीतर तक ले जायेंगे,** वहां रत्नों के गर्भ तक! —जीवन के बीचों-बीच!

जो निकल चुके हैं जीवन के बंधे-बंधाए प्रवाह को छोड़कर और आ चुके हैं गुरु रूपी समुद्र के पास, उन्हें सही लहर पकड़कर समुद्र के गर्भ तक जाना ही होगा।

यही दीक्षा योग है!

गुरुधाम जोधपुर में दोलोत्सव

प्रकृति के परिवर्तन के साथ किस प्रकार हृदयों पर गुलाल मल दिये जाते हैं और नये वर्ष के स्वागत के लिए आम के मंजरियों की भांति मन को सुगन्धित कर दिया जाता है, इसी को यथार्थ रूप देने का अवसर है दोलोत्सव, जो इस वर्ष पूज्यपाद गुरुदेव की उपस्थिति में सैकड़ों साधकों एवं साधिकाओं के मध्य साकार रूप ले सका। जिसे सामान्यतयः होली का पर्व कहते हैं।

कृत्रिम रंगों से कहीं गहरे होते हैं वे रंग जिन्हें गुरु अपने हाथ से साधकों के अन्तर्मन पर लगा दें और ऐसी ही घटना एक युग बाद पूज्यपाद गुरुदेव की उपस्थिति में साकार रूप ले सकी। सही अर्थों में यह ऋतु- उत्सव ही था जब स्वयं सुगन्ध से भरकर प्रकृति का ही स्वागत कर लिया गया और एक प्रकार से कृष्ण का युग जोधपुर गुरुधाम की भूमि पर साकार रूप ले सका।

सौभाग्यशाली रहे वे जो इस अवसर पर पूज्य गुरुदेव में निहित **"कुछ"** और भी देख सके और एक अनोखी उत्सवमयता में सराबोर होकर उसे अपने स्मृति की एक स्थायी घटना बना सके। सम्पूर्ण भारत वर्ष से आए साधकों के साथ **गुरुधाम जोधपुर के सभी शिष्यों, गुरुधाम दिल्ली से राकेश यादव, श्रीमती कनक पाण्डे के साथ मधु जोशी, निधि, नेहा, निष्ठा, बॉबी, प्रीति मेहता, गीता गोयल, श्रीमती नीरजा एवं अन्य विशिष्ट अतिथियों** ने भाग लेकर इस उत्सव की गरिमा व आह्लाद का पूर्ण आस्वादन किया।

दो दिवसीय इस कार्यक्रम में रंगों की बौछार तो थी ही, स्नेह का गुलाल तो था ही, नृत्य, संगीत एवं मधुरता की जो लहरियां प्रवाहित हुई वही सही अर्थों में इस पर्व की भावना है और जीवन का उत्साह है, क्योंकि जहां जीवन में साधना आवश्यक है वहीं जीवन में रसमयता भी आवश्यक है। जीवन का जो अध्याय किसी भी शास्त्र में नहीं लिखा है, उसी अध्याय को पूज्यपाद गुरुदेव ने अपने इंगितों से, अपने कृपा- कटाक्षों से साधकों और साधिकाओं के मन में उतार दिया।

राजनीतिक भविष्य एवं शेयर मार्केट

पिछले माह की उथल-पुथल के बाद उसके पश्चातवर्ती क्रम ही इस माह भी चलते रहेंगे। सामान्य तौर पर स्थिति शांत घोषित की जायेगी लेकिन आशंका और भय का वातावरण बना ही रहेगा। पाकिस्तान की गुप्तचर एजेंसी का हाथ स्पष्ट रूप से सामने आएगा। किन्तु सरकार की नीति अस्पष्ट व ढुलमुल ही रहेगी। भारत के प्रति पाकिस्तान एक प्रकार से अघोषित युद्ध ही छेड़ देगा। राष्ट्रीय पटल पर कश्मीर की समस्या व सुरक्षाबलों की तथाकथित रूप से उत्पीड़न की घटना आलोचना का केन्द्र बनी रहेगी। राष्ट्रीय स्तर पर अनेक मुख्य विषय निर्णय के अभाव में लम्बित पड़े रहेंगे। इस उथल-पुथल तथा कुछ अन्य विशेष कारणों से उद्योगों के लिए यह माह विशेष रूप से संकट पूर्ण रहेगा। मध्य-प्रदेश के मुख्यमंत्री को अपने ही दल के असन्तुष्टों की चुनौतियों का प्रबल सामना करना पड़ेगा। हिमाचल प्रदेश की राजनीति में भी उतार-चढ़ाव आयेंगे। उत्तर-प्रदेश के मुख्यमंत्री आलोचना के केन्द्र में रहेंगे किंतु उनकी स्थिति सबल बनी रहेगी। उत्तर-प्रदेश के तराई इलाकों में आतंकवादियों की समस्या पुनः गम्भीर रूप लेगी। पूर्वोत्तर राज्यों में कानून-व्यवस्था नियंत्रण में बनी रहेगी।

विशेष चिन्ता की बात यह है कि जातीय हिंसा व तनाव नये-नये केन्द्र स्थापित होंगे जिनसे उन पर नियन्त्रण करना कठिन होगा। गर्मी का प्रकोप इस वर्ष वेहद कम रहेगा। माह के दूसरे पखवाड़े में यदि वर्षा नहीं हुई तो नम हवायें अवश्य ही चलती रहेंगी। महाराष्ट्र में हल्के भूकम्प के झटके आने की पुनः सम्भावना है, जिसका केन्द्र पुणे के आसपास होगा।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व का ध्यान पुनः सर्वो समस्या पर केन्द्रित होगा। अफगानिस्तान में गृह युद्ध जोर पकड़ेगा। दक्षिण अफ्रीका में यूरोपीय देशों का गठबन्धन वहां की नस्लवादी शक्तियों को बल देगा। यही गठबन्धन अमेरिका के प्रति कड़ी टिप्पणियां करेगा व व्यापार सीमित करने का प्रस्ताव पारित करेगा। इजराइल व फिलीस्तीन में गतिरोध दूर होंगे तथा स्थितियां तेजी से सामान्य होंगी। अमेरिका के लिए यह माह विशेष रूप से कठिन है। वह सम्पूर्ण विश्व में अपनी अदूरदर्शिता के कारण आलोचना व उपहास का केन्द्र बनेगा।

शेयर मार्केट

बम्बई शेयर मार्केट के लिए यह माह कठिनाई से भरा है जबकि देश के अन्य केन्द्र सामान्य रहेंगे। **इस माह के उन्नतिशील शेयर इस प्रकार हैं-** एच० एम० टी०, सिपला, लार्सेन एण्ड टुब्रो, मॉर्डन ग्रुप में केवल मॉर्डन सूटिंग्स, केल्विनेटर, जय प्रकाश इन्डस्ट्रीज, बिरला ग्रुप के सभी शेयर (विशेष रूप से हिन्दुस्तान मोटर्स), नेस्ले के भाव में मामूली सा उतार आयेगा। रिलायन्स ग्रुप की स्थिति डावांडोल ही बनी रहेगी। टिस्को, टिल्को सामान्य से भी नीचे चले जायेंगे। हीरो होण्डा, गुजरात गोदरेज, गार्डन सिल्क, ऊषा इन्टरनेशनल, ऊषा रेक्टीफायर, लुपिन इन्डस्ट्रीज, जिंदल फोटो **-दूसरे स्तर पर इस माह के सुरक्षित व लाभदायक शेयर हैं।**

यह माह शेयर मार्केट में हलचल लेकर आयेगा। नये महत्वपूर्ण इश्यु बाजार में आयेंगे। वास्तव में इस माह के शेयर मार्केट पर पिछले माह की उथल-पुथल का जो प्रभाव पड़ेगा उससे न तो कोई शेयर बहुत अधिक उछाल लेगा न एकदम से नीचे लुढ़केगा। व्यवस्था और स्थितियों के पुनर्निर्धारण में पूरा माह बीत जाएगा।

विन्दल ग्रुप के शेयर इस माह मामूली सा उतार देखेंगे लेकिन कुल मिलाकर उन्हें घाटे का सौदा नहीं कहा जा सकता, जबकि डी० सी० एम० ग्रुप के शेयर बम्बई में विशेष रूप से जोखिम से भरे रहेंगे। इन्डोगल्फ फर्टीलाइजर, यू० टी० आई० मास्टर गेन निरन्तर स्थिर रहेंगे। बी० पी० एल० इलैक्ट्रॉन थोड़ा नीचे जायेगा, जबकि अरविन्द मिल्स का व्यवसाय उत्तरोत्तर उन्नति की ओर अग्रसर होगा। विशेष रूप से विदेशी यार्न के सन्दर्भ में। इस माह जिस शेयर में एकाएक बहुत तेज उछाल आयेगा वह है चम्बल फर्टीलाइजर।

अनाज, दलहन के बाजार में भी पिछले माह की स्थितियों के प्रभाव पड़ेंगे। मोटे अनाज स्थिर रहेंगे जबकि दलहनों में अरहर का भाव तेजी से बढ़ेगा। मेवा बाजार ठन्डा रहेगा, मांग में कमी आयेगी। खाद्य तेलों के व्यवसाय में स्थिति और निराशाजनक होगी। किराना बाजार में भारी फेर बदल होगा। केसर, जावित्री, तेजपत्ता के दाम आसमान छूएंगे। काली मिर्च, आजवायन, हल्दी, सोंठ और पोस्त दाना भी सामान्य से कहीं अधिक मंहगे होंगे।

महाभैरव साधना
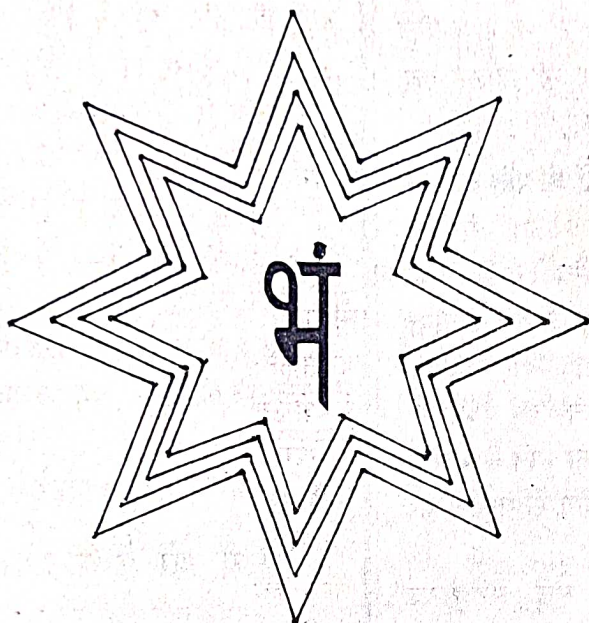
"साधना के उन्नत स्वरूपों में महाभैरव की साधना एक विशिष्ट स्थान रखती ही है और विशेष रूप से गुरु भक्त एवं शिव भक्त साधकों के जीवन में तो इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

भैरव साधना का सम्पूर्ण क्रम महाभैरव साधना! गुरु साधना एवं शिव साधना के पक्षों को समाहित करते हुए"

भैरव साधना एक उग्रसाधना मात्र नहीं है। भैरव साधना के अनेक पक्ष हैं। भैरव प्रचण्ड, उग्र स्वरूप में होते हुए भी विशेष साधनाओं के द्वारा सौम्य स्वरूप में भी सिद्ध किए जा सकते हैं। भगवान शिव के ही अंश, उन्हीं के गण होने के कारण वे शिव स्वरूप में अर्थात् शांत स्वरूप में वरदायक भी हैं। कुछ साधना ग्रंथों में भैरव की साधना के तीन प्रकार बताये गए हैं – पुरुष रूप में, स्त्री के रूप में एवं बाल रूप में। इसका भी यही अर्थ है कि भैरव सौम्य, कोमल एवं देशकाल की स्थिति के अनुकूल वरदायक अथवा उग्र स्वरूप में प्रकट होने वाले देव हैं। **भैरव की साधना करने के इच्छुक साधक को प्रारम्भ में ही यह बात स्पष्ट कर लेनी लाभदायक रहती है क्योंकि तब वह बिना किसी हिचक के ऐसी श्रेष्ठ साधना में बैठ पाता है** अन्यथा भैरव साधना को लेकर साधकों के मन कई उहापोह हैं ही। प्रायः साधक इन्हीं उहापोहों के कारण ऐसी फलप्रद साधना कर लाभ नहीं ले पाते। वे किसी विपरीत प्रभाव के भय से सहमे रहते है और पूरे मनोयोग से मंत्र-जप नहीं कर पाते। यद्यपि भैरव साधना में नियम-संयम, आचार-विचार आदि का विशेष महत्व है, साधना के मध्य भय भी उत्पन्न होता है और अनेक विपरीत स्थितियां जैसे इतर योनियों का आगमन, श्मशान की दुर्गन्ध, वीभत्स दृश्य आदि भी उपस्थित होते ही हैं, किन्तु साधक जब इसी भैरव साधना को कुछ विशेष विधियों से व सौम्य ढंग से करते हैं, उन्हें सिद्ध करने की अपेक्षा उनके वरदायक

प्रभाव और उनके सुरक्षा-आवरण का प्रार्थी बनकर साधना सम्पन्न करते हैं तो उन्हें न तो साधना काल में कोई विपरीत स्थिति व्याप्त होती है और न भैरव, साधक के समक्ष उग्रस्वरूप में उपस्थित होते हैं। **शास्त्रों में ५२ भैरवों का वर्णन है, जिनकी अपेक्षा महाभैरव की साधना अर्थात् भैरव की मूल साधना करना ही लाभदायक रहता है** और इस साधना को सम्पन्न कर लेने के बाद ही फिर साधक भविष्य में भैरव के एक-एक विशेष स्वरूप की साधना कर सकते हैं।

भैरव भय के विनाशक हैं, सुरक्षा प्रदान करने वाले हैं और साथ ही साथ पूर्णरूप से अमृतमय होते हुए साधक के बलवीर्य का वर्द्धन करने वाले उसकी पापराशि को समाप्त करने वाले भी हैं।

महाभैरव की साधना के लिए अन्य भैरव साधनाओं की अपेक्षा प्रस्तुत विधान सरल है और इसे जब भगवान शिव एवं अपने गुरु की उपस्थिति में किया जाए तब तो वे अत्यन्त आह्लादित होकर साधक के साथ आजीवन छाया की भांति बने रहते हैं।

महाभैरव का प्रकट स्वरूप **'भैरव लिंग'** माना गया है जो अत्यन्त दुर्लभ है और फिर इसके अभाव में उनकी शक्तियों का अंकन, उनका स्थापन यंत्र के माध्यम से ताम्रपत्र पर किया जाता है। साथ में भगवान शिव की उपस्थिति के रूप में **'लघु शिवयंत्र'** एवं पूज्यपाद गुरुदेव की उपस्थिति के रूप में **'लघु गुरु यंत्र'** की स्थापना भी निश्चय ही फलदायक सिद्ध होती है। किसी भी रविवार अथवा मंगलवार की रात्रि को यह साधना सम्पन्न की जा सकती है। यदि कृष्ण पक्ष में इस साधना को सम्पन्न किया जाय अथवा अमावस्या की रात्रि में इस साधना को सम्पन्न किया जाए तो ये दिवस वे महाभैरव के प्रकट दिवस माने गए है। **इसके अतिरिक्त कुछ विशेष मुहूर्त भी होते है** जब इनकी साधना सफलता पूर्वक सम्पन्न की जा सकती है। **संयोग से ऐसा अवसर दिनांक १.६.९४ (कालाष्टमी) को पड़ रहा है। जो सर्व सिद्धि दिवस भी है।**

साधक काले अथवा भूरे वस्त्र पहन कर स्वयं को महाभैरव स्वरूप में मानते हुए अपने सामने तीनों यंत्र स्थापित कर सर्वप्रथम संक्षिप्त गुरु पूजन कर गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप करें, संक्षिप्त शिव पूजन करें व भगवान शिव के पंचाक्षरी मंत्र की एक माला मंत्र जप करें, तत्पश्चात् महाभैरव यंत्र पर सिन्दूर का तिलक कर सिन्दूर की ही बावन बिन्दियां **''भं''** बीज मंत्र का उच्चारण करते हुए अंकित करें जिससे उनके सभी ५२ स्वरूपों का आह्वान व स्थापन हो सके। तेल का एक बड़ा दीपक लगा लें, लाल फूल समर्पित करें एवं **रुद्राक्ष की माला** से निम्न मंत्र की एक अथवा ११ माला मंत्र जप सम्पन्न करें।

मंत्र

ॐ ऐं श्रीं ऐं फट्।।

उपरोक्त मंत्र महाभैरव का विशिष्ट मंत्र है जिसमें भैरव को सम्पूर्ण रूप से वरदायक, सौम्य स्वरूप मानते हुए उनकी विशिष्ट शक्तियों को अपने शरीर में समाहित करने की याचना के साथ प्रार्थना की गयी है और जिससे साधक के जन्म-जन्म की पापराशि दूर होने के साथ-साथ बल, वीर्य व तेज में वृद्धि होती ही है।

साधना के उपरान्त तीनों यंत्रों, रुद्राक्ष माला को किसी शिवमंदिर में भेंट चढ़ा दें।

विवाहित स्त्रियों के लिए अचूक प्रयोग

दूरादागत्य कामार्ता बलादालिंगयन्ति कम्।

"दूर रहने वाला पुरुष किस प्रकार से अपनी स्त्री से आकर्षित होकर दूर स्थान से भी आकर बल पूर्वक उसका संग करे?"

जिन स्त्रियों के पति का मन बदल गया हो अथवा वे किसी परस्त्री में रूचि लेने गए हों उन स्त्रियों के लिए यही साधना कुछ परिवर्तनों के साथ अत्यन्त अनुकूल सिद्ध हो सकती है। ऐसी पीड़ित स्त्री को चाहिए कि वह इन पृष्ठों पर प्रस्तुत **महाभैरव साधना करने के पश्चात् प्रतिदिन एक लघु प्रयोग भी सम्पन्न कर लें।**

प्रतिदिन मूल महाभैरव साधना करने के पश्चात अपने पति के चित्र पर **मनमोहिनी मुद्रिका** रख कर निम्न मंत्र की एक माला मंत्र जप कर लें। मंत्र जप केवल **हकीक माला** से ही किया जा सकता है।

मंत्र -

ॐ ऐं ऐं मम् प्रिय वश्य करि करि नमः

रात्रि में सोते समय, रजस्वला काल में उपरोक्त मुद्रिका धारण न करें तथा साधना भी स्थगित रखें। ऋतु - स्नान के उपरान्त छठें दिन से यह साधना पुनः आरम्भ की जा सकती है। जब तक मनोवांछित रूप से सफलता न मिलने लगे तब तक मंत्र जप करती रहे। साधना सफल हो जाने पर भी मुद्रिका धारण किए रहें।

ॐ नमस्तेऽमृतसम्भूते बलवीर्यवर्द्धिनि। बलमायुश्च मे देहि पापान्मे त्राहि दूरतः।।

हे अमृत सम्भूते! मुझे बल, वीर्य और दीर्घ आयु प्रदान करें, मेरी पाप- राशि को ध्वस्त करें, मैं महाभैरव साधक आपको बार-बार प्रणाम करता हूं।

रोग-नाशार्थ राहु प्रयोग

नौ ग्रहों में राहु एक मात्र ऐसा ग्रह है, जो मानव जीवन के समस्त रोगों को शान्त एवं समाप्त करने में सक्षम है, चाहे वह रोग किसी भी वजह से हुआ हो, चाहे किसी भी प्रकार की ग्रह बाधा हो, और चाहे दैविक अथवा भौतिक किसी भी प्रकार का रोग हो, राहु प्रयोग से वह रोग समाप्त हो सकता है।

इस प्रयोग को रोगी स्वयं कर सकता है, या घर का कोई सदस्य किसी अन्य के लिए यह प्रयोग कर सकता है, दिखने में भले ही यह प्रयोग सामान्य प्रतीत हो, पर पत्रिका-पाठकों के लिए यह प्रयोग वरदान स्वरूप है, और इस प्रयोग से वह किसी भी प्रकार के रोग का शमन कर सकता है।

बुखार, हार्ट अटैक, ब्लड प्रेशर, डायबिटीज, शरीर फूलना, मोटापा होना, आंखों की रोशनी का कमजोर होना, पेशाब से सम्बन्धित रोग, गर्भाशय से सम्बन्धित रोग आदि सभी प्रकार के रोगों का उपाय इस राहु प्रयोग से सम्पन्न किया जा सकता है।

और यह स्पष्ट है, कि इस प्रकार का प्रयोग सम्पन्न करने से आने वाली विपत्ति, बाधाएं, और बीमारियां पहले से ही समाप्त हो जाती हैं, एक प्रकार से देखा जाए तो यह आने वाले अशुभ समय को नियन्त्रण में लेने का प्रयोग है।

साधना प्रयोग

इस साधना प्रयोग में **'राहु महायंत्र'** की आवश्यकता होती है, जो कि **रोग शमनार्थ प्रयोग** से सिद्ध होना चाहिए, इसके अलावा **'राहु माला'** की नितान्त आवश्कता होती है।

प्रयोग करते समय यदि साधक स्वयं के लिए यह प्रयोग सम्पन्न करे, तो खुद का नाम उच्चारण करे या किसी अन्य के लिए या परिवार के किसी सदस्य के लिए यह प्रयोग सम्पन्न करे तो उसके नाम का उच्चारण करे।

इस प्रयोग में मात्र एक माला मंत्र जप आवश्यक है, इसके अलावा यदि तेल का दीपक लगाया जाए तो उचित है, अन्यथा कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती। साधक सबसे पहले हाथ में जल लेकर संकल्प करें कि मैं अमुक गोत्र, अमुक नाम का साधक, (अथवा अमुक व्यक्ति के लिए) अमुक प्रकार के रोग को समाप्त करने के लिए यह प्रयोग सम्पन्न कर रहा हूं।

राहु प्रयोग

फिर हाथ में काले तिल और एक पीला पुष्प लेकर रोगी पर सात बार घुमाएं और यन्त्र के सामने वह सामग्री किसी पात्र में रख दें, इसके बाद निम्न मंत्र की एक माला अर्थात् १०८ बार उच्चारण करें।

इसके बाद पुनः वह सामग्री रोगी पर सात बार घुमायें और बाद में उसे जहां तीन रास्ते मिलते हों, वहां फिकवा दें, या गड़वा दें।

इसके बाद अर्थात् मंत्र-जप पूरा होने पर रोगी को चाहिए कि वह साधक के पैर छू कर प्रणाम करे और साधक आशीर्वाद स्वरूप उसकी पीठ या सिर पर थपकी दे।

इस प्रकार यह प्रयोग समाप्त होता है, *परन्तु जिस दिन यह प्रयोग समाप्त होता है, उसी दिन से रोगी को आराम मिलना प्रारम्भ हो जाता है, यदि साधक उचित समझे तो उसी रोगी पर यह प्रयोग तीन-चार बार भी कर सकता है पर एक दिन में एक बार ही प्रयोग करना चाहिए।*

इस प्रयोग का प्रारम्भ राहु जयन्ती (अर्थात् इस वर्ष १२.०६.९४ से) से करना चाहिए उसके बाद वह राहु महायंत्र जीवन भर उपयोगी रहता है, और किसी भी दिन यह प्रयोग सम्पन्न किया जा सकता है, परन्तु रविवार, मंगलवार, शुक्रवार और शनिवार चार दिन ही प्रयोग करना चाहिए। **सोम, बुध, गुरुवार को किसी भी रोगी पर यह प्रयोग सम्पन्न नहीं किया जा सकता।**

राहु महामंत्र

।।ॐ क्लीं क्लीं रोग नाशार्थ राहवे क्लीं क्लीं फट्।।

उपरोक्त मंत्र की एक माला ही फेरनी पर्याप्त है, जब प्रयोग सम्पन्न हो जाए तब यह माला और महायंत्र घर में कहीं पर भी किसी भी स्थान पर रख सकते हैं और अगली बार फिर इस माला और इस महायंत्र का प्रयोग किया जा सकता है।

वस्तुतः यह प्रयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण है और इस प्रयोग को पुरुष या स्त्री कोई भी सम्पन्न कर सकता है तथा दिन या रात्रि को कभी भी सम्पन्न किया जा सकता है, इसके लिए आसन, दिशा आदि की कोई व्यवस्था नहीं हैं, साधक किसी भी प्रकार के आसन पर और किसी भी दिशा की ओर मुंह कर बैठ सकता है।

पाठकों एवं साधकों के लिए यह प्रयोग वरदान स्वरूप है और उन्हें इस प्रयोग को आजमाना चाहिए। ❁

क्या आपने ये दीक्षायें प्राप्त की हैं?

पिछले माह जब पत्रिका में इस बात की घोषणा की गई कि पूज्यपाद गुरुदेव ने अब एक सौ आठ दीक्षाओं के सम्पूर्ण क्रम को प्रत्येक योग्य साधक को प्रदान करने का मानस बना लिया है, एक प्रकार से इस हीरक जयन्ती वर्ष में उन्हें अपने आशीर्वाद का साकार रूप देने का निश्चय कर ही लिया है, तो साधक अपने सौभाग्य पर एकाएक विश्वास ही न कर सके . . .

१०८ दीक्षाओं के उच्चतर सोपान को स्पष्ट करता इस अंक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण लेख . . .

पूज्य गुरुदेव की **हीरक जयन्ती** का यह वर्ष वास्तव में साधकों एवं शिष्यों के जीवन को हीरक खंड सी आभा प्रदान करने के लिए आया है। सौभाग्य है उनका जो अपने बन्धन, अपने तर्क-वितर्क को त्याग कर तीव्रता से गुरु-चरणों में लीन होने के लिए दौड़ पड़े हैं क्योंकि गुरुदेव के समक्ष तो एक ही कसौटी एक ही मापदण्ड है और वह यह कि उनके शिष्य में अपने गुरुदेव के प्रति कितनी तीव्रता आयी है, कितनी तेजी से आगे बढ़कर गुरु चरणों में लिपट जाने की तड़फ आयी है, गुरु कार्य को सम्पन्न करने के लिए मन में क्या उत्साह आया है। उनकी इसी कसौटी पर यदि शिष्य खरा उतर गया तो फिर साधना, सिद्धि, दीक्षाओं से वे उसकी झोली भर ही देते हैं, और इसका प्रमाण भी मिला जब पिछले माह सैकड़ों समर्पणशील साधकों ने इलाहाबाद में सम्पन्न हुए **जन्मोत्सव शिविर** में उपस्थित होकर न केवल अपनी उपस्थिति को ही इतिहास में अंकित किया वरन पूज्य गुरुदेव द्वारा प्रदान की जाने वाली **एक सौ आठ दीक्षाओं** के महत्वपूर्ण क्रम में अपनी इच्छानुसार चार या पांच दीक्षायें प्राप्त कर जीवन का एक नया क्रम आरम्भ किया, जो उनको सामान्य मनुष्यों से कहीं अधिक श्रेष्ठ बना गया है, कहीं अधिक ऊंचाई पर स्थापित कर चुका है।

कुछ एक ऐसे सौभाग्यशाली साधक भी रहे जिन्होंने पत्रिका के अप्रैल अंक में प्रकाशित १०८ दीक्षाओं के प्रथम चरण अर्थात् समस्त २१ दीक्षाओं को प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त किया। ऐसे समस्त साधक आने वाले दिनों में निश्चय ही संस्था के, समाज के आधार स्तम्भ बनेंगे, जिनसे प्रेरणा लेकर दूसरे व्यक्ति भी जीवन में श्रेष्ठ बनने की क्रिया सम्पन्न करेंगे। साधकों में नये प्रकार का उत्साह उमड़ा है और जिस प्रकार से वे तेजी से बढ़कर १०८ दीक्षाओं को आत्मसात करने के प्रयास में संलग्न हो गए हैं उससे लगने लगा है कि शीघ्र ही जिस सिद्धाश्रम की स्थापना इस धरा पर पूज्य गुरुदेव के अथक प्रयास से घटित होने जा रही है, वह अपनी आत्मा से भी सिद्धाश्रम की प्रतिकृति तुल्य ही होगा, **क्योंकि जहां इस प्रकार के सैकड़ों-हजारों साधक होंगे, जो पूज्य गुरुदेव से समस्त १०८ दीक्षायें प्राप्त कर आकर एकत्र होंगे, क्या वह स्थान सिद्धाश्रम तुल्य नहीं हो जायेगा?** और इस प्रकार ही इस घृणा, अविश्वास, तनाव और हिंसा के वातावरण में एक सुगन्धित उपवन का निर्माण होगा। अन्य सभी ने जहां ऐसे समाज के स्वप्न देखे, वहीं पूज्य गुरुदेव निरन्तर ऐसा समाज निर्मित कर रहे हैं और इसमें साधकों का भी योगदान कम नहीं है। उनकी ललक, उनकी चैतन्यता और सबसे बड़ी बात उनका अपने गुरु के प्रति अगाध विश्वास व समर्पण एक प्रकार से गुरुदेव को बाध्य कर रहा है कि वे उन दीक्षाओं को सार्वजनिक करें, जो अत्यन्त गोपनीय रही हैं, जिन्हें आज तक केवल सन्यासी शिष्यों को ही प्रदान किया जाता रहा, अथवा जो सिद्धाश्रम की ही सम्पदा रही।

साधकों के आग्रह का इसी से पता लगाया जा सकता है कि वे अनेक दीक्षायें प्राप्त करने के बाद भी रुकना नहीं चाह रहे हैं और पत्रों द्वारा निरन्तर ज्ञात कर रहे हैं कि आगे के क्रम में, साधना के उच्चतर सोपानों में कौन-सी दीक्षायें महत्वपूर्ण मानी जाती हैं। **उनकी इस ललक के पीछे एक ठोस आधार भी है क्योंकि ऐसे समस्त दीक्षित शिष्य अपने दैनिक जीवन में, अपने आसपास के वातावरण में, अपने व्यापार आदि के सिलसिले में मिलने वाले लोगों के व्यवहार में और खुद अपने अन्दर हो रहे जिन आश्चर्यजनक परिवर्तनों को देख रहे हैं, उससे स्वतः ही जीवन की उच्चताओं की ओर अग्रसर हो गए हैं।**

दैनिक जीवन के झंझटों, व्यापार की अड़चनों, व्यसनों

आदि से मुक्त होने के बाद स्वतः ही उनके आग्रह उमड़ पड़ा है कि वे अपने जीवन में विशिष्ट बनें, कुछ ऐसा करें जिससे उनका नाम आने वाले वर्षों में लोग याद रख सकें। भविष्य में उनका नाम सम्मान से लें। यह तो एक विश्वास है कि शिष्य समर्पण करता है, अपने को गुरु के समक्ष प्रस्तुत करता है और बदले में गुरु उसे उसका वांछित वह सब कुछ दे देते हैं, जिससे साधक का भी जीवन संवरता है और गुरु का भी विराट लक्ष्य पूरा होता है।

ऐसी ही श्रेष्ठ दीक्षाओं के द्वितीय चरण के रूप में ११ उन विशिष्ट दीक्षाओं का वर्णन किया जा रहा है जिनसे साधक अपने आध्यात्मिक जीवन में और साथ ही भौतिक जीवन में कुछ सीढ़ी और चढ़ सकें।

१. सर्व शरीर शुद्धि दीक्षा– यह शरीर तो रक्त, मज्जा, मल इत्यादि से युक्त इस स्थिति में है ही नहीं कि इससे उच्च स्तरीय साधनायें सम्पन्न की जा सकें। साधना के लिए जिस शुद्ध व भाव शरीर की आवश्यकता पड़ती है वह केवल इसी दीक्षा द्वारा ही निर्मित हो सकता है, साधनाओं के उच्च वेग को सहन करने में समर्थ हो सकता है, अन्य किसी उपाय से नहीं।

२. मनोहरण दीक्षा– विविध देवी या देवताओं का अपने शरीर में समाहितीकरण तभी सम्भव है जब व्यक्ति स्वयं उनके सौन्दर्य के अनुरूप एक विशिष्ट प्रकार के सौन्दर्य व देवत्व से युक्त हो। मनोहरण दीक्षा इसी प्राथमिक चरण का साधक के शरीर में निर्माण करती है।

३. प्राकाम्य दीक्षा– उच्चकोटि की साधनाओं में संलग्न होने से पूर्व आवश्यक है कि साधक उन सभी आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति कर ले जिनकी उसे कामना हो जिससे उसका मन सर्वथा मुक्त व तृप्त होकर साधनाओं में एकाग्र हो सके। प्रस्तुत साधना जीवन की ऐसी सभी आवश्यकताओं और कामनाओं को पूर्ण करने की विधि है, जिसे किसी इच्छा विशेष के लिए भी प्राप्त किया जा सकता है, अथवा जीवन की सभी सामान्य इच्छाओं की पूर्ति के लिए भी।

४. शांभवी दीक्षा– 'शांभव' का अर्थ होता है समुद्र और प्रकारान्तर से यह गुरुत्व प्राप्ति की ही दीक्षा है। जीवन को एक ऐसे उच्चपद पर ले जाने की क्रिया है जिसके पश्चात् साधनाओं में सफलता संदिग्ध रह ही नहीं जाती है।

५. षोडश दीक्षा– भगवान श्रीकृष्ण जिन षोडश कलाओं से युक्त माने गए और जो षोडश कलायें व्यक्ति को पूर्ण पुरुष बनाते हुए 'इतिहास पुरुष' बनाने की क्षमता रखती हैं, उन्हीं की प्राप्ति का उपाय है षोडश दीक्षा।

६. दस महाविद्या चैतन्य दीक्षा– जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि मां भगवती जगदम्बा के सभी दस विशिष्ट स्वरूपों को जीवन में उतारा जाय तथा प्रत्येक क्षेत्र में एक अजेयता प्राप्त की जाय। साथ ही दस महाविद्या चैतन्य किए बिना सिद्धाश्रम में प्रवेश की स्थिति भी तो नहीं बनती।

७. सर्वदेवाधिदेव दीक्षा– जीवन में विविध कामनाओं की पूर्ति के लिए विभिन्न देवी-देवताओं की साधना कर उनके दर्शन प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि साधक **सर्व देवाधिदेव दीक्षा** प्राप्त करे और जीवन को पूर्ण निर्मलता व उच्चता की ओर ले जाते हुए एक सफल साधक सिद्ध हो।

८. सेवत्व दीक्षा– यदि कहा जाए कि सभी साधनाओं का मूल है **'सेवा'**, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं, किन्तु साधक के मन में **पूर्ण सेवक-भाव** तभी आ पाता है, पूर्ण श्रद्धायुक्त सपर्मण तभी हो पाता है, जब वह सेवत्व दीक्षा द्वारा अपने-आप को विभूषित कर गुरुदेव का प्रिय पात्र बने, उनके होंठो पर अपना नाम अंकित करा सके।

९. भगवन्त दीक्षा– यह दीक्षा मूलरूप से भगवान विष्णु के गुणों को ही जीवन में प्राप्त करने की दीक्षा है। जिस प्रकार भगवान विष्णु का स्वरूप समुद्र में शेषनाग आसन पर सुखद भाव से आसीन होकर लक्ष्मी द्वारा सेवित वर्णित किया गया है, जीवन में वैसी ही निश्चिन्तता और सभी का पालन करने की सामर्थ्य इस दीक्षा से प्राप्त होती है।

१०. सम्पूर्ण सिद्धाश्रम दीक्षा– सिद्धाश्रम दीक्षा के उपरान्त आवश्यक हो जाता है कि साधक **सम्पूर्ण सिद्धाश्रम दीक्षा** भी प्राप्त करें, क्योंकि जहां सिद्धाश्रम एक पावन स्थली है वही सम्पूर्ण सिद्धाश्रम प्राप्ति द्वारा साधक सिद्धाश्रम के भी गोपनीय रहस्यों से परिचित हो सकता है।

११. पूर्णमदः दीक्षा– जीवन में सब कुछ सरल है किन्तु पूर्णत्व प्राप्ति एक ऐस स्थिति है जो गुरु - कृपा बिना सम्पूर्ण नहीं हो सकती। यह साक्षात् नर से नारायण बनाने की प्रक्रिया है, मनुष्य जन्म को सफल कर लेने की घटना है और बहुत कम, कहीं किसी युग में कोई एक व्यक्ति ही ऐसे दुर्लभ सौभाग्य का साक्षी बनने में सफल हो पाता है।

१०८ दीक्षाओं के मन्जूषा कोष से लिए गए ये कुछ उदाहरण मात्र ही है क्योंकि अध्यात्म की जो ऊंचाईयां है, जो उस चैतन्यता का आनन्द है, उसके विविध पक्ष है, उसके पृष्ठ दर पृष्ठ खुलते रहस्य है– वे सभी तो इन विविध क्रमों के पूर्ण होने के बाद ही स्पष्ट होते हैं और व्यक्ति तब उस स्थान पर जाकर खड़ा होने की क्रिया में संलग्न हो पाता है, जहां सम्पूर्ण विश्व उसके सामने नमन करने के लिए बाध्य हो।

❋

जिस एक दिवसीय साधना से सभी साधनाओं में सफलता मिलती ही है।

साधक की वास्तविक पहचान ही यही होती है कि क्या वह प्रयत्न करके अपने जीवन में सभी सिद्धियों को प्राप्त करने की दशा में चिन्तन करता है, प्रयत्न करता है और सभी प्रयास करके उन्हें अपने गुरुदेव के द्वारा हस्तगत भी करता है। क्योंकि जीवन में एक या दो साधनाएं करके ही पूर्णता नहीं पाई जा सकती। यदि कोई सोचे कि वह एक बगलामुखी साधना करके जीवन में ऐश्वर्यवान भी हो जायेगा या महालक्ष्मी साधना करके सोचे की उसके शत्रु उसके सामने हाथ जोड़कर खड़े हो जायेंगे तो ऐसे चमत्कार साधना जगत में सम्भव नहीं होते हैं और न ऐसा चिन्तन रखना समझदारी कही जा सकती है। प्रत्येक समस्या के लिए अलग-अलग साधना करना आवश्यक है और ऐसा शास्त्रीय विधान ही नहीं अनिवार्य भी है। **इसी बात को ध्यान में रखकर ही सिद्धाश्रम ने व्यवस्था दी और ऐसा विशेष दिवस स्पष्ट किया जिस दिन की साधना से योग्य साधक सभी प्रकार की साधनाओं में आगे बढ़ सकें, सभी सिद्धियों को प्राप्त करते हुए प्रखर व्यक्तित्व के स्वामी बन सकें।**

साधनाओं का क्रम ऐसा होता है जिसमें अधिकांश साधक बीच में ही थक जाते हैं और टूट से जाते हैं। असफल होने के कारण कभी भाग्य को दोष देने लगते हैं तो कभी आलोचना में संलग्न हो जाते हैं, लेकिन इस बात पर ध्यान नहीं देते कि वास्तव में उनका आधा-अधूरा ज्ञान ही तो इस स्थिति के लिए दोषी है। अपूर्ण ज्ञान, अपूर्ण साधना, अपूर्ण पद्धति, अपूर्ण चिन्तन, आदि मिलकर अत्यन्त विचित्र स्थिति उत्पन्न कर देते हैं। अनभिज्ञ व्यक्ति तो फिर भी उस स्थान पर खड़ा है जहां उसे कुछ नया बताया जा सकता है किन्तु अर्धज्ञानी के साथ ऐसा सम्भव नहीं होता। उसके साथ स्थिति बहुत दुष्कर होती है। नीति का एक वचन है—

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विग्धदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रंजयते।।

साधनाएं अपने स्वरूप में ही तांत्रोक्त (अर्थात् क्रमबद्ध विधानों से युक्त) नहीं होती, साधनाओं को सम्पन्न करने की एक निश्चित क्रमबद्धता भी होती है और यदि इस प्रकार उनको एक क्रमबद्धता से सम्पन्न किया जाए तो साधना जगत का रहस्य साधक के समक्ष अपनी सारी गोपनीयता स्पष्ट कर ही देता है।

हां! यह सम्भव है कि एक दिवसीय साधना से ही साधक को सभी साधनाओं में सफलता मिल जाए . . .

अर्थात् अनभिज्ञ को समझाना सरल है, विशेषज्ञ को समझाना उससे भी अधिक सरल है किन्तु अर्धज्ञानी की तुष्टि तो साक्षात् ब्रह्मा भी नहीं कर सकते।

अधूरापन न केवल पीड़ा दायक है अपितु हानिकारक भी होता है, क्योंकि ऐसे व्यक्तित्व में सम्भावनाएं समाप्त हो जाती हैं। व्यक्ति किसी नये मार्ग का अस्तित्व, उसकी उपयोगिता स्वीकार करने को तत्पर नहीं रह जाता है, फलस्वरूप एक या दो साधना सिद्ध कर, स्वयं को महिमा-मण्डित कर एक प्रकार से भटकता ही रहता है।

दूसरी ओर ऐसा भी देखने में आता है कि अति उत्साही साधक एकाएक कई साधनाओं को एक साथ, एक ही समय में सिद्ध करने के कोशिशों में पड़ जाते है। उत्साह का ऐसा अतिरेक भी लाभ के स्थान पर हानि दे सकता है और ऐसे प्रयासों से कुछ विशेष अर्जित भी नहीं हो सकता। यहां इस बात को उल्लिखित करना इसलिए आवश्यक है कि **सर्वसिद्धि दिवस** का तात्पर्य यह न लगाया जाए कि इस एक दिवसीय साधना करने से रातों-रात सभी साधनाओं में सिद्धि मिल जायेगी या एक ही दिन में देश के प्रसिद्ध तांत्रिक या ज्योतिषी बनने की स्थिति आ जाएगी। **सर्वसिद्धि दिवस से तात्पर्य है– इस दिवस को सर्वसिद्धि साधना सम्पन्न करने से वह अनुकूलता प्रारम्भ हो जाती है, वे सूत्र मिल जाते हैं जिनके द्वारा साधक के साथ भविष्य में एक-एक करके सभी साधनाएं सिद्ध होने की स्थिति बनने लगती है।**

सर्व सिद्धि साधना के पश्चात् साधक के अन्दर इस प्रकार की चैतन्यता एवं संकेत ग्रहण करने की क्षमता आ जाती है जिससे उसे एक के बाद दूसरी साधना सम्पन्न करने के लिए स्वतः ही ज्ञान एवं मार्ग सूझने लग जाता है, और यह तो एक सुस्थापित तथ्य है कि प्रत्येक व्यक्ति का साधनात्मक मार्ग दूसरे से कुछ भिन्नता लिए हुए होता ही है, क्योंकि प्रत्येक के संस्कार जो भिन्न होते हैं।

यह सामान्य साधना दिवस नहीं और न सामान्य साधना पद्धति है। यह तो साक्षात् सिद्धाश्रम प्रणीत साधना है, जिसके द्वारा जीवन में एक विशेष प्रकार की शांति, चैतन्यता और शीतलता आ जाती है। यदि स्पष्ट शब्दों में कहा जाय तो यह ''भाग्योदय साधना'' ही है जो विशिष्ट योगियों के तेजबल से निर्विघ्न जीवन प्रदान करने में समर्थ है।

इस चैतन्य दिवस की दोहरी विशेषता है। प्रथम तो यह है कि **इस दिवस विशेष पर साधक अपनी इच्छित कोई भी साधना सम्पन्न कर सकता है।** प्रबल सिद्धिप्रद मुहूर्त होने के कारण, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से सिद्धाश्रम के योगियों का बल, तेज प्राप्त होने के कारण सफलता मिलने की सम्भावनाएं सामान्य से कई गुनी अधिक हो ही जाती है। सिद्धाश्रम की चैतन्यता से सम्पर्कित होने के कारण यह विशेष सात्विक दिवस है और इस दिवस को की गई **ब्रह्म साधना, गुरु साधना, सरस्वती साधना या महालक्ष्मी साधना** में सफलता की सम्भावनाएं प्रबल होती हैं।

दूसरी ओर यदि साधक इस दिवस को विशेष रूप से जिस साधना से जोड़ा गया है, उसे सम्पन्न कर लेता है तो उसके जीवन में एक प्रकार से सर्व सौभाग्य का भी प्रारम्भ हो जाता है। इस दिवस के लिए सिद्धाश्रम के योगियों ने समय-समय पर विविध प्रकार की तांत्रोक्त एवं मांत्रोक्त साधनाएं ब्रह्माण्ड से प्राप्त कर उनकी प्रमाणिकता को स्पष्ट किया है। साधक के साधनात्मक स्तर के अनुसार ये साधनाएं अलग-अलग ढंग से लाभप्रद होती हैं।

यहां हम एक ऐसी सुगम और मांत्रोक्त साधना प्रकाशित कर रहे हैं जिस समाज के प्रत्येक वर्ग को लाभ मिल सके। तांत्रोक्त साधनाएं विशिष्टता लिए हुए होती हैं और समाज के प्रत्येक आयु-वर्ग का सदस्य उसे उस दृढ़ता एवं विधि-विधान से सम्पन्न नहीं कर सकता, जिसकी तांत्रोक्त साधनाओं में प्रबल आवश्यकता होती है जबकि प्रस्तुत साधना में ऐसी बाध्यताएं नहीं हैं। **यह एक प्रकार से भाग्योदय साधना ही है,** क्योंकि साधनाओं में सफलता मिलने की स्थिति तभी बन सकती है जब दुर्भाग्य का नाश हो और आप आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक इत्यादि रूपों से सम्पूर्ण व सन्तुष्ट हों।

सिद्धाश्रम संस्पर्शित और सात्विक साधना होने के कारण आवश्यक है कि साधक इस दिन प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में ही उठकर साधना के लिए स्नान आदि कर शुद्ध स्वच्छ हो अपने साधना कक्ष को भी स्वच्छ कर

उसे धूप, अगरबत्ती इत्यादि से शुद्ध कर लें। **इस दिवस विशेष को सिद्धाश्रम के अनेक योगी सूक्ष्मरूप से उपस्थित होते हैं,** अतः मन एवं वातावरण में शुद्धता होनी नितान्त आवश्यक मानी गई है, जिससे उनकी उपस्थिति व चैतन्यता से साधना में निश्चित सफलता प्राप्त हो सके। इस साधना में हृदय के भाव ही अधिक महत्वपूर्ण हैं, विशेष विधि-विधान की आवश्यकता नहीं है। पीले वस्त्र पहन कर पीले आसन पर बैठ उत्तर दिशा की ओर मुख कर, अपने सामने एक पीला वस्त्र आम के बाजोट पर बिछा लें। पुष्प की पंखुडियों पर अथवा ताम्र पात्र में **'सर्व साधना सिद्धि यंत्र'** स्थापित कर उसके समक्ष पांच ढेरियां चावल की बना कर उनके ऊपर गुरु-परम्परा के प्रतीक रूप में **'पांच लघु नारियल'** स्थापित करें। **इसी पीले वस्त्र पर दाहिनी ओर एक पुष्प पंखुड़ियों की ढेरी भी बना लें।** साधनाकाल में घी का दीपक पूरे समय जलता रहे तथा **'दुर्भाग्यविनाशिनी माला'** से निम्न मंत्र की एक माला मंत्र जप करना पर्याप्त माना गया है।

मंत्र

ॐ ऐं ह्रीं ऐं श्रीं ऐं क्लीं
सिद्धिं देहि देहि फट्

यदि साधना काल में कोई हलचल हो या किसी की उपस्थित का आभास हो तो उन्हें सम्मानपूर्वक दाहिनी ओर बनायी गुयी पुष्प की पंखुड़ियों का आसन प्रदान करें तथा मंत्र-जप बीच में रोक कर ही प्रणाम कर उनसे साधना में सिद्धि का आशीर्वाद प्राप्त करें। इस साधना में भय की कोई आवश्यकता नहीं है, और प्रायः कोई दिव्य आत्मा या अलौकिक सिद्ध पुरुष इस प्रकार से सूक्ष्म रूप में उपस्थित होते ही हैं, जिनका साधक या तो आभास कर सकता है अथवा बिम्ब रूप में दर्शन कर सकता है अथवा साधना की उन्नत अवस्था में होने पर उनके साक्षात् दर्शन भी कर सकता है। **इस सूक्ष्म उपस्थिति में पूज्य गुरुदेव भी इस प्रकार से बिम्बात्मक रूप में उपस्थित हो सकते हैं, क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव की गणना सिद्धाश्रम के दिव्य महायोगियों के मध्य विशिष्टतम जो है।**

मंत्र-जप के उपरान्त इस यंत्र को सम्मान-पूर्वक व सुरक्षित ढंग से पूजन स्थान में स्थापित कर दें। भविष्य में किसी भी साधना को करते समय इस यंत्र को अवश्य स्थापित करें। माला को साधना के दिवस से लेकर आगे एक माह तक पवित्रता पूर्वक बराबर धारण किए रहें जिससे इस साधना की तेजस्विता आपके अणु-अणु में समाहित हो सके। केवल शौच आदि के समय इसे उतारे दें।

एक माह पश्चात् इस माला तथा पांचों लघु नारियलों को कुछ दक्षिणा के साथ किसी श्रेष्ठ सद्ब्राह्मण को दान में दे दें अथवा मंदिर में भेंट चढ़ा दें। इस साधना के उपरान्त एक पोस्टकार्ड पर अपनी साधना की पूर्णता एवं अनुभवों को लिखकर गुरु-आशीर्वाद की याचना के साथ पत्रिका कार्यालय में अवश्य भेंजे। पूज्य गुरुदेव के आशीर्वाद के उपरान्त ही किसी भी साधना को पूर्णता मिलती है तथा भविष्य में की जाने वाली समस्त साधनाओं में सफलता प्राप्त होने की क्रिया आरम्भ होती है।

❁

संस्काराद् द्विज उच्यते

जिस जाति, वर्ण एवं वर्ग को लेकर व्यक्ति गर्वित होता है और जिस सनातन धर्म पर वर्णवादी होने का आरोप लगाया जाता है उसका स्पष्ट मत है कि जन्म से कौन द्विज और कौन हेय! सभी तो एक समान मल-मूत्र के मध्य से होकर आ रहे हैं, फिर इसमें इतनी अहंमन्यता क्यों?

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते – और इस संस्कार की प्राप्ति, द्विजत्व(द्वितीय जन्म) की प्राप्ति केवल गुरु के स्पर्श द्वारा ही सम्भव होती है- उपनयन संस्कार से

इसी कारणवश पूज्य गुरुदेव ने कृपापूर्वक निश्चय किया है कि वे गुरु पूर्णिमा के अवसर पर सामूहिक रूप से पांच से पन्द्रह वर्ष की आयु के मध्य प्रत्येक बालक-बालिका को सर्वथा निःशुल्क ऐसे संस्कार देने की क्रिया सम्पन्न करेंगे

हिन्दू जीवन धर्म एक प्रवाह शील जीवन धर्म है और जन्म ही नहीं जन्म के पूर्व से जीव को संस्कारित करने की आवश्यकता पर वल देता है। गर्भाधान संस्कार से लेकर अन्त्येष्टि संस्कार तक सोलह संस्कारों में गुंथी इसी जीवन पद्धति का सीधा सा अर्थ है कि नित नूतन होते हुए व्यक्ति अपने परम लक्ष्य की यात्रा पूर्ण कर सके। गर्भाधान, पुंसवन अर्थात् जीव के इस धरा पर आगमन से पूर्व ही उसके स्वागत की तैयारी और अन्त्येष्टि अर्थात् देह का बंधन त्याग चुके जीव को सम्मान पूर्वक विदाई- इस सम्पूर्ण जीवन यात्रा में न तो कहीं विषाद है, न अटकाव, न कोई द्वन्द्व। नित उत्सव के माध्यम से जीवन को एक महोत्सव में बदलने की घटना ही वास्तविक हिन्दू धर्म है, सनातनता है एवं जीवन की प्रवाहशीलता है।

और जिस द्विजत्व व शूद्रत्व को लेकर लम्बी - लम्बी चर्चाएं, गोष्ठियां, तनाव व टकराव उत्पन्न हो रहे हैं, वे न तो इस सनातन धर्म का कभी अंग रही हैं न कभी रहेंगी। वे रूढ़िवादी परम्पराओं का स्थायी और अभिन्न अंग हो सकती है किन्तु सनातन धर्म का नहीं। रूढ़िवादी व्याख्याओं की बात शास्त्रों के उद्धरण और उबाऊ तर्क- वितर्क त्याग कर यदि "द्विज" शब्द का अर्थ वास्तविक अर्थ समझे तो इसका सरल अर्थों में तात्पर्य है – "जिसका द्वितीय जन्म हो चुका हो" अर्थात् जो मां के गर्भ से, मल-मूत्र भरे जीवन से निकल कर ज्ञान रूपी नवीन जन्म प्राप्त कर चुका है। जो इस देह में 'आत्म' है, उसको ज्ञात कर उसकी शाश्वत यात्रा से अभिन्न हो चुका हो, बोध युक्त हो चुका हो एवं जीवन के मूल धर्म 'ब्रह्मत्व' की चेतना की ओर उन्मुख हो चुका हो।

इसे और स्पष्ट शब्दों में कहा जाय तो जब जीव मल-मूत्र से जन्म लेकर मल-मूत्र में ही लिपटे- लिपटे जीवन यापन के क्रम का उच्छेद कर देता है तब वह वास्तविक अर्थों में मानव बनता है, श्रेष्ठता की ओर उन्मुख होता है तथा वास्तविक आनन्द के उपभोग करने का अधिकारी बन पाता है। प्राचीन काल में बालक के जन्म के पश्चात् से ही उसके साथ जिस घटना

की प्रतीक्षा की जाती थी वह उपनयन संस्कार ही होती थी, जिसके माध्यम से सामान्य बालक विशिष्ट बनने की क्रिया में संलग्न हो सके और कुल का गौरव -वर्धन कर सके।

उपनयन संस्कार को घनिष्टता और सघनता से समझने के लिए हमें इस शब्द के मूल भाव को समझना होगा। उपनयन का शब्दिक अर्थ है - "समीप ले जाना" और बालक के माता-पिता अपने बालक को उचित समय पर **अपने कुल गुरु अथवा प्रज्ञा सम्पन्न विशिष्ट पुरुष के समीप ले जाकर** एक प्रकार से घोषित करते थे कि हम जो इसकी उत्पत्ति के निमित्त बने वह आज से आपको समर्पित है, अब आप इसके "जीव" को, इसके सुप्त प्राणों को अपनी तेजस्विता से झंकृत कर इसे वास्तविक जन्म दें, इसे चेतना दें कि यह केवल इस देह की यात्रा को ही अपनी जीवन यात्रा न समझे, वरन इसे सही अर्थों में ज्ञान प्राप्त हो सके, तीव्रता आ सके, और इसमें अपने कुल व गोत्र की अविछिन्न परम्परा से जुड़ने का गौरव बोध उत्पन्न हो सके। इस अवसर पर जिन मन्त्रों का उच्चारण कर इस संस्कार को पूर्णता दी जाती थी उनका बोध ही इतना अधिक पवित्र व गहन है जो इस संस्कार के मूल में निहित उच्चता को स्पष्ट करता है।

इस अवसर पर गुरु अपने नवीन शिष्य को स्वीकार करते हुए कहते थे – "मैंने तुझे पुत्र रूप में स्वीकार किया है और पुनः अपने मानस गर्भ में धारण कर रहा हूं। जिससे तेरा नवीन जन्म हो सके।" कालान्तर में जिस प्रकार से अन्य संस्कारों की मूल चेतना लुप्त होती गई और वे कर्मकाण्ड मात्र रह गए उसी प्रकार उपनयन संस्कार भी अपनी मूल चेतना खोता हुआ केवल एक कर्मकाण्ड मात्र रह गया है और "जनेऊ" के नाम से लीक पीटने वाली तथा कुछ रीतियों का बस जैसे-तैसे पालन कर देने वाली बात रह गई।

❋ ❋ ❋

**उपनयन संस्कार. . .
जीवन को
पवित्र व उदात्त
बनाने की क्रिया
जिसे कोई भी बालक या
बालिका समान रूप से ग्रहण
कर सकता है। और यही
क्रिया सम्पन्न हो
रही है आगामी
गुरु पूर्णिमा
के
अवसर
पर जब सर्वथा
निःशुल्क रूप से पूज्य
गुरुदेव ऐसे सैकड़ों बालकों
व बालिकाओं को अपने
आशीर्वाद द्वारा
संस्कारित
करेंगे।**

❋ ❋ ❋

जबकि उपनयन संस्कार तो किसी भी बालक के जीवन में वह मोड़ है जब वह सम्पूर्ण जीवन को प्रकाशित करने का सुअवसर प्राप्त कर पाता है। उपनयन संस्कार का अर्थ केवल इतना नहीं है कि व्यक्ति इसके बाद ब्रह्मचर्य धारण कर विद्या अध्ययन करता था, वरन इसका अर्थ और इसकी चेतना इससे भी कहीं अधिक इस बात में निहित रही है कि तभी उसका अपने जीवन में अपने गुरु से प्रथम परिचय बनता था, जिसे केवल परिचय मात्र कहना अपर्याप्त होगा क्योंकि इस अवसर पर इस संस्कार के द्वारा गुरु उस बालक के प्रति अपना मातृ भाव स्पष्ट करते थे तथा उसे नवीन ढंग से संस्कारित करने का आग्रह लेकर स्वंय उसके जीवन में पदार्पण करते थे।

इस संस्कार के बाद फिर बालक तीव्रता से चैतन्य होता हुआ उन सभी ज्ञान विज्ञान की धाराओं को आत्मसात् करने की क्रिया में सलंग्न हो जाता था जिसके अभाव में यह मानव जीवन पशु तुल्य अथवा मलिन ही है।

जिस क्रिया को परिष्कृत रूप में दीक्षा कहा जाता है वही अपने मूल स्वरूप में उपनयन संस्कार है। अन्तर यह है कि जहां दीक्षा के माध्यम से किसी भी आयु वर्ग के व्यक्ति को संस्कारित करने का प्रयास किया जाता है, वहीं उपनयन संस्कार के माध्यम से बालक को उस समय संस्कारित किया जाता है जब वह निर्मल होता है तथा व्यवहारिक जीवन में प्रवेश न करने के कारण छल-प्रपंच एवं अन्य विकारों से सर्वथा मुक्त और निर्मल होता है। तब वह कोई भी संस्कार ग्रहण कर सकता है। यदि उसे इसी आयु में सद्संस्कार मिल जाएं तब वह आगे चलकर जीवन के किसी भी क्षेत्र में शिखर तक जा सकता है। **एक प्रकार से उसमें ज्ञान का स्रोत खुल जाता है** और जब ऐसा स्रोत खुल जाता है तब वह किसी भी प्रकार से अपने आप को श्रेष्ठ बना ही

(शेष पृष्ठ ३० पर)

साधना सिद्धि विशेषांक : दीक्षा व सामग्री परिशिष्ट

पत्रिका- पाठकों की विशेष सुविधा को ध्यान में रखते हुए, पत्रिका में प्रकाशित प्रत्येक साधना में संबंधित सामग्री की व्यवस्था करने का अथक प्रयास किया जाता है, दुर्लभ एवं कठिनाई से प्राप्त होने वाली सामग्री को उचित न्यौछावर पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था की जाती है, तथा साधना से संबंधित दीक्षा की विशेष व्यवस्था भी की जाती है।

सामग्री	पृष्ठ	न्यौछावर
गुरु चित्र	१४	२०/-
पुरुरूप शिवलिंग	१४	४००/-
गौरी शंकर रुद्राक्ष	१४	८०/-
सर्वबाधा निवारण यंत्र	१४	२४०/-
रुद्राक्ष माला	१४	३००/-
ह्रीं यंत्र	१५	२४०/-
सिद्धि फल	२०	२१/-
कुबेर यंत्र	२३	२४०/-
स्फटिक माला	२३	३००/-
श्वेतार्क गणपति	२६	४००/-
रक्त स्फटिक माला	२६	१५०/-
त्वष्ट्रा मणि	३०	२१०/-
मधुरुपेण रुद्राक्ष	३२	१००/-
हकीक माला	३२	१५०/-
कुस्तड़ा	३२	१२०/-
मूंगे की माला	३२	१५०/-
सप्त यक्षिणी साधना पैकेट	३५	४६०/-
गुरु यंत्र	४२	२४०/-
भैरव यंत्र	४२	२४०/-
लघु गणपति विग्रह	४२	१५०/-
गोमती चक्र	४३	२१/-

सामग्री	पृष्ठ	न्यौछावर
षट्चक्र कुण्डलिनी जागरण यंत्र	४६	२४०/-
२५ गुरु प्रसाद फल	४६	२५०/-
शनि महायंत्र	४८	२४०/-
एक कमल गट्टे का बीज	५३	५/-
शूकर दन्त	५३	३५०/-
मंत्र सिद्ध शुक्र गुटिका	५३	१२०/-
त्रिपुर भैरवी यंत्र	६२	२४०/-
त्रिपुर भैरवी चित्र	६२	२०/-
भगवान शिव का प्राण-प्रतिष्ठित चित्र	६२	२०/-
लघु शिव यंत्र	६२	१५०/-
सफेद हकीक माला	६२	१५०/-
तांत्रोक्त फल	६२	२४/-
भैरव यंत्र	७०	२४०/-
लघु गुरु यंत्र	७०	१५०/-
राहु महायंत्र	७१	२४०/-
राहु माला	७१	१५०/-
सर्व साधना सिद्धि यंत्र	७७	२४०/-
पांच लघु नारियल	७७	१०५/-
दुर्भाग्य विनाशिनी माला	७७	३००/-

सामग्री	पृष्ठ	न्यौछावर
सिद्धाश्रम सिद्ध चक्र	७७	१००/-
दीक्षा		
हेमांगिनी अप्सरा दीक्षा	१६	२४००/-
नेत्र चुम्बकत्व दीक्षा	३८	२१००/-
सर्व शरीर शुद्धि दीक्षा	७४	२१००/-
मनोहरण दीक्षा	७४	२१००/-
प्राकाम्य दीक्षा	७४	१५००/-
शाम्भवी दीक्षा	७४	१५००/-
षोडश दीक्षा	७४	५१००/-
दस महाविद्या चैतन्य दीक्षा	७४	५१००/-
सर्व देवाधिदेव दीक्षा	७४	२१००/-
सेवत्व दीक्षा	७४	२४००/-
भगवन्त दीक्षा	७४	२४००/-
सम्पूर्ण सिद्धाश्रम दीक्षा	७४	३०००/-
पूर्णमदः दीक्षा	७४	३०००/-
संस्कार		
ऋण रोग हर्ता गणपति स्थापन संस्कार		३०००/-
लक्ष्मी अप्सरा स्थापन संस्कार		३०००/-
तारा स्थापन संस्कार		२४००/-
वीर वैताल स्थापन संस्कार		२४००/-
गुरु स्थापन संस्कार		२४००/-

चेक स्वीकार्य नहीं होंगे। ड्राफ्ट किसी भी बैंक का हो, वह **"मंत्र शक्ति केन्द्र"** के नाम से बना हो, जो जोधपुर में देय हो।

मनिऑर्डर या ड्राफ्ट भेजने का पताः-

मंत्र शक्ति केन्द्र, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी,जोधपुर-३४२००१(राज.),टेलीफोन : ०२९१-३२२०९

दीक्षा के लिए पहले से ही समय एवं स्थान तय कर अनुमति लेकर ही आएं

३०६,कोहाट इन्क्लेव,नई दिल्ली, टेलीफोन : ०११-७१८२२४८

वर्ष १४ **अंक ५** **मई ९४**

प्रधान संपादक - नन्दकिशोर श्रीमाली

सह सम्पादक मण्डल - डॉ. श्यामल कुमार बनर्जी, सुभाष शर्मा, गुरुसेवक,गणेश वटाणी, नागजी भाई

संयोजक - कैलाश चन्द्र श्रीमाली, **वित्तीय सलाहकार -** अरविन्द श्रीमाली

सम्पर्क

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान , डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी, जोधपुर - ३४२००१ (राज.) ,फोन : ०२९१ - ३२२०९

गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, नई दिल्ली - ११००३४, फोन : ०११-७१८२२४८, फ़ेक्स : ०११-७१८६७००

प्रकाशक एवं स्वामित्व श्री कैलाश चन्द्र श्रीमाली द्वारा नव शक्ति इन्डस्ट्रीज, C. १३ , न्यू रोशनपुरा, नजफगढ़ दिल्ली से मुद्रित तथा गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, दिल्ली से प्रकाशित।

साधना - सिद्धि जगत का
गोपनीय तीव्र अद्भुत परिवर्तनकारी

"स्थापन संस्कार प्रयोग"

क्योंकि जहां दीक्षा द्वारा साधक के शरीर में किसी देवी-देवता अथवा मनोवांछित सिद्धि का बीजारोपण होता है वहीं **"स्थापन संस्कार"** के द्वारा अंकुरण की घटना सम्भव करायी जाती है। दीक्षा का यह अत्यन्त गोपनीय व दुर्लभ पक्ष केवल गुरु - परम्परा से ही आगे बढ़ता रहा है जो पूज्यपाद गुरुदेव की असीम कृपा से पूज्य गुरुदेव श्री नन्दकिशोर श्रीमाली जी द्वारा साधकों को आगामी १८ जून से २२ जून के मध्य प्राप्त हो सकेगा।

एक सौभाग्यदायक अवसर

मनोवांछित साधना - सिद्धि को पूर्णता से प्राप्त करने हेतु

ऋण रोग हर्ता गणपति स्थापन प्रयोग (दिनांक १८.०६.९४)

गंगा दशहरा का पावन पर्व एवं महत्वपूर्ण **गणपति स्थापन संस्कार** का अवसर। जीवन को निर्विघ्न एवं ऋण रोग आदि से मुक्त करते हुए एवं मंगलमय बनाने के लिए। साधना - सिद्धि में निश्चित सफलता हेतु।

लक्ष्मी अप्सरा स्थापन संस्कार (दिनांक १९.०६.९४)

निर्जला एकादशी का महत्वपूर्ण पर्व! एकादशी तो लक्ष्मी उत्पत्ति के साथ-साथ अप्सरा की उत्पत्ति का भी प्रकट दिवस है और साधक अपनी इच्छानुसार लक्ष्मी स्थापन संस्कार अथवा अप्सरा स्थापन संस्कार प्राप्त कर सकता है।

तारा स्थापन संस्कार (दिनांक २०.०६.९४)

दस महाविद्याओं में से सर्वश्रेष्ठ, धन प्रदायक महाविद्या तारा को अपने शरीर में स्थापित करने हेतु एक दुर्लभ अवसर- तारा स्थापन संस्कार साथ ही शक्ति दिवस होने के कारण इस दिन लक्ष्मी अथवा सरस्वती स्थापन संस्कार भी प्राप्त कर सकते हैं।

वीर वैताल स्थापन संस्कार (दिनांक २१.०६.९४)

स्पष्ट शब्दों में कहा जाय तो साक्षात् वीर प्रत्यक्ष सिद्धि, एक अनूठा प्रवाह मंत्रों का साधक के जीवन में वीर अथवा वैताल को प्रकट होने के लिए बाध्य कर देने का। बल, पौरुष और तेजस्विता का सिद्ध संस्कार।

गुरु स्थापन संस्कार (दिनांक २२.०६.९४)

वास्तव में यह मनोकामना पूर्ति स्थापन संस्कार ही होगा। कैसी भी गोपनीय अथवा जटिल मनोकामना हो, यदि साधक गुप्त रूप से पूज्य गुरुदेव से निवेदन कर देता है तो वे उसके जीवन में अनुकूलता लाने की क्रिया करेंगे ही।

गुरुधाम (दिल्ली) का पावन पीठ उन साधकों के सौभाग्य का साक्षी बनने जा रहा है जो आगामी माह ऐसे दिव्य आयोजन के पात्र बनेंगे।

नोट : उपरोक्त स्थापन संस्कार केवल "गुरुधाम" दिल्ली में प्रदान किये जायेंगे। उपरोक्त पांचो दिनों में केवल ६ से १२ उम्र के बालकों को यज्ञोपवित संस्कार निःशुल्क दिया जायेगा।

पताः गुरुधाम, ३०६, कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, नई दिल्ली, फोन : ०११-७१८२२४८